१९७०



लेनिन शताब्दी पुस्तक-माला

लेनिन और मुक्ति-आन्दोलन की समस्याएँ

सोवियत भूमि पुस्तिका

लेनिन और मुक्ति-आन्दोलन की समस्याएँ

सोवियत भूमि पुस्तिका
१९६९

लेनिन
और
मुक्ति-आन्दोलन
की
समस्याएँ

सोवियत भूमि पुस्तिका
१९६९

सम्पादक	: जी. एल. कोलोकोलोव
प्रबन्ध सम्पादक	: वी. ए. खोस्तीकियान
संयुक्त सम्पादक	: गिरिजा कुमार सिनहा

मूल्य : ५० पैसे

एल. पी. व्लादीमिरोव द्वारा सोवियत संघ के भारतस्थित दूतावास के सूचना विभाग के लिए प्रकाशित तथा चेतना प्रिन्टिग प्रेस, २२, कैसरबाग, लखनऊ में मुद्रित।

विषय-सूची

भूमिका

साम्राज्यवादी उत्पीड़न के विरुद्ध राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन वर्तमान विश्व ऐतिहासिक प्रक्रिया का अंग है। वह उन्नत पूंजीवादी देशों में मजदूर वर्ग के संघर्ष के साथ तथा समाजवादी राष्ट्रों द्वारा अपनाई साम्राज्यवाद-विरोधी नीति के साथ मिलकर समाज के क्रान्तिकारी ढंग से नये सांचे में ढालने के कार्य में बहुत बड़ा योग दे रहा है। उसे संचालित करने के तरीक़ों और उसके द्वारा धारण किए जाने वाले स्वरूपों को एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमरीका के अलग-अलग देशों की अनेक तथा विविध अवस्थाएं निर्धारित करती हैं।

उसके सामने जो कठिनाइयां हैं, वे अनेकानेक हैं और ये कठिनाइयाँ वस्तुपरक तथा भावपरक दोनों प्रकार की हैं।

इसलिए उन लोगों का जो राष्ट्रीयमुक्ति संघर्ष का नेतृत्व करते हैं अथवा उसमें सक्रिय भूमिका अदा करते हैं, यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वे मज़दूर वर्ग के आन्दोलन के ऐतिहासिक अनुभव का गहन अध्ययन करें और बुनियादी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत पर अधिकार प्राप्त करें तथा उसमें सर्वांगिक रूप से पारंगत बनें। मज़दूर वर्ग और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों के बारे में मार्क्सवादी शिक्षा को साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन की विशिष्ट अवस्थाओं के साथ सृजनात्मक और द्वन्द्वात्मक ढंग से सूत्रबद्ध करने के फलस्वरूप संघर्ष के लिए आम तौर पर तथा संघर्ष के हर पृथक दौर के लिए सही राजनीति तथा कार्यनीति तैयार करना सम्भव हो जाता है।

इसका बहुत बड़ा श्रेय व्लादीमीर इल्यीच लेनिन को है [उनकी जन्म-शताब्दी १९७० में मनायी जायगी] जिन्होंने राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष की राजनीति तथा कार्यनीति का विशदीकरण किया था।

मार्क्सवाद का अभ्युदय १९वीं शताब्दी के मध्यभाग में हुआ था जब अधिक उन्नत यूरोपीय देशों में शोषकों तथा शोषितों के बीच विरोधाभास तेज़ हो गये थे तथा मज़दूर वर्ग का, ऐसी शक्ति का जन्म हो गया था जो सामाजिक अत्याचार का अधिक अडिग ढंग से मुक़ाबला करने में सक्षम थी। इस शिक्षा के जन्म-दाताओं, कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एंगेल्स ने सिद्ध किया कि, "सर्वहारा के जीवन की स्थातियाँ चूंकि आज समाज के जीवन की तमाम स्थितियों का उनकी समस्त अमानवीय तीक्ष्णता के साथ

लेखाजोखा प्रस्तुत करती हैं",* इसलिए मजदूर वर्ग की सामाजिक मुक्ति समस्त उत्पीड़ितों तथा शोषितों की भी सामाजिक मुक्ति है। तब से वैज्ञानिक समाजवाद सबसे अधिक प्रभावशाली सिद्धान्त बन गया है जो मज़दूर वर्ग और आम, ग़ैर-सर्वहारा श्रेणियों के संघर्षों का पथ-प्रदर्शन करता है।

मार्क्सवाद ने पहली बार विश्व पर वैज्ञानिक ढंग से प्रकाश डाला और उसके पुनर्निर्माण की विधियों, उपायों तथा अवस्थाओं का नक्शा तैयार किया। मार्क्सवाद ने वे नियम सबसे अधिक सामान्य ढंग से बताये जो सामाजिक विकास का नियमन करते हैं।

लेनिन का नाम मार्क्सवाद के विकास में नये युग के साथ जुड़ा हुआ है। इस युग का आरम्भ १९वीं शताब्दि के अन्त में तथा २०वीं शताब्दि के आरम्भ में हुआ जब पूंजीवाद ने अपनी सबसे ऊंची, साम्राज्यवादी मन्ज़िल में प्रवेश किया। नये ऐतिहासिक दौर की आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों ने तथा विज्ञान और इन्जीनियरी के क्षेत्रों में हुई उपलब्धियों ने मार्क्सवाद तथा मार्क्सवादी दर्शन के और ज़्यादा सृजनात्मक विकास का तक़ाज़ा किया। लेनिन ने यह कार्य किया।

इतिहास के प्रति लेनिन की सेवा यह है कि उन्होंने सामाजिक विकास का नियमन करने वाले आम नियमों को, जिनका पता

---

*कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एंगेल्स : 'पवित्र परिवार अथवा आलोचनात्मक आलोचना की आलोचना," मास्को, १९५६ पृष्ठ ५२।

मार्क्स ने लगाया था, आधार बनाते हुए साम्राज्यवाद का सारतत्व उसके तमाम पहलुओं समेत प्रकाश मे रखा। अपनी पुस्तक "साम्राज्यवाद, पूँजीवाद की उच्चतम मंज़िल" (१९१६) में उन्होंने साम्राज्यवाद की व्याख्या इस प्रकार की कि उसका त्रिविध स्वरूप— इजारेदारी, परजीवी तथा मरणोन्मुख पूंजीवाद है। इसी कारण साम्राज्यवाद पूंजीवाद की आखिरी मंज़िल तथा समाजवादी क्रान्ति की पूर्व वेला है।

इजारेदारी प्रभुत्व का अर्थ मज़दूर वर्ग का तेज़ी से बढ़ा हुआ शोषण है जिसके फलस्वरूप मज़दूर वर्ग और उसके साथी किसानों द्वारा अपने शोषकों के विरुद्ध चलाया जाने वाला वर्ग संघर्ष और तेज़ हो जाता है। इजारेदारियां पूँजीवादी देशों के बीच भी विरोधाभासों को तीव्र करती हैं। इसके फलस्वरूप साम्राज्यवादी युद्ध होते हैं।

इजारेदारी प्रभुत्व का अर्थ है संसार का मुट्ठी भर साम्राज्यवादी ताकतों के बीच बँटवारा। ये साम्राज्यवादी ताक़तें दूसरे देशों को शोषण की चीज़ बना देती हैं। वे उन्हें या तो उपनिवेश या आर्थिक दृष्टि से पराधीन बना देती हैं, भले ही वे औपचारिक रूप में स्वतंत्र राष्ट्र हों। लेनिन ने इंगित किया था कि २०वीं शताब्दि के आरम्भ तक "पूंजीवाद औपनिवेशिक उत्पीड़न की विश्व प्रणाली, मुट्ठी भर 'उन्नत' देशों के हाथों दुनिया की विशाल बहु संख्या का वित्तीय दृष्टि से गला घोंटे जाने की विश्व प्रणाली बन गया है।"*

---

* व्ला. लेनिन, **संकलित कृतियाँ**, खण्ड २२, पृष्ठ १९१।

इजारेदारियों द्वारा औपनिवेशिक उत्पीड़न में तेज़ी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के उभार को बढ़ावा देती है।

१९वीं शताब्दी के मध्य भाग में पूंजीवाद एक प्रणाली के रूप में विकसित हो रहा था, इस कारण से मार्क्स तथा एंगेल्स इस बात पर विश्वास नहीं करते थे कि किसी एक देश में समाजवादी क्रान्ति विजयिनी हो सकती है, क्योंकि इसे पूंजीवादी देशों के सम्मिलित प्रयासों से कुचल दिया जायेगा। पर बाद की अपनी कृतियों में मार्क्स तथा एंगेल्स ने यह प्रस्थापन प्रस्तुत किया कि क्रान्ति पृथक-पृथक देशों में आरम्भ हो सकती है। पूँजीवाद की साम्राज्यवादी मंजिल के विश्लेषण के बल पर लेनिन ने मार्क्स तथा एंगेल्स के इस विचार को आगे विकसित किया। लेनिन ने यह निष्कर्ष निकाला कि समाजवाद पृथक-पृथक देशों में विजयी हो सकता है। इसके फलस्वरूप कई कड़ियां पूंजीवादी प्रणाली से अलग की जा सकती हैं। लेनिन ने इंगित किया कि यह प्रक्रिया एक पूरे ऐतिहासिक युग को अपनी परिधि में ले लेगी।

लेनिन ने साबित किया कि सामाजिक ःान्तियां स्वरूप तथा प्रेरक शक्तियों (बुर्जुआ, बुर्जुआ जनवादी तथा समाजवादी) दोनों मामलों में बहुविध हुआ करती हैं। उनका विश्वास था कि क्रान्ति की विभिन्न क़िस्में निश्चित ऐतिहासिक मंज़िलों से मेल खाती हैं। ये ऐतिहासिक मंज़िलें एक दूसरे का बेतरतीबी से, किसी

की सनक का अनुसरण नहीं किया करतीं, अपितु देश के सामाजिक, आर्थिक विकास के स्तर से मेल खाती हैं।

राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्तियों का क्रान्तियों के मध्य विशेष स्थान हुआ करता है। वे बुर्जुआ जनवादी क्रान्तियां होती हैं जिनका लक्ष्य राष्ट्रीय प्रभुसत्ता हासिल करना, सामन्ती सम्बन्ध समाप्त करना, राजनीतिक जनवाद हासिल करना और अगली, उच्चतर मंज़िल में संक्रमण का पथ प्रशस्त करना होता है।

जनवादी क्रान्ति में सोशल-डेमोक्रेसी (सामाजिक-जनवादीपार्टी) तांत्रिक की दो कार्यनीतियां (१६०५), **क्रान्ति के सबक़** (१६१०), मास्को विप्लव के सबक़ (१६०६) शीर्षक तथा अन्य कृतियों में लेनिन ने बताया कि शहर और देहात में मेहनतकश जन साधारण के साथ-साथ अनेकानेक मध्यवर्ती, निम्न बुर्जुआ स्तर तथा जनवादी रुझान के बुर्जुआ—बुर्जुआ जनतंत्र क्रान्ति में भाग लेते हैं। परन्तु निर्णायक विजय हासिल करने के लिए पर्याप्त बल रखने वाली जो एकमात्र शक्ति है, वह सर्वहारा वर्ग तथा कृषक समुदाय को लेकर बनती है। बुर्जुआ जनतंत्र क्रान्ति के दौरान ही सर्वहारा अग्रणी शक्ति के रूप में कृषक समुदाय के अधिकांश भाग को अपनी ओर एकत्र कर सामन्ती-ज़मींदारों के हाथों में भूमि-स्वामित्व का खात्मा कर सकता है और इस प्रकार बड़े पैमाने वाली निजी सम्पत्ति पर प्रहार कर सकता है।

१९वीं शताब्दि के अन्तिम भाग के रूसी क्रान्तिकारी आन्दोलन में एक प्रवृत्ति उभरी। उसके समर्थकों ने इस बात से इन्कार किया कि मज़दूर वर्ग का संघर्ष क्रान्ति की विजय में निर्णायक तत्त्व हुआ करता है। इसके बजाय उन्होंने क्रान्ति में मुख्य भूमिका किसानों को सौंपी। लेनिन ने किसानों को मज़दूर वर्ग से अलग करने की नीति के मुक़ाबले में आने वाले क्रान्तिकारी संग्रामों में दोनों की एकजुटता की नीति पेश की।

"जनता के मित्र कौन हैं" तथा **वे सोशल-डेमोक्रेटों से कैसे संघर्ष करते हैं** (१८९४), **रूस में पूंजीवाद का विकास** (१८९६-१८९९), आदि लेनिन की कृतियों में देहातों में पूंजीवादी विकास का निरन्तर सुसंगत मार्क्सवादी विश्लेषण किया गया है और वे मज़दूर आन्दोलन को किसानों के आन्दोलन से पृथक करने की नीति को आड़े हाथों लेती हैं। **रूसी-सोशल डेमोक्रेसी का कृषि सम्बन्धी कार्यक्रम** (१९०२), **देहाती ग़रीबों के नाम** (१९०३), **मज़दूर पार्टी के कृषि सम्बन्धी कार्यक्रम का संशोधन** (१९०६), **जिन्स के रूप में कर** (१९२१) तथा लेनिन की कई अन्य कृतियां मज़दूर वर्ग और किसानों की एकजुटता की आवश्यकता पर ज़ोर देती हैं।

लेनिन ने वैज्ञानिक ढंग से साबित किया कि किसानों का भविष्य मज़दूर वर्गीय क्रान्तिकारी आन्दोलन से अटूट रूप में जुड़ा हुआ है तथा वे मज़दूरों के साथी हैं। ज़मीन के लिए और

ज़मींदारों के ख़िलाफ़ संघर्ष आम किसानों में क्रान्ति लाता है, उन्हें जनवादी क्रान्ति की ओर और ज़्यादा सक्रिय ढंग से आकृष्ट करता है। यह मज़दूर वर्ग के साथ उनकी एकजुटता का आधार है।

लेनिन ने औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों की क्रान्तियों में निहित ख़ास विशिष्टताओं का, खास तौर पर विश्व पूंजीवादी प्रणाली के हाथों इन देशों के उत्पीड़न से उत्पन्न गुणों, उनकी सामाजिक प्रणालियों की विशेषताओं से उत्पन्न विशिष्टताओं का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया। लेनिन ने राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्ति की रणनीति और कार्यनीति के सम्बन्ध में सिद्धान्त निश्चित किया। इसका निचोड़ है राष्ट्रों का साम्राज्यवाद-विरोधी संयुक्त मोर्चा।

औपनिवेशिक प्रणाली को पूँजीवाद की अवश्यम्भावी उपज मानते हुए मार्क्स ने उन्नत देशों में मेहनतकश जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष तथा औपनिवेशिक प्रभुत्व की समाप्ति के बीच घनिष्ट सम्बन्ध पर ज़ोर दिया था। नयी परिस्थतियों में जब पूँजीवाद ने अपनी साम्राज्यवादी मंज़िल में प्रवेश किया था, लेनिन ने साबित किया कि उत्पीड़ित राष्ट्रों के मुक्ति आन्दोलन का मज़दूर वर्ग के समाजवादी आन्दोलन से जुड़ना अनिवार्य है ताकि वे मिलकर अपने समान शत्रु—साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक क्रान्तिकारी मोर्चा बना सकें। लेनिन ने **राष्ट्रीय समस्याओं के सम्बन्ध में आलोचनात्मक टीकाएं** (१९१३), **राष्ट्रों का आत्म-निर्णय सम्बन्धी अधिकार** (१९१४), **समाजवादी क्रान्ति तथा क़ौमों के स्वभाग्य निर्णय का अधिकार** (१९१६) जैसी कृतियों में यह विचार प्रतिपादित किया था।

लेनिन के अनुसार सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के सिद्धान्त, अपने को बहुत बड़ी ताकत मानने की अन्ध-राष्ट्रवादी भावना के विरुद्ध संघर्ष, उत्पीड़ित राष्ट्रों के मुक्ति आन्दोलन का साम्राज्य-वादी राज्य के अन्दर मज़दूर वर्ग द्वारा हर प्रकार से समर्थन, समान क्रान्तिकारी मोर्चे के निर्माण के लिए बुनियादी चीज़ें हैं। सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयवादी के सिद्धान्तों का पालन किए बिना, तमाम क़ौमों के मज़दूरों तथा मेहनतकश लोगों की पारस्परिक एकजुटता के बिना, संयुक्त कार्रवाइयों और बन्धुत्वपूर्ण सहयोग के बिना राष्ट्रीय प्रश्न का जनता के हित में कभी समाधान नहीं हो सकता।

लेनिन के इस सिद्धान्त का सही मानों में ऐतिहासिक महत्व है कि पिछड़े हुए देशों के लिए, जिनमें पूंजीवाद से पहले के सम्बन्ध प्रचलित हैं, कतिपय परिस्थितियों के अन्दर तथा मुक्ति क्रान्ति के फलस्वरूप, विकास की पूँजीवादी मंज़िल को लांघते हुए। समाजवादी निर्माण की राह पर चल पड़ना सम्भव है। इस कार्य को पूरा करने के लिए अपने को स्वतंत्र कर चुकी जनता को आर्थिक दृष्टि से विकसित देशों के विजयी मज़दूर वर्ग स हर प्रकार का समर्थन मिलना चाहिये।

लेनिन ने रूस के मजदूर वर्ग के संवर्ष के अनुभव का सामा-न्यीकरण किया और क्रान्तिकारी संघर्ष में शान्तिपूर्ण हड़तालों और प्रदर्शनों से लेकर दृढ़, क्रियाशील आक्रमणात्मक कार्यों तक के जिनमें—

सशस्त्र विप्लव भी शामिल है, विविध रूपों तथा विधियों को मिलाने की ज़रूरत पर ज़ोर दिया। क्रान्तिकारियों को उतावलेपन से भरी कार्यवाहियों के प्रति सचेत करते हुए लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि विप्लव का समारम्भ तभी किया जा सकता है जब उसकी सफलता के लिए पूर्वाविश्यक वस्तुएं मौजूद हों।

लेनिन ने मौक़ापरस्ती तथा संकीर्णतावाद को बेनक़ाब करके विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की बहुत बड़ी सेवा की। मौक़ापरस्तों ने दावा किया कि क्रान्तिकारी उथल-पुथलों का जमाना गुज़र चुका है तथा पूंजीवाद वस्तुगत नियमों के कारण सुचारु ढंग से और अपने आप समाजवाद में बदल जायेगा। मौक़ापरस्तों ने बुर्जुआ वर्ग को रियायतें देने और उनसे समझौता करने के लिए मज़दूर वर्ग को विवश करते हुए वर्ग संघर्ष का परित्याग कर दिया। लेनिन ने अपनी कृतियों में साफ़-साफ़ ढंग से साबित किया कि समाजवाद इस ढंग से हासिल नहीं किया जा सकता। गत दशकों ने लेनिन की भविष्योक्तियों की पुष्टि कर दी है।

कठमुल्लापन और संकीर्णतावाद क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए समान रूप से खतरनाक हैं। संकीर्णतावादी क्रान्तिवाद उथला और अस्थिर होता है। उसके अनुयायियों में सर्वहारा आत्म-नियंत्रण, अनुशासन और दृढ़ता का अभाव होता है तथा वे संगठित नहीं होते।

मार्क्स की शिक्षा का विकास करते हुए लेनिन ने नई प्रथा की पार्टी-मार्क्सवादी क्रान्तिकारी पार्टी के सम्बन्ध में एक अंगांगि रूप

से सम्पूर्ण सिद्धान्त का विशदीकरण किया। लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि सामाजवादी क्रान्ति को मूर्त रूप देने के लिए मजदूर वर्ग को संगठित होना होगा। मज़दूर वर्ग को एक संघर्षशील संगठन का, अर्थात् एक हिरावल का निर्माण करना चाहिए। मज़दूर वर्ग की पार्टी के सम्बन्ध में उनके सिद्धान्त की जानकारी उनकी प्रमुख कृतियों—**क्या किया जाय ?** [१६०२] और **एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे** [१६०४] में मिल सकती है।

मज़दूर वर्ग की पार्टी अपने वर्ग के साथ और अपने ज़रिये तमाम शोषितों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई होती है। लेनिन ने कहा कि पार्टी को मज़दूर वर्ग के संघर्ष का नेतृत्व करना चाहिए, क्रान्तिकारी आन्दोलन के अनुभव का सामान्यीकरण करना चाहिए तथा सामूहिक रूप से प्रगतिशील सिद्धान्त विकसित करना चाहिए। पार्टी को समाज के जीवन का विश्लेषण कर क्रान्तिकारी संघर्ष की रणनीति और कार्यनीति तैयार करनी चाहिए। लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि पार्टी केवल वैज्ञानिक क्रान्तिकारी सिद्धान्त के, अर्थात् मार्क्सवाद के आधार पर ही समाज में जीवन का सही-सही मूल्यांकन कर सकती है। यदि कोई पार्टी समान विचारधारा तथा कठोर अनुसाशन के उसके-जो तमाम सदस्यों के लिए अनिवार्य हों, आधार पर अपनी पाँतों को ऐक्यबद्ध नहीं करती तो वह जुझारू या संघर्ष-शील नहीं रह जाती।

समाजवादी क्रान्ति की अवश्यम्भाविता को सैद्धान्तिक रूप से सिद्ध करके लेनिन तथा बोल्शेविक पार्टी ने रूस के मज़दूर वर्ग और

मेहनतकश किसानों का नेतृत्व कर उन्हें विजय के लक्ष्य तक पहुंचाया। सोविवत संघ में समाजवाद का निर्माण—उद्योग का तूफ़ानी गति से विकास, सामूहिकीकृत कृषि की उपलब्धियां तथा सांस्कृतिक सफलताएं—लेनिन के विचारों का कार्यान्वयन हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध में हमलावर फासिस्टी गुट पर विजय ने विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया की रफ्तार बहुत तेज़ कर दी। विश्व समाजवादी समुदाय का जन्म हुआ। साम्राज्यवादी औपनिवेशिक प्रणाली धसक गयी। मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन की शिक्षा के अनुसार जिस सामाजिक प्रणाली का निर्माण किया गया था, वह विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया का मुख्य आधार-स्तम्भ बन गयी।

लेनिनवाद ने मार्क्सवाद के उत्तराधिकारी के रूप में जन्म लिया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद आंशिक रूप से सम्पूर्ण सिद्धान्त है जो संसार के कम्युनिस्टों, मज़दूरों तथा राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों के प्रचलित अनुभव के सामान्यीकरण के आधार पर विकसित होता है। लेनिनवाद मार्क्सवाद की नयी, पहले से ऊँची मंज़िल है, २० वीं सदी का मार्क्सवाद है, आधुनिक युग का मार्क्सवाद है। इसे कम्युनिस्ट तथा मज़दूर पार्टियों के क्रान्तिकारी सिद्धान्त और क्रान्तिकारी व्यवहार में विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन के सामूहिक प्रयास द्वारा तैयार किये जाने वाले कार्यक्रम-दस्तावेज़ों में और विकसित किया जाता है। लेनिनवाद में—तमाम मार्क्सवादी पार्टियों, विश्व मज़दूर वर्ग और समस्त प्रगतिशील मानवता के लिए—जो ज़रूरी

सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का समाधान करना चाहती है, ज़बर्दस्त आकर्षण-शक्ति है। लेनिन के विचार, कम्युनिस्ट विचार, अग्रणी विचार वर्तमान काल की ज़बर्दस्त प्रेरक शक्ति बन गये हैं।

साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों के संयुक्त मोर्चे के सम्बन्ध में लेनिन की शिक्षा

लेनिन ने अपने लेख, 'पिछड़ा हुआ यूरोप तथा उन्नत एशिया' में इंगित किया था कि "लाखों-करोड़ों लोग जीवन, प्रकाश तथा स्वतन्त्रता में आंखें खोल रहे हैं।"* समाजवाद की ओर औपनिवेशिक तथा पराधीन कौमों की अनुगति को एक ही क्रान्तिकारी प्रक्रिया का अंग मानते हुए उन्होंने उल्लेख किया कि "समाजवादी क्रान्ति हर देश में क्रान्तिकारी सर्वहारा का अपने पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ एकमात्र अथवा मुख्य संघर्ष नहीं होगी—नहीं, वह तो साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित तमाम उपनिवेशों और देशों का, तमाम पराधीन देशों का अन्तर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष होगी।" **

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खन्ड १६, पृष्ठ १००।

** व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३०, पृष्ठ १५६।

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के बारे में लेनिन की शिक्षा का पूर्व के जनगण के लिए व्यावहारिक महत्व है, क्योंकि वह उन ऐतिहासिक अवस्थाओं के लिए अपनाया गया क्रान्तिकारी सिद्धान्त है जिन्होंने औपनिवेशिक और पराधीन देशों में दीर्घकालीन उत्पीड़न के फलस्वरूप मूर्तरूप धारण किया है। ये अवस्थाएं हैं, सर्वप्रथम-आबादी में किसानों का प्राधान्य होना और दूसरे, सर्वहारा विचार-धारा के अलमबरदार मज़दूर वर्ग का वहाँ थोड़ा होना।

नवम्बर १९१९ में पूर्व के जनगण के कम्युनिस्ट संगठनों की द्वितीय अखिल रूसी कांग्रेस के डेलीगेटों के समक्ष भाषण करते हुए लेनिन ने कहा था, "आपको ऐसे कार्य का सामना करना पड़ रहा है जो दुनिया के कम्युनिस्टों के सामने पहले कभी उपस्थित नहीं हुआ था। यह कार्य है—कम्युनिज़म के आम सिद्धान्त तथा व्यवहार पर आश्रित रह कर आपको ऐसी विशिष्ट अवस्थाओं के अनुकूल अपने को ढालने का जो यूरोपीय देशों में विद्यमान नहीं हैं, उस सिद्धान्त तथा व्यवहार को उन अवस्थाओं पर लागू करने के योग्य बनने का जिनमें आबादी का अधिकांश भाग कृषकजन का है और जिनमें काम पूंजीवाद के विरुद्ध नहीं, अपितु मध्ययुगीन अवशेषों के विरुद्ध संघर्ष चलाने का है।"*

इन अवस्थाओं को आधार बनाकर अग्रसर होते हुए लेनिन ने पूर्व के जनगण के लिए क्रान्तिकारी संघर्ष के एक ऐसे कार्यक्रम का

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियाँ, खण्ड ३०, पृष्ठ १६१।

विशदीकरण किया जिसका सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक महत्व आज भी ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। इस कार्यक्रम की रूपरेखा कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल की दूसरी, तीसरी तथा चौथी कांग्रेसों की—जिनमें उन्होंने भाग लिया था, दस्तावेज़ों में तथा उनके कई लेखों, वार्ताओं तथा रिपोर्टों में प्रस्तुत की गयी थी।

राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के स्थान और भूमिका की समस्या उपनिवेशों तथा अर्द्ध-उपनिवेशों में राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन की शुरूआत से ही मौजूद रही है। कम्युनिस्ट पार्टियों तथा अन्य प्रगतिशील शक्तियों को राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के मामले में कौन-सा रुख अपनाना चाहिए ? क्या उन्हें उसका समर्थन करना चाहिए ? यदि हाँ, तो सवाल उठता है, किस हद तक और किस रूप में ? इस प्रश्न का सही-सही उत्तर बड़ी हद तक वह मुख्य उपकरण था और आज भी है जो स्वतन्त्रता के लिए होने वाले क्रान्तिकारी संघर्ष का परिणाम निर्धारित करता है।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि उदीयमान पूर्वी देशों के अन्दर बुर्जुआ वर्ग कई मामलों में पश्चिम के प्रतिक्रियावादी, अनुदारवादी बुर्जुआ वर्ग से भिन्न है। उन्होंने ज़ोर देते हुए कहा था, "परन्तु एशिया में अब भी ऐसा बुर्जुआ वर्ग है जिसमें सच्चे, संघर्षशील, सुसंगत जनवाद की हिमायत करने की क्षमता है, जो फ्रांस के जागरण-कालीन मनीषियों और अठ्ठारहवीं सदी के अंतिम भाग के महान नेताओं का योग्य साथी है।" लेनिन ने इंगित किया

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १८, पृष्ठ १६५।

कि "एशिया में सर्वत्र सशक्त जनवादी आन्दोलन विकसित हो रहा है, फैलता जा रहा है और शक्ति प्राप्त कर रहा है। यहां बुर्जुआ वर्ग अब भी प्रतिक्रियावाद के खिलाफ जनता का साथ दे रहा है।"*

इसका स्पष्टीकरण इस तथ्य से हो जाता है कि राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग को साम्राज्यवाद उत्पीड़ित करता है, इसलिए स्वतंत्रता के मामले में उनके अपने हित राष्ट्र के समान हितों से मेल खाते हैं। उपनिवेशों तथा अर्द्ध-उपनिवेशों से पूंजीवाद के विकास को चूंकि केवल साम्राज्यवाद ही नहीं वरन् सामन्ती अवशेष भी अवरुद्ध करते हैं, इसलिए भूमि-स्वामित्व पर सामन्ती-जमींदाराना इजारेदारी के खात्मे से कुछ हद तक राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग की दिलचस्पी रहती है।

इतिहास सिद्ध कर चुका है कि लेनिन सही थे। उदाहरणार्थ भारत, बर्मा, श्रीलंका तथा कुछ अन्य देशों में जब राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा था, तब वह पूरे राष्ट्र के हितार्थ काम कर रहा था। उसने साम्राज्यवाद के विरुद्ध, राज्य प्रभुसत्ता के लिए संघर्ष में क्रान्तिकारी भूमिका अदा की और आज वह अपने-अपने देश में आर्थिक विकास के कार्य मे तथा स्वतंत्र राजनीतिक मार्ग पर चलने के ध्येय से कार्यान्वयन में ठोस योगदान कर रहा है।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खंड १६, पृष्ठ ६६-१००।

पराधीन देशों के पूंजीपतिवर्ग में साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों के एक बड़े भाग का, खास तौर पर शहरों और देहात के पेटी बुर्जुआ (निम्न-मध्यम वर्ग) तत्वों का नेतृत्व करने की क्षमता थी और आज कुछ परिस्थितियों ने ऐसा किया भी। इसे दृष्टिगत रखकर लेनिन ने पूर्व के कम्युनिस्ट संगठनों की द्वितीय अखिल रूसी कांग्रेस को सम्बोधित करते हुए कहा था कि "आपको बुर्जुआ राष्ट्रवाद को (जो इन जन-गण के बीच जागृत हो रहा है और जिसे जाग्रत होना चाहिये, तथा जिसका अपना ऐतिहासिक औचित्य है, अपना आधार बनाना ही होगा।"*

कम्युनिस्ट आन्दोलन में कुछ "वामपंथी" तत्वों द्वारा राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का जो विरोध किया गया था, उसका लेनिन को मुकाबला करना पड़ा। जो लोग औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों के अन्दर सामाजिक संघर्ष की खास विशेषताओं और क्रान्तिकारी प्रक्रिया के वस्तुगत नियमों की उपेक्षा करते हुए "वामपंथी" प्रवृत्तियों से चिपके हुए थे, वे वास्तविक तथ्यों का लेखा लेने से इन्कार कर रहे थे। उनका दावा था कि उपनिवेशों में जनसाधारण बुर्जुआ जनवादी आन्दोलन के लिए विजातीय थे। उन्होंने कम्युनिस्टों से आग्रह किया कि वे उसका समर्थन न करें अपितु समाजवादी परिवर्तनों के लिए संघर्ष छेड़ें। १९२० में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की दूसरी कांग्रेस में लेनिन ने इस आवश्यकता पर जोर दिया कि

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियाँ, खंड ३०, पृष्ठ १६२।

कोमिन्टर्न बुर्जुआ-जनवादी राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों का समथन करे। उन्होंने कई लेखों तथा भाषणों में अपनी स्थिति की परिपुष्टि की तथा विस्तारपूर्वक प्रतिपादित किया। उन्होंने उत्पीड़ित देशों के अन्दर बुर्जुआ-जनवादी आन्दोलन में दो प्रवृत्तियों—राष्ट्रीय सुधारवादी तथा राष्ट्रीय क्रान्तिकारी—के अन्तर को पहचानने की आवश्यकता पर खास तौर से ज़ोर दिया तथा सर्वप्रथम क्रान्तिकारी पक्ष का समर्थन करने के केमिन्टर्न के संकल्प पर ज़ोर दिया। ऐसा अन्तर करना जरूरी था क्योंकि उदारपंथी बुर्जुआ वर्ग राष्ट्रीय-मुक्ति आन्दोलन से उसकी शुरुआती मंजिल में बुर्जुआ वर्ग के साथ क्रान्तिकारी-जनवादी भागों के साथ शामिल हो गया था। ये उदारपंथी तत्व शान्तिपूर्ण सुधारों के लिए अपने ध्येय की सिद्धि को ज्यादा पसन्द करते थे और उन्होंने जन-साधारण के प्रति आन्दोलन को सुधारवादी ढर्रे में प्रवाहित करने, उसे दृढ़ साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष करने से हटाने का प्रयास किया।

बुर्जुआ-जनवादी मुक्ति आन्दोलनों के प्रति कम्युनिस्टों के समर्थन के सिलसिले में लेनिन के शब्दों को स्मरण करना उचित होगा। उन्होंने कहा था कि, "**किसी भी** उत्पीड़त राष्ट्र के बुर्जुआ राष्ट्रवाद में आम जनवादी तत्व हुआ करता है जो उत्पीड़न के **विरुद्ध** लक्षित रहता है और यही वह तत्व है जिसका हम **बिना किसी शर्त** के समर्थन करते हैं। साथ ही हम इसे राष्ट्रीय एकान्तिकता की दिशा में ले जाने वाली प्रवत्ति से सुनिश्चित रूप में पृथक मानते हैं।" लेनिन ने आगे लिखा है कि "उत्पीड़ित राष्ट्र का बुर्जुआ वर्ग जिस

पराधीन देशों के पूंजीपतिवर्ग में साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों के एक बड़े भाग का, खास तौर पर शहरों और देहात के पेटी बुर्जुआ (निम्न-मध्यम वर्ग) तत्वों का नेतृत्व करने की क्षमता थी और आज कुछ परिस्थितियों ने ऐसा किया भी। इसे दृष्टिगत रखकर लेनिन ने पूर्व के कम्युनिस्ट संगठनों की द्वितीय अखिल रूसी कांग्रेस को सम्बोधित करते हुए कहा था कि "आपको बुर्जुआ राष्ट्रवाद को (जो इन जन-गण के बीच जागृत हो रहा है और जिसे जाग्रत होना चाहिये, तथा जिसका अपना ऐतिहासिक औचित्य है, अपना आधार बनाना ही होगा।"*

कम्युनिस्ट आन्दोलन में कुछ "वामपंथी" तत्वों द्वारा राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का जो विरोध किया गया था, उसका लेनिन को मुकाबला करना पड़ा। जो लोग औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों के अन्दर सामाजिक संघर्ष की खास विशेषताओं और क्रान्तिकारी प्रक्रिया के वस्तुगत नियमों की उपेक्षा करते हुए "वामपंथी" प्रवृत्तियों से चिपके हुए थे, वे वास्तविक तथ्यों का लेखा लेने से इन्कार कर रहे थे। उनका दावा था कि उपनिवेशों में जनसाधारण बुर्जुआ जनवादी आन्दोलन के लिए विजातीय थे। उन्होंने कम्युनिस्टों से आग्रह किया कि वे उसका समर्थन न करें अपितु समाजवादी परिवर्तनों के लिए संघर्ष छेड़ें। १९२० में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की दूसरी कांग्रेस में लेनिन ने इस आवश्यकता पर ज़ोर दिया कि

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियाँ, खंड ३०, पृष्ठ १६२।

कोमिन्टर्न बुर्जुआ-जनवादी राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों का समर्थन करे। उन्होंने कई लेखों तथा भाषणों में अपनी स्थिति की परिपुष्टि की तथा विस्तारपूर्वक प्रतिपादित किया। उन्होंने उत्पीड़ित देशों के अन्दर बुर्जुआ-जनवादी आन्दोलन में दो प्रवृत्तियों—राष्ट्रीय सुधारवादी तथा राष्ट्रीय क्रान्तिकारी—के अन्तर को पहचानने की आवश्यकता पर खास तौर से ज़ोर दिया तथा सर्वप्रथम क्रान्तिकारी पक्ष का समर्थन करने के केमिन्टर्न के संकल्प पर ज़ोर दिया। ऐसा अन्तर करना जरूरी था क्योंकि उदारपंथी बुर्जुआ वर्ग राष्ट्रीय-मुक्ति आन्दोलन से उसकी शुरुआती मंजिल में बुर्जुआ वर्ग के साथ क्रान्ति-कारी-जनवादी भागों के साथ शामिल हो गया था। ये उदारपंथी तत्व शान्तिपूर्ण सुधारों के लिए अपने ध्येय की सिद्धि को ज्यादा पसन्द करते थे और उन्होंने जन-साधारण के प्रति आन्दोलन को सुधारवादी ढर्रे में प्रवाहित करने, उसे दृढ़ साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष करने से हटाने का प्रयास किया।

बुर्जुआ-जनवादी मुक्ति आन्दोलनों के प्रति कम्युनिस्टों के सम-र्थन के सिलसिले में लेनिन के शब्दों को स्मरण करना उचित होगा। उन्होंने कहा था कि, "**किसी भी** उत्पीड़त राष्ट्र के बुर्जुआ राष्ट्रवाद में आम जनवादी तत्व हुआ करता है जो उत्पीड़न के **विरुद्ध** लक्षित रहता है और यही वह तत्व है जिसका हम **बिना किसी शर्त** के समर्थन करते हैं। साथ ही हम इसे राष्ट्रीय एकान्तिकता की दिशा में ले जाने वाली प्रवत्ति से सुनिश्चित रूप में पृथक मानते हैं।" लेनिन ने आगे लिखा है कि "उत्पीड़ित राष्ट्र का बुर्जुआ वर्ग जिस

हद तक अत्याचारी के खिलाफ़ लड़ता है, हम सदैव, हर मामले मे, किसी भी दूसरे की तुलना में अधिक दृढ़तापूर्वक उसके पक्ष में रहते हैं क्योंकि हम उत्पीड़न के सबसे कट्टर तथा अविचल शत्रु हैं। परन्तु जहाँ तक उत्पीड़ित राष्ट्र का बुर्जुआ वर्ग अपने ही बुर्जुआ राष्ट्रवाद के पक्ष में रहता है, हम उसका विरोध करते हैं।"*

साथ ही लेनिन ने मज़दूर वर्ग को अपने वर्गीय कर्तव्यों की बलि देकर राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन में समा जाने के खतरे से आगाह किया था। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया था कि कम्युनिस्ट जब विभिन्न राष्ट्रीय बुर्जुआ पार्टियों के साथ राजनीतिक गुटों में प्रवेश करते हैं तो उन्हें बिना किसी शर्त के अपनी संगठनात्मक तथा विचारधारात्मक स्वतन्त्रता कायम रखनी चाहिए। राष्ट्रीय-बुर्जुआ वर्ग के दुहरे स्वरूप की ओर संकेत करते हुए उन्होंने उसकी इस प्रवृत्ति से सावधान किया था। यह है साम्राज्यवादी बुर्जुआ वर्ग से समझौता करने की प्रवृत्ति, ताकि तमाम क्रान्तिकारी आन्दोलनों और क्रान्तिकारी वर्गों से संयुक्त रूप से टक्कर ली जा सके। लेनिन ने कहा—"…… … कम्युनिस्टों के रूप में हम लोगों को उपनिवेशों से केवल उसी सूरत में बुर्जुआ-मुक्ति आन्दोलनों का समर्थन करना चाहिए और उसी सूरत में हम उनका समर्थन करेंगे जब वे सही माने में क्रान्तिकारी होंगे और जब उनके प्रतिपादक कृषक समुदाय तथा

---

* व्ला० लेनिन, खण्ड २०, पृष्ठ ४१२, ४११।

आम शोषितजनों को क्रान्तिकारी भावना में शिक्षित-दीक्षित करने और संगठित करने के हमारे काम में रोड़ा नहीं अटकायेंगे।"*

भारतीय कम्युनिस्ट **एम० एन० राय** से लेनिन का वाद-विवाद सुविदित है। द्वितीय कोमिन्टर्न कांग्रेस में राय ने राष्ट्रीय तथा औपविवेशिक प्रश्नों के सम्बन्ध में लेनिन की रिपोर्ट के उस मुद्दे पर ऐतराज किया था जिसमें बुर्जुआ-जनवादी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन को तमाम कम्युनिस्ट पार्टियों द्वारा मदद देने जाने की आवश्यकता पर जोर दिया गया था। राय का मत था कि राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए संघर्ष को मेहनतकश जनता के वर्ग संघर्ष से कुछ भी लेना-देना नहीं है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उपनिवेशों की मुक्ति के लिए बुर्जुआ-जनवादी आन्दोलन के समर्थन के बारे में प्रस्तुत प्रस्थापना को निकाल दिया जाना चाहिए। लेनिन ने राय के खतरनाक संकीर्णतावादी रुख का विरोध किया और इस बात पर जोर दिया कि बुर्जुआ जनवादी आन्दोलन में विलीन हुए बिना उसका समर्थन करना भारतीय कम्युनिस्टों का कर्त्तव्य है।

इस प्रकार पराधीन देशों के बुर्जुआ वर्ग में सकारात्मक तथा नकारात्मक—दोनों तरह के गुण होते हैं। उनकी साम्राज्यवाद-विरोधी प्रवत्तियां, जो उनकी उत्पीड़ित स्थिति से प्रवाहित होती हैं, सकारात्मक होती हैं, जबकि उनके नकारात्मक गुण उनके शोषक

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २४२।

स्वरूप से प्रस्फुटित होते हैं। यह स्वरूप उन पर जोर देता है कि वे, साम्राज्यवाद से समझौता करने के सहित, किसी भी तरीके से अपने संकीर्ण वर्ग-हितों की पूर्ति करें। ये गुण भिन्न-भिन्न रूपों में और भिन्न-भिन्न मात्रा में प्रकट होते हैं जो सम्बद्ध देश के सामाजिक तथा राजनीतिक शक्ति-सन्तुलन पर तथा विशिष्ठ ऐतिहासिक स्थिति पर निर्भर करते हैं। फिर भी मुक्ति संग्राम को दो कालों में विभाजित करने वाली एक सीमा-रेखा है। इन दो कालों में बुर्जुआ वर्ग भिन्न-भिन्न ढंग के आचरण का परिचय देता है। यह सीमा-रेखा है राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति।

राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति से पहले राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के सकारात्मक गुण सामान्यतया उभरकर सामने आते हैं। बुर्जुआ वर्ग मुक्ति-आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने वालों के रूप में प्रकट होता है और वह अन्य सामाजिक-राजनीतिक शक्तियों के साथ अग्रणी भूमिका में हाथ बंटा सकता है।

बुर्जुआ वर्ग के नकारात्मक गुणों का तब अधिकाधिक रूप से अनुभव होने लगता है जब राजनीतिक स्वतन्त्रता हासिल हो जाती है तथा जब वह अपनी आर्थिक तथा राजनीतिक स्थिति मजबूत करने लगता है। इस काल में वह जनता के साथ नहीं होता, बल्कि उसके ऊपर होता है और वह अपना प्रभुत्व क़ायम रखने और उसे मज़बूत बनाने की धुन में रहता है। यह बात खास तौर पर बुर्जुआ वर्ग के ऊपरी भागों पर, मुख्यतया उस बड़े राष्ट्रीय इजारेदारों

पर लागू होती है जो साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चे का परित्याग कर देते हैं, तथा साम्राज्यवाद के "व्यापारिक साझीदार" बन जाते हैं और अन्ततः अपने को प्रगतिशील सामाजिक-राजनीतिक शक्तियों के विरुद्ध खड़ा पाते हैं।

निस्सन्देह बुर्जुआ वर्ग अपनी क्रान्तिकारी आकांक्षाएं रातो-रात नहीं निकाल बाहर करता, क्योंकि राजनीतिक स्वतन्त्रता खुद-बखुद उसके और साम्राज्यवाद के बीच के विरोधाभास को दूर नहीं कर देती, उसे अपने आप आर्थिक दृष्टि से आज़ाद नहीं करती है। यही वजह है कि स्वतन्त्र देशों के अन्दर वह एक खास अवधि तक, जो काफी लम्बी हो सकती है, कतिपय प्रगतिशील, साम्राज्य-वाद विरोधी प्रवत्तियां कायम रखता है। राष्ट्रीय आर्थिक विकास में योगदान, विदेशी पूंजी के प्रभाव को संकुचित करने के लिए लक्षित रक्षात्मक पग तथा अन्य पग, साधारणतया राष्ट्रीय हित में उठाये जाते हैं। फिर भी राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग अब साम्राज्यवाद के साथ अपने अन्तर्विरोध को क्रांति नहीं वरन् सुधारों के जरिए सुलझाना चाहता है। साम्राज्यवाद के साथ उसका संघर्ष अब राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी के बीच प्रतियोगिता के आगे नहीं जाता। उसे इस बात का अधिकाधिक आभास होता जाता है कि उसके हितों का विदेशी पूंजी से बहुत साम्य है और तदनुसार वह उसके साथ सहयोग के विभिन्न रूपों का व्यापकतर उपयोग करता है और अब यह काम पहले से कहीं ज्यादा लाभदायी शर्तों पर होता है।

हर देश की अपनी-अपनी विशेषताएं हुआ करती हैं। उन्हें जो चीजें जन्म देती हैं, वे ये हैं—सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विकास के ऐतिहासिक रूप में अनुकूलित स्तर; सामन्ती तथा पूर्व-सामन्ती अवशेषों का दायरा; विदेशी पूंजी पर निर्भरता; नये सामाजिक वर्गों—मजदूर वर्ग, बुर्जुआ वर्ग तथा निम्न मध्यम वर्ग की एकता की मात्रा तथा इन वर्गों की सापेक्ष शक्ति, और अन्ततः प्रगतिशील क्रान्तिकारी शक्तियों की राजनीतिक जागरूकता तथा संगठन का स्तर। ये तमाम तत्व मिलकर राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का राजनीतिक स्वरूप निर्धारित करते हैं।

सभी नव-स्वतंत्र देशों के अन्दर बुर्जुआ वर्ग एकरूपात्मक वर्ग होने से कोसों दूर होता है। उसके अन्दर जो विभिन्न समूह होते हैं, उनके अपने-अपने अन्तर्विरोध हुआ करते हैं। यह चीज प्रगतिशील शक्तियों को संयुक्त साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे के विस्तार तथा दृढ़ीकरण को दृष्टिगत रखते हुए बुर्जुआ वर्ग के विभिन्न भागों के प्रति लचकदार नीति का अनुसरण करने में समर्थ बनाती है।

बुर्जुआ वर्ग साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे के अन्दर कितनी सक्रियता के साथ भाग लेता है, इसका पता मजदूर वर्ग के प्रति उसके विरोधभाव से लग सकता है। कुछ देशों में दो सामाजिक लड़ाइयाँ समानान्तर रूप से चल रही हैं। ये लड़ाइयां हैं—आम साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष तथा बुर्जुआ वर्ग और मेहनतकश जनता के बीच तीव्र होने वाला विरोधभाव जो धीरे-धीरे संगठित राजनीतिक संघर्ष में परिणित होता जाता है। दूसरे देशों में जहां

बुर्जुआ वर्ग और सर्वहारा संगठनात्मक तथा विचाराधारात्मक दोनों दृष्टि से अब भी कमज़ोर है, उनका विरोधभाव ऐसी सीमा पर नहीं पहुँचा है कि उसके आकार को देखा जा सके।

इन दो छोरों के बीच कई मध्यवर्ती तत्व हैं। राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के प्रति कम्युनिस्ट तथा अन्य प्रगतिशील शक्तियों का रुख सम्बद्ध देश की ठोस ऐतिहासिक अवस्थाओं के, वर्ग शक्तियों के संतुलन तथा राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग और उसके विभिन्न समूहों के आचरण के अनुरूप होना चाहिए।

मुक्ति आन्दोलन में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग की भूमिका का विश्लेषण वस्तुगत रूप में आवश्यक है। प्रगतिशील तथा प्रतिगामी प्रवृत्तियों का विस्तारपूर्वक अध्ययन कम्युनिस्ट और मज़दूर पार्टियों को मुक्ति आन्दोलन में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग की भूमिका का मूल्य घटाकर या बढ़ाकर आंकने की गलतियों से बचाता है।

जब कम्युनिस्ट लेनिन के इन शब्दों को भूल जाते हैं कि सर्वहारा की नीति बुर्जुआ वर्ग को केवल कुछ मामलों में ही मदद देती है, उसकी नीति से कभी मेल नहीं बैठाती, तो दक्षिणपंथी-अवसरवादी किस्म की गलतियाँ हुआ करती हैं। इन गलतियों का स्रोत है बुर्जुआ वर्ग के राजनीतिक दोमुँहेपन की उपेक्षा, लड़खड़ाने और ढुलमुलपन की उनकी प्रवृत्ति, प्रथम सफलताओं के मिलते ही संघर्ष की क्रान्तिकारी विधियों तथा सरकार के जनवादी स्वरूपों का परित्याग करने की प्रवृत्ति की उपेक्षा। अवसरवाद प्रायः राष्ट्रीय बुर्जुआ

वर्ग के साथ किसी भी सूरत में तथा मुक्ति-संघर्ष की तमाम मंजिलों में एकता बनाये रखने का रूप धारण करता है। यह चीज सामान्यतया मजदूरों के आन्दोलन को बुर्जुआ राष्ट्रीय आन्दोलन का पुछल्ला बना देती है। इतिहास का अनुभव बताता है कि पूंजीपति वर्ग ऐसे मामलों में प्रतिक्रियावादी तथा जनवाद विरोधी नीति का प्राय: निर्विरोध रूप में अनुसरण करने में सक्षम होता है, जबकि कम्युनिस्ट जनधारणा के बीच अपनी प्रतिष्ठा से हाथ धो बैठते हैं।

इसके विपरीत क़िस्म की, वामपंथी संकीर्णता भरी ग़लतियाँ उस समय होती हैं जब कम्युनिस्टों में बुर्जुआ वर्ग के उन भागों को अलग कर चुकने की क्षमता नहीं होती जिनमें साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष का रुझान होता है। वे बुर्जुआ वर्ग के इन भागों को उनके साथ बिठाते हैं जिनकी स्थिति साम्राज्यवाद पोषक होती है। फलस्वरूप कम्युनिस्ट अपने को जनसाधारण से अलग-थलग पाते हैं और घटना-प्रवाह पर असर डालने में असमर्थ रहते हैं।

इस सिलसिले में नवस्वतंत्र देशों में माओ-त्स-तुंग के गुट की दुस्साहसिकतावादी नीति द्वारा साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों को पहुंचायी जाने वाली असीम हानि का उल्लेख करना उपयुक्त होगा। माओपंथी आबादी के ग़ैर-मेहनतकश भागों की, जिनमें राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग भी शामिल हैं, साम्राज्यवाद विरोधी प्रवृत्तियों को पूरी तरह नज़रअन्दाज़ कर बैठते हैं। जब वे विकासमान देशों के अन्दर क्रान्तिकारी प्रक्रियाओं को बनावटी ढंग से उकसाने

की कोशिश करते हैं तो इस तरह सर्वहारा को अपने लक्ष्य की वृद्धि में किसी तरह मदद नहीं देते, अपितु आम मुक्ति संग्राम की सफलता के संयोगों पर गम्भीर कुठाराघात करते हैं। माओवादियों ने सम्बन्धित देश के अन्दर ठोस परिस्थितियों की ओर ध्यान दिये बिना "क्रान्तिकारी स्थिति" अथवा "जन-युद्ध" के जो नारे बुलन्द किये हैं, वे क्रान्तिकारी आन्दोलन को दुस्साहसिकता भरी योजनाओं की ओर ले जाते हैं जिनका विफल होना अवश्यम्भावी होता है तथा जिनके परिणामस्वरूप कई मामलों में देश विशेष में सारी प्रगतिशील शक्तियां धराशायी हो जाती हैं।

मुक्ति आन्दोलन की मौजूदा मंज़िल साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों के बीच व्यापक एकता का आधार प्रस्तुत करती है। एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों को देखते हुए संयुक्त साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चे का गठन एक जैसा नहीं हो सकता। परन्तु तमाम मामलों में वह हर ऐसे वर्ग, भाग या समूह को जिसमें साम्राज्यवाद विरोधी प्रवृत्तियाँ हैं, अपने अन्दर वे चाहे कैसा ही विचारधारात्मक और राजनीतिक स्वरूप धारण करें—शामिल कर सकता है और उसे ऐसा करना ही चाहिए। इस तरह की एकता पेचीदे और बहुमुखी संघर्ष में साम्राज्यवादी उत्पीड़न से अन्तिम मुक्ति के लिए सफलता की गारंटी है।

लेनिन ने कहा था कि हर उत्पीड़न देशभक्तिपूर्ण शक्तियों

की एकता को अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ लड़ने वाली तमाम शक्तियों के साथ मिलाया जाना चाहिए ।

अनुभव निर्णायक ढंग से बताता है कि साम्राज्यवाद के ख़िलाफ संघर्ष में सफलता की बुनियादी शर्त एक ही विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया के तीन अंगों—विश्व समाजवादी व्यवस्था, पूंजीवादी देशों में सर्वहारा आन्दोलन तथा एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका में राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष के बीच मज़बूत ऐक्यबद्धता है। विश्व साम्राज्य-वाद-विरोधी मोर्चे के इन दस्तों में हर एक के निस्सन्देह अपने-अपने क्रान्तिकारी कार्य हैं परन्तु वे साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष की समान धारा से घनिष्ठ रूप में जुड़े हुए हैं। समस्त देशों तथा महादेशों के मज़दूरों और किसानों, तमाम मेहनतकश लोगों को एक मज़बूत, कपटी शत्रु, अन्तर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद का सामना करना पड़ रहा है। इस दुश्मन को तभी पिछाड़ा जा सकता है जब विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की तीन धाराएं उससे टक्कर लेने के लिए आपस में मिल जाएं।

वे एक दूसरे पर किस तरह प्रभाव डालें ? इस सवाल का उत्तर देते हुए लेनिन ने उस देश की, जहां समाजवाद विजयी हो चुका हो, साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष की पथ-प्रदर्शनकारी भूमिका का विचार पेश किया था।

सोवियत संघ, जिसका निर्माण तथा नेतृत्व लेनिन ने किया था, जब संसार का एकमात्र समाजवादी राज्य था उस समय

वह स्वतंत्रता के लिए उठ खड़े होने वाले पूर्वी देशों के जनगण को बहुमुखी बिरादराना सहायता देने के लिए आगे बढ़ा था। सोवियतों के किशोर देश में जो अनगिनत आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहा था और आक्रामकों से घिरा था, साम्राज्यवाद से टक्कर लेने में चीन, तुर्की, अफगानिस्तान तथा मंगोलिया को यथाशक्ति सहायता देना अपना कर्तव्य समझता था। सोवियत रूस ने धन, खाद्यपदार्थ तथा हथियार दिये। सोवियत संघ द्वारा प्रदान नैतिक, राजनीतिक तथा राजनयिक समर्थन का भी बहुत बड़ा महत्व था।

कई देशों में समाजवादी क्रान्ति की विजय ने विश्व समाजवादी प्रणाली का, पूरे विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन के लिए एक दुर्ग, का निर्माण किया।

यह कोई संयोग की बात नहीं थी कि साम्राज्यवादी औपनिवेशिक प्रणाली का विघटन उस समय चरम बिन्दु पर पहुंचा जब सोवियत संघ ने अपनी ताकत बढ़ा ली, जब अन्य समाजवादी राज्यों का जन्म हो गया तथा अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर शक्ति सन्तुलन क्रान्तिकारी रूप में बदल गया। समाजवादी राज्य आर्थिक तथा सांस्कृतिक निर्माण कार्य के बारे में अपना अनुभव विकासमान देशों को उदारतापूर्वक प्रदान करते हैं। विकासमान देशों में सोवियत संघ की सहायता से सैकड़ों औद्योगिक, विद्युत और अनुसंधानकारी परियोजनाओं का या तो निर्माण हो चुका है या निर्माण हो रहा

है। अकेला सोवियत संघ एशिया में ३५० किस्म से अधिक तथा अफ्रीका में लगभग २५० किस्म के उद्यमों के निर्माण में हाथ बँटा रहा है। सोवियत संघ ने इन देशों को ऋण के रूप में लगभग ४ अरब रूबल दिये हैं। लगभग ८० प्रतिशत सोवियत सहायता उद्योग, परिवहन और संचार के विकास-कार्यों में इस्तेमाल की जाती है। दूसरे शब्दों में उसका उपयोग औपनिवेशिक अतीत से विरासत में प्राप्त आर्थिक पिछड़ेपन का अन्त करने के लिए होता है। सोवियत संघ ने विकासमान देशों में लौह तथा अलौह धातु-कर्म के ३० संयंत्रों तथा खानों, इजीनियरी और धातु-कर्म के ४५ उद्यमों, ३० बिजली घरों, २० रासायनिक तथा तेल शोधक संयंत्रों, हल्के तथा खाद्य उद्योग के ८० उद्यमों, और ६० अनुसंधान व प्रशिक्षण प्रतिष्ठानों के निर्माण के लिए ऋण, साज-सामान तथा विशेषज्ञ दिये हैं।

विश्व समाजवाद की आर्थिक तथा सांस्कृतिक उपलब्धियों का अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर जबर्दस्त प्रभाव है। उसकी सफलताओं के बिना विश्व-रंग-मंच पर शक्ति-संतुलन समाजवाद के पक्ष में न होता और इनके अभाव में समाजवाद के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों व क्रान्तिकारी तथा मुक्ति संग्राम पर सशक्त ठोस प्रभाव डालने की सम्भावना पैदा न होती। साम्राज्यवाद को पीछे धकेलने, जनगण की क्रान्तिकारी तथा राष्ट्रीय उपलब्धियों की रक्षा करने की विश्व क्रान्तिकारी क्षमता समाजवादी देशों के आर्थिक विकास के स्तर पर अवलम्बित है।

समाजवाद की विश्व प्रणाली पूंजीवादी देशों के वर्ग तथा क्रान्तिकारी संघर्ष की गति तेज़ करने वाले शक्तिशाली साधन का काम देती है। अक्तूबर क्रान्ति की ५० वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा प्रकाशित थीसिसों ने इस बात पर जोर दिया कि हमारे युग में किसी भी देश का मज़दूर वर्ग अपने क्रान्तिकारी संघर्ष में मज़दूरों के आन्दोलन के विजयी दस्तों और समाजवादी देशों के मेहनतकश जनों के समर्थन पर भरोसा कर सकता है, वह समाजवादी देशों, खासकर सोवियत संघ के, जिसकी महती उपलब्धियां मेहनतकश जनता और उसके क्रान्तिकारी अग्रदूत को सहायता देती हैं, अनुभव से लाभान्वित हो सकता है।

विश्व समाजवाद की बढ़ती हुई आर्थिक तथा सैनिक शक्ति राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के विकास पर निरन्तर बढ़ता हुआ प्रभाव डालती है। हमारे युग में एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के स्वातंत्र्य-सेनानी इस बात से परिचित हैं कि यदि विश्व समाजवादी समुदाय न होता तो राष्ट्रीय मुक्ति की शक्तियां राजकीय प्रभुसत्ता प्राप्त करने व उसे नव-उपनिवेशवाद के आक्रमणों से बचाने तथा आर्थिक स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए कार्यक्रम आरम्भ करने में असमर्थ रहतीं। समाजवादी व्यवस्था की मौजूदगी ही विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया पर सशक्त प्रभाव डालती है। विजयी समाजवादी देशों का उदाहरण लोगों को यह दिखाता है कि साम्राज्यवाद अजेय नहीं है, कि समाजवादी समाज कोरा सपना नहीं, वरन् वास्तविक और प्राप्त

हो सकने वाला लक्ष्य है। यही कारण है कि समाजवाद के विचार संसार भर के करोड़ों लोगों के दिमाग पर छाते जा रहे हैं।

विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन में समाजवादी प्रणाली की अग्रणी भूमिका साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष की अन्य धाराओं-विश्व-मज़दूर वर्ग तथा राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों द्वारा अदा की जाने वाली भूमिका के महत्व को किसी भी तरह नहीं घटाती। उन्नत पूंजीवादी देशों में जो मज़दूर वर्ग है, वह सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय श्रम शक्ति का करीब आधा भाग है। इनमें से अधिकाँश देशों के मज़दूरों में पर्याप्त वर्ग चेतना है, उनकी परम्पराएं संघर्षशील तथा दीर्घकालीन हैं और उनकी पार्टियां वर्ग-संघर्षों की अग्निदीक्षा में तप-मंज चुकी हैं। ग़ैर-समाजवादी संसार के कम्युनिस्टों का आधे से ज्यादा भाग इन देशों में रहता है तथा संघर्षरत है।

औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों का, जहां साम्राज्यवाद के भौतिक, सैनिक तथा राजनीति संसाधनों का अधिकांश भाग केन्द्रित है, मज़दूर वर्ग विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया में क्या भूमिका अदा करता है? अन्य साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों के साथ मिलकर वह साम्राज्यवाद के किले में ही बैठकर उसकी स्थितियों को धीरे-धीरे ध्वस्त कर रहा है।

यहां दिये जा रहे आंकड़े पूंजीवादी देशों में मजदूरों द्वारा चलाये जा रहे वर्ग संघर्ष की वर्तमान परिस्थितियों में असीम महत्व

की पुष्टि करते हैं। १६४६-६६ के युद्धोत्तरकाल में २५ करोड़ ६१ लाख मज़दूरों ने हड़तालों में भाग लिया। यह संख्या द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्ववर्ती २० वर्षों की तुलना में ३.५ गुना ज़्यादा है। फ्रांस, इटली, ब्रिटेन, जापान तथा अमरीका में हाल में बहुत बड़े पैमाने पर हड़तालें हुई हैं।

लेकिन पूंजीवादी देशों में हड़ताल-आन्दोलन को बहुत महत्व देते थे। उन्होंने कहा, इसलिए हड़तालें मज़दूरों को एक होना सिखलाती हैं; वे उन्हें बताती हैं कि पूंजीपतियों के खिलाफ वे तभी संघर्ष कर सकते हैं जब ऐक्यबद्ध हों; हड़तालें मज़दूरों को कारखाना-मालिकों के पूरे वर्ग और स्वेच्छाकारी पुलिस-सरकार के खिलाफ सम्पूर्ण मज़दूर वर्ग के संघर्ष की बात सोचना सिखाती हैं। यही कारण है कि समाजवादी हड़तालों को "युद्ध काविद्यालय" कहते हैं जिसमें मज़दूर सरकारी अधिकारियों के जुए से और पूंजी के जुए से पूरी जनता और श्रम करने वाले तमाम लोगों की मुक्ति के हेतु अपने शत्रुओं के ख़िलाफ लड़ना सीख़ते हैं।"*

लेनिन आम साम्राज्यवाद, विरोधी संघर्ष के अंग के रूप में राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन को बहुत महत्व देते थे। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया केवल इस शर्त पर विकसित हो सकती है कि वह उन्नत देशों में बुर्जुआ वर्ग के ख़िलाफ़

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ४, पृष्ठ ३१७।

सर्वहारा द्वारा चलाये जाने वाले गृह युद्ध को तथा अविकसित, पिछड़े हुए, उत्पीड़ित राष्ट्रों में पूरे के पूरे जनवादी और क्रान्तिकारी आन्दोलन के जिनमें राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन शामिल है, अंग के रूप में मिला दे।* आधुनिक युग में साम्राज्यवाद की औपनिवेशिक प्रणाली तीन क्रान्तिकारी धाराओं के आघात के कारण धाराशायी हो गयी। भूतपूर्व उपनिवेशों तथा अर्द्ध-उपनिवेशों की जगह ७० से ज़्यादा नये सार्वभौम राज्यों ने जन्म लिया। संसार की आबादी का ६८ प्रतिशत भाग १९१७ की अक्तूबर क्रान्ति से पहले औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों में रहता था, पर अब यह घट कर केवल एक प्रतिशत रह गया है। विश्व के औपनिवेशिक क्षेत्र जो पहले ७४ प्रतिशत थे अब इन ५० वर्षों के दौरान घटकर कोई चार प्रतिशत रह गये हैं। पुर्तगाली, स्पेनी, अमरीकी, ब्रिटिश तथा अन्य उपनिवेशवादियों को निस्संदेह देर-सवेर बचे खुचे उपनिवशों से हटना पड़ेगा।

एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के जनगण के राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष ने प्रत्यक्ष साम्राज्यवादी प्रभुत्व के क्षेत्र को बहुत अधिक संकुचित कर दिया है। उसने उत्पीड़ित जनगण द्वारा पहले उन पर किये जाने वाले ख़िराज से साम्राज्यवाद को वंचित कर दिया है। साम्राज्यवाद एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका में जन-शक्ति के साधनों तथा इलाकों के अधिकांश भाग से, जिनका वह

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २३, पृष्ठ ६०।

पहले से अपने दक्षतापूर्ण मन्सूबे की प्राप्ति के लिए इस्तेमाल करता था, हाथ धो बैठा है।

दूसरी ओर युद्धोत्तर वर्षों में उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों के अन्दर राष्ट्रीय मुक्तिकामी शक्तियों द्वारा किये गये प्रचण्ड आघातों ने पूंजीवादी देशों के अन्दर मज़दूर वर्ग के अधिकारों के लिए संघर्ष को बहुत सुगम बना दिया है।

अफ्रीकी-एशियाई देशों के एक समूह ने (संयुक्त अरब गण-राज्य, बर्मा अल्जीरिया तथा दूसरे देशों ने) विकास का जो ग़ैर-पूंजीवादी मार्ग चुना है उसने जनगण की विश्व व्यापी साम्राज्यवाद विरोधी एकता को मजबूत बनाने के कार्य में बहुत बड़ा योग दिया है। इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के अन्दर ऐसे उन्नत प्रदेश प्रकट हुए हैं जिन्होंने गहन क्रान्तिकारी परिवर्तन किये हैं और जो समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर आन्दोलन के साथ अपने मोर्चे का विस्तार तथा दृढ़ीकरण कर रहे हैं। यही वह दिशा है जिसके अनुसार इस समय संयुक्त अरब गणराज्य के अरब समाज-वादी संघ, अल्जीरियाई राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चे, बर्मी समाजवादी कार्य-क्रम पार्टी तथा समाजवादी देशों की पार्टियों और अन्तर्राष्ट्रीय मज़-दूर वर्ग के क्रान्तिकारी आन्दोलन के बीच सम्बन्ध विकसित हो रहे हैं। यद्यपि साम्राज्यवाद से टक्कर लेने वाले लोगों ने पिछले वर्षों के दौरान विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की मुख्य धाराओं को एक दूसरे से मिलाने के क्रम में काफी प्रगति की है, फिर भी उन्हें अभी काफी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। साम्राज्यवाद

के बुनियादी रणनीति सम्बन्धी उद्देश्यों में से एक है राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन और विश्व समाजवाद के सम्बन्ध को ध्वस्त करना अथवा कम से कम उसे कमज़ोर बनाना। साम्राज्यवादी राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन को समाजवादी राज्यों तथा उन्नत पूंजीवादी देशों के मज़दूर वर्ग के प्रभाव से अलग-थलग करने और नव-स्वतंत्र राष्ट्रों को संसार में नई स्थिति प्रदान किये जाने वाले अकूत लाभों से वंचित रखने का प्रयास कर रहे हैं।

जहां तक साम्राज्यवादियों का सम्बन्ध है, उनकी नीति समझ में आ सकती है। फिर भी, अपने को मार्क्सवादी कहने वाले कुछ लोग थोड़े समय से इसी तरह की हरकतें कर रहे हैं जिस तरह की हरकत साम्राज्यवादी करते हैं। विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की मुख्य धाराओं द्वारा एक दूसरे पर डाले जाने वाले प्रभाव के विषय में लेनिन की शिक्षा के सर्वथा विपरीत पेकिंग में इस आशय का एक सिद्धान्त गढ़ा गया है कि मुक्ति क्रान्तियों की नस्ली अथवा राष्ट्रीय विशिष्टता' होती है। इन मुक्ति क्रान्तियों के बारे में दावा किया गया है कि वे "क्रान्ति का बुनियादी क्षेत्र" और "साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष का" ऐसा "मुख्य अखाड़ा" बन गये हैं जिनमें "विश्व नगर को घेरने", अर्थात अकेले ही साम्राज्यवाद को घेरने और उसके प्रभुत्व को समाप्त करने की क्षमता मौजूद है।

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन को विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन से भिड़ाने की लेनिनवाद-विरोधी स्वरूप सुस्पष्ट है। असलियत यह है कि माओवादियों ने साम्राज्यवादी प्रतिक्रियावाद के बुनियादी कार्यों

का, विश्व समाजवाद एवं अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा आन्दोलन के साथ राष्ट्रीय मुक्ति शक्तियों की एकता को निर्बल बनाने तथा नष्ट करने का बीड़ा उठा लिया है।

परन्तु उपनिवेशवाद विरोधी क्रान्तियों का पूरा इतिहास सिद्ध करता है कि मुक्ति संग्राम के राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय कार्य अविभाज्य हैं। यह अविभाज्य पारस्परिक सम्बन्ध समग्र रूप से विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया की सफलता की गारंटी है।

विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की तीन धाराओं की ऐक्यबद्धता अन्तर्राष्ट्रीय घटना-क्रम के तमाम मसलों पर दृष्टिकोण में पूर्ण साम्य का कतई तकाजा नहीं करती। माओ-त्से-तुंग गुट जिस कठमुल्लावादी रुख़ पर ज़ोर देता है, उसमें और लेनिन के क्रान्ति के सिद्धान्त में कुछ भी समान नहीं है। लेनिन ने बार-बार इस चीज़ पर ज़ोर दिया कि जब तक देशों तथा राष्ट्रों के बीच राष्ट्रीय तथा राज्य विभेद बने रहेंगे, तब तक विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की एकता को बढ़ावा देने के लिए इन अन्तरों को ध्यान में रखना चाहिए। इसे दृष्टिगत रखकर लेनिन ने क्रान्तिकारियों के लिए यह कार्य मौलिक महत्व का माना कि वे 'जो कुछ राष्ट्रीय दृष्टि से विशिष्ट तथा राष्ट्रीय दृष्टि से स्पष्टकारी है, उसका वे **ऐसे ठोस ढंग से** पता लगायें, छानबीन करें तथा आत्मसात करें जिससे हर एक देश **एक पूरे** अन्तर्राष्ट्रीय कार्य को हल कर सके।''*

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ६२।

मार्क्सवादी मज़दूर वर्ग पार्टी तथा उपनिवेश विरोधी संघर्ष में उसकी भूमिका के बारे में लेनिन के सिद्धान्त

लेनिन ने कहा था "मार्क्स के सिद्धान्त में मुख्य बात यह है कि वह सर्वहारा की ऐतिहासिक भूमिका को सामने लाती है।" मार्क्स-वाद ने यह सिद्ध किया कि मजदूर वर्ग अपनी स्थिति के कारण ऐसी सामाजिक शक्ति है जो मानव समाज का समाजवादी ढर्रे पर काया-पलट करने की शक्ति रखती है। बड़े पैमाने के उद्योग का विकास, जो भौतिक और टेकनालाजिकल उन्नति का आधार हुआ करता है, संसार की आबादी में मजदूरों की संख्या तथा अनुपात में तीव्रगति से वृद्धि करता है और सामाजिक जीवन में उनकी भूमिका बढ़ाता है। यह मजदूर वर्ग ही है जो उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व की, जिससे उत्पादन शक्तियों का विकास अवरुद्ध होता है, सम्पत्ति में और उसके स्थान पर सार्वजनिक स्वामित्व की स्थापना में दिलचस्पी रखता है। केवल सार्वजनिक स्वामित्व ही और आगे उन्नति सुनि-श्चित करता है।

जैसा कि ऐतिहासिक अनुभव बताता है, मज़दूर वर्ग हमारे युग का सबसे क्रान्तिकारी वर्ग है। इसकी वजह से उसकी आर्थिक स्थिति ही नहीं अपितु मजदूरों के रहन-सहन तथा काम-काज की वे अवस्थाएं भी हैं जो सामूहिकता की भावना, उच्च संगठन, अनु-

शासन, ऐक्यबद्धता, पारस्परिक सहायता तथा समर्थन एवं ज्ञानपिपासा को जन्म देती हैं।

मजदूर वर्ग और मेहनतकश जनों के हितों का साम्य, मानव-जाति की अग्रगति के लिए हर एक की उत्कण्ठा, ये दो चीजें मजदूर वर्ग को विशेष शक्ति प्रदान करती हैं। जब पूंजीवादी इजारेदारियां सर्वशक्तिशाली बन जाती हैं, तब साम्राज्यवादी समाज के अति व्यापक भागों पर असहनीय बोझ डालते हैं। और साम्राज्यवाद का विरोध करने वाले अन्तिम लक्ष्य के प्रति उनका मानसिक दृष्टिकोण कुछ भी क्यों न हो सर्वहारा के वस्तुनिष्ठ साथी बन जाते हैं। साम्राज्यवादी इजारेदारियों के खिलाफ और राष्ट्रीय स्वतंत्रता, जनवाद तथा शान्ति के लिए संघर्ष के समान हित मज़दूर वर्ग और दूसरी साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों की कार्यवाई सम्बन्धी एकता के दृढ़ आधार का निर्माण करते हैं। उधर वर्ग सचेत मजदूर अनुभव करते हैं कि वे सभी प्रकार के शोषण तथा उत्पीड़न से मुक्त समाज के निर्माण के द्वारा ही अपने को मुक्त कर सकते हैं। लेनिन ने मजदूर वर्ग के बारे में लिखा था, "समकालीन समाज के एक मात्र अडिग क्रान्तिकारी वर्ग के नाते उसे पूरी तरह जनवादी क्रान्ति के लिए पूरी जनता के संघर्ष में अत्याचारियों तथा शोषकों के ख़िलाफ़ समस्त मेहनतकश जनों और शोषितों के संघर्ष में नेता होना चाहिए।"*

शोषक वर्ग स्वतंत्रता के लिए तथा सामाजिक एवं राष्ट्रीय उत्पीड़न के विरुद्ध लड़ने वाली मेहनतकश जनता के खिलाफ सेना,

* व्ला०लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १७, पृष्ठ २३१-२३२।

पुलिस तथा अदालतों का उपयोग करते हैं। संघर्ष करने के मेहनतकश जनता के संकल्प को कुचलने के लिए शोषक वर्ग पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो तथा शिक्षा-प्रणाली का भी उपयोग करते हैं। देशी-विदेशी शोषकों के खिलाफ संघर्ष करने के लिए मेहनतकश जनता और समस्त कृषक समुदाय के पास क्या कोई कारगर हथियार होता है ? लेनिन ने कहा कि सत्ता के लिए, उज्जवल भविष्य के लिए होने वाले संघर्ष में सर्वहारा के पास संगठन के अलावा और कोई दूसरा हथियार नहीं है। यदि मार्क्सवाद के विचार तथा एकताबद्ध संघर्षशील एवं सुसंगठित पार्टी मेहनतकश जनता को समाजवाद के झंडे के नीचे ऐक्यबद्ध करे तो सर्वहारा अजेय शक्ति बन सकता है और ऐसा वह अवश्यम्भावी रूप में बनेगा।

लेनिन ने कहा था कि अपनी पार्टी के बिना जनसाधारण बिखरे हुए, असंगठित होते हैं और लगातार अडिग रूप में तथा संगठित ढंग से संघर्ष करने में असमर्थ रहते हैं। लेनिन ने आगे कहा, "एक निश्चित वर्ग के व्यापक भाग को अपने हित तथा अपनी स्थिति समझने और अपनी नीति का संचालन करना सीखने में सक्षम बनाने के लिए वर्ग के उन्नत भागों का तत्काल और किसी भी कीमत पर एक संगठन होना चाहिए, भले ही आरम्भ में ये तत्व वर्ग का अत्यल्प अंश ही हों।"*

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १६, पृष्ठ १७०६।

फिर भी इतना ही काफी नहीं है कि मज़दूर वर्ग अपने पास अपनी स्वतंत्र पार्टी के होने की आवश्यकता अनुभव करे। बहुत महत्वपूर्ण वस्तु तो सीधे-सीधे यह है कि यह किस तरह की पार्टी होगी। हर एक राजनीतिक पार्टी जो मज़दूर वर्ग का नेतृत्व करने का दावा करती है, पार्टी की भूमिका अदा नहीं कर सकती। लेनिन ने कहा था कि अपने को हिरावल कहना काफी नहीं है, "हमें इस तरह काम करना होगा कि तमाम अन्य दस्ते यह स्वीकार करें तथा स्वीकार करने के लिए बाध्य हों कि हम सबके आगे चल रहे हैं।"*

ऐतिहासिक अनुभव का लेखा लेते हुए लेनिन ने सिद्ध किया कि मजदूरों के आन्दोलन और मुक्ति आन्दोलन में अग्रणीय भूमिका न तो जनसाधारण से अलग-थलग पड़े षड़यंत्रकारी समूह और न वे बेढंगे संगठन ही अदा कर सकते हैं जो अपनी पाँतों में उन लोगों को आने देते हैं तथा जो मेहनतकश जनता के लिए अजनबी राय और विचार प्रकट किया करते हैं। राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के नेताओं में (उदाहरण के लिए लैटिन अमरीका में) ऐसे लोग हैं जो पार्टी को अनावश्वक मानते हैं। उनकी राय यह है कि कोई भी छापामार दस्ता चाहे वह किसानों का हो, या अन्य सामाजिक समूहों के प्रतिनिधियों का, पार्टी के बदले ऐसा केन्द्र बनने की क्षमता रखता है जो

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ५, पृष्ठ ४२६।

साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों में राजनीतिक एकता ला सकता है। लेनिन के अनुसार मज़दूर वर्ग अपने ऐतिहासिक मिशन की केवल इसी शर्त पर पूर्ति कर सकता है जब उसका नेतृत्व कड़ाई के साथ वर्ग-अभिमुख और साथ ही ऐसी जन पार्टी करती हो जिसकी मज़दूर वर्ग और सारे मेहनतकश जनगण मे गहरी जड़ें हों।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि मार्क्सवादी पार्टी का अर्थ मज़दूर वर्ग, समस्त मेहनतकश जनों की मुक्ति के लिए, समाज के मौलिक कायाकल्प के लिए सामाजिक दृष्टि से सबसे सचेत लोगों का संघ है। यह स्वैच्छिक संघ और उसके सदस्य उसमें इसलिए ऐक्यबद्ध नहीं हुआ करते कि वे इसके लिए विवश होते हैं बल्कि इसलिए कि यह चीज़ उनकी आस्थाओं एवं राजनीतिक दृष्टिकोण से मेल खाती है। उनके दृष्टिकोण की राजनीतिक आधारशिला मार्क्सवाद-लेनिनवाद है तथा उनका लक्ष्य कंम्युनिस्ट समाज का निर्माण करना है।

परन्तु विचारधारात्मक एकता हासिल हो चुकने के बाद संगठनात्मक एकता की समस्या पैदा होती है। अनुभव सिद्ध करता है कि कोई संघर्ष तभी सफल हो सकता है जब उसे एकता की परिधि के अन्दर रहकर संचालित किया जाये। यही कारण है कि मार्क्सवादी संगठन को इतना महत्व देते हैं।

मज़दूर वर्ग की मार्क्सवादी पार्टी के संगठनात्मक सिद्धान्त क्या हैं?

क्रांतिकारी संघर्ष का सफलतापूर्वक नेतृत्व कर सकने के लिए पार्टी को मज़दूर वर्ग की अगली कतार में होना चाहिए तथा उसे मेहनतकश जनता के बहुमत का नेतृत्व कर सकने में सक्षम होना चाहिए। अग्रणी इकाई होने के कारण वह सामाजिक दृष्टि से सबसे सचेत तथा अनुभवी लोगों की पार्टी हुआ करती है। पार्टी की जनसाधारण में गहरी जड़ें होनी चाहिए। यही वजह है कि पार्टी मज़दूरों के साथ-साथ कृषक समुदाय तथा आबादी के अन्य भागों के सर्वोत्तम प्रतिनिधियों को अपनी कतारों में आकृष्ट करती है। शर्त केवल यही होती है कि ये प्रतिनिधि निम्न मध्यम वर्गीय (पेटी बुर्जुआ) विचारों के भार से मुक्त हों, मज़दूर वर्ग के दृष्टिकोण से सहमत हों तथा मेहनतकश जनता के हितार्थ क्रान्तिकारी संघर्ष के दौरान सामने आने वाली मुसीबतें झलने के लिए तैयार हों।

मज़दूर वर्ग की सचेत हिरावल के रूप में पार्टी की शक्ति इस चीज़ में निहित होती हैं कि वह उन्नत क्रान्तिकारी सिद्धान्त मार्क्सवाद-लेनिनवाद से लैस हुआ करती है, जो अन्तर्राष्ट्रीय है। केवल दक्षिणपंथी तथा वामपंथी अवसरवादी या कम्युनिस्ट विरोधी ही लेनिनवाद को ऐसे विशुद्ध रूसी घटना-तत्व के रूप में पेश करने की कोशिश करते हैं जो यूरोप या एशिया में सम्भव नहीं हो सकता। अनुभव बहुत पहले ही इस चीज को गलत साबित कर चुका है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद इस कारण से दृढ़ शक्ति है, क्योंकि वह उन आम नियमों को जो समस्त देशों के लिए समान है, तथा साथ ही हर देश की ख़ास विशेषताओं को ठोस एतिहासिक आवश्यकताओं

का लेखा लेते हुए ध्यान में रखता है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद स्थिति विशेष का सही-सही मूल्यांकन करना तथा क्रान्तिकारी आन्दोलन को अपेक्षित दिशा की ओर मोड़ना सम्भव बनाता है; सामाजिक घटना तत्व की बेहतर समझदारी हासिल करने में मदद देता है; और घटनाओं के बारे में पहले ही भविष्यवाणी करना सम्भव बनाता है। फिर यह चीज़ पार्टी के लिये सही-सही वैज्ञानिक आधार पर निरूपित नीति तथा कार्य नीति तैयार करना सम्भव बनाती है। यही वजह है कि लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि ' ऐसे क्रान्तिकारी सिद्धान्त के बिना कोई मजबूत समाजवादी पार्टी नहीं हो सकती जो तमाम समाजवादियों को सम्बद्ध करती हो, जिससे वे अपनी तमाम आस्थाएं प्राप्त करते हों और जिसे वे संघर्ष की अपनी विधियों तथा कार्य-एकता के मामले में लागू करते हों।''*

कम्युनिस्ट पार्टी यदि मज़दूर वर्ग की संगठित इकाई नहीं होगी, तो वह हिरावल की अपनी भूमिका पूरी नहीं कर सकती। पार्टी अपगे सदस्यों का कार्य इस ढंग से निर्देशित करती है कि वे सब मिल-जुल कर, संयुक्त रूप में तथा एक ही ध्येय-सिद्धि के लिए काम करते हैं। यही वजह है कि उसे ऐसी संगठित शक्ति होना चाहिए जो संकल्प तथा कार्य की एकता और केवल एक ऐसे पार्टी-अनुशासन की आग में तप कर ढ़ली हुई हो, जो आम कार्यकर्ता से लेकर नेतृत्व के समूह तक, सब सदस्यों के लिए लाजिमी हो।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ४, पृष्ठ २११।

संगठन का महत्व बताते हुए लेनिन ने कहा था कि "पार्टी वर्ग का राजनीतिक दृष्टि से सचेत, अग्रणी भाग है, वह उसका हिरावल है। इस हिरावल की ताकत उसकी संख्या की दस गुनी, सौगुनी से ज्यादा है। क्या यह सम्भव है ? क्या सैंकड़ों की ताकत हज़ारों की ताकत से ज़्यादा हो सकती है ? जब सैकड़ों सगठित हों तो यह हो सकता है और है ? संगठन शक्ति को दस गुना बढ़ाता है।"*

पार्टी का निर्माण जनवादी केन्द्रावाद के ढंग पर किया जाता है ताकि उसके तमाम सदस्य तथा घटक मिलकर काम करें, एक ही दिशा में बढ़ें तथा एक ही लक्ष्य-सिद्धि की कामना करें। इसका अर्थ है : अल्पसंख्या का बहुमत के, निम्न-निकायों का उच्च-निकायों के मातहत होना; केवल एक पार्टी-अनुशासन, पार्टी के शीर्ष स्थान पर केवल एक केन्द्र, नीचे से लेकर ऊपर तक तमाम निकायों का निर्वाचित होना तथा पार्टी-सदस्यों के प्रति उनकी जवाबदेही और प्रत्येक पार्टी सदस्य को बैठकों तथा पार्टी के समाचारपत्र में नेताओं समेत किसी अन्य पार्टी सदस्य की आलोचना करने का अधिकार। जनवादी-केन्द्रावाद संघर्षशील तथा एकताबद्ध संगठन के रूप में पार्टी के लिए समर्थन प्राप्ति हेतु पूरे मज़दूर वर्ग पर भाषाओं या क़ौमियत के बीच कोई भेद किये बिना आश्रृत होना सम्भव बनाता है। जनवादी-केन्द्रावाद तमाम मजदूरों के लिए उनकी क़ौमी विशेषताएं

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १६ पृष्ठ ४०६।

चाहे कुछ भी हों, एक समान वर्ग-ध्येय निर्धारित करना सम्भव बनाता है। सर्वहारा को क़ौमी विशेषताओं के अनुसार विभाजित करने तथा भिन्न-भिन्न कौमों के सर्वहारा के लिए भिन्न-भिन्न समस्याएं और लक्ष्य पेश करने का अर्थ संकीर्ण राष्ट्रवाद की सहायता करना तथा साम्राज्यवादियों के खिलाफ मज़दूर वर्ग के संघर्ष के मोर्चे को कमज़ोर बनाना है।

मेहनतकश जनता के अन्य संगठनों के साथ अपने सम्बन्धों के प्रश्न को सही ढंग से सुलझाना कम्युनिस्ट पार्टी के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। पार्टी के अलावा मजदूर वर्ग की ट्रेडयूनियनें होती है। नौजवान विविध युवा-संगठनों में शामिल होते हैं। मेहनतकश जनता के भी अपने संगठन हुआ करते हैं, जैसे मज़दूरों के सहकारी संघ, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक संस्थाएं आदि। लेनिन यह मानते थे कि ये संगठन मजदूर वर्ग के संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं परन्तु इस संघर्ष को सम्बद्ध करने तथा निर्देशित करने की क्षमता केवल पार्टी में ही होती है। पार्टी राजनीतिक संगठन का सार्वोच्च रूप है और उससे पूरे क्रान्तिकारी आन्दोलन और मेहनतकश जनता के तमाम ग़ैर-पार्टी संगठनों के नेतृत्व का तक़ाज़ा किया जाता है।

यह नेतृत्व विशुद्ध औपचारिक ढंग से नहीं किया जाता। पार्टी ग़ैर-पार्टी संगठनों में अपने सदस्यों के जरिए, जो उनमें काम करते हैं, प्रभाव हासिल करती है।

पार्टी के मामले में 'तटस्थ' रहने के लिए ट्रेड यूनियनों तथा अन्य जन संगठनों से किये जाने वाले आह्वानों के फलस्वरूप मजदूर आन्दोलन अलग-अलग इकाइयों में बंट जाता है जो असमन्वयित ढंग से काम करती हैं। मज़दूर वर्ग के संगठनों का नेतृत्व करती हुई पार्टी उनकी गतिविधियों को मुख्य दिशा देती है जो क्रान्तिकारी संघर्ष की आम लाइन के अनुरूप होती है। पार्टी न तो इन संगठनों पर अपनी इच्छा लादती है और न उनसे स्थान लेने की कोशिश करती है।

मज़दूर वर्ग की मार्क्सवादी पार्टी की मुख्य शक्ति इस चीज में निहित होती है कि वह व्यक्तियों की पार्टी नहीं, वरन् वह व्यापक जनसाधारण का प्रतिनिधित्व करती है। मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के लिए पार्टी कभी ऐसा संगठन नहीं हुआ करती जो अपने को जनसाधारण के ऊपर रखे। उन्हें तो सदैव इस बात की फ़िक्र रहती है कि जनसाधारण के साथ अपने सम्बन्ध किस तरह मजबूत बनाये जायें और किस तरह उन्हें कई गुना बढ़ाया जाय।

पिछली शताब्दी के अन्त में जब रूस में मार्क्सवादी मज़दूर पार्टी का निर्माण किया जा रहा था, तब कतिपय क्रान्तिकारी नेताओं ने मज़दूरों के केवल आर्थिक संघर्षों को ही मान्यता दी और दावा किया कि ग़ैर-पार्टी वाले आम लोग नेतृत्व के बिना स्वयंमेव काम कर सकते हैं जबकि पार्टी का काम विभिन्न स्वतः स्फूर्ति घटनाएं अंकित करना मात्र है। लेनिन ने इन विचारों के

ख़िलाफ़ खूब डटकर संघर्ष किया। उन्होंने कम्युनिस्टों को सर्वत्र जनसाधारण के साथ काम करने के लिए ललकारा।

पार्टी तभी प्रभावपूर्ण तथा अधिकार सम्पन्न होती है जब उसके सदस्य मज़दूर वर्ग और पूरी मेहनतकश जनता के जीवन से जुड़े हुए हों। सिर्फ़ इसी अवस्था में वह मजबूत बन सकती है। लेनिन ने इस चीज़ पर ख़ास ज़ोर दिया था। उन्होंने कहा था, "यदि अल्पसंख्या जनसाधारण का नेतृत्व करने तथा उनके साथ घनिष्ट सम्पर्क क़ायम करने में असमर्थ है तो वह भले ही अपने को पार्टी कहे वह पार्टी नहीं है, और आमतौर से निकम्मी है।"*

लेनिन ने सिखाया था कि पार्टी की शक्ति और अजेयता एकता तथा ऐक्यबद्धता में और अपनी कतारों को अवसरवादियों से मुक्त रखने में निहित है। पार्टी की एकता का अर्थ यह है कि उसके तमाम सदस्य तथा संगठन विचारधारा, कार्यनीति तथा संगठन संबंधी मामलों में एक ही लाइन का अनुसरण करें। यह चीज इस बात की द्योतक है कि यदि पार्टी-कतारों में शामिल सदस्य ऐसे तो सिद्धान्तों का खुले रूप में विरोध करते हों अथवा उनसे केवल मौखिक रूप में सहमति रखते हों परन्तु व्यवहार में उनसे विपरीत ढंग से काम करते हों तो एकता का इससे कोई मेल नहीं हो सकता। कम्युनिस्ट यद्यपि लचकदार नीति का अनुसरण करते हैं, फिर भी सिद्धान्त के

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१ पृष्ठ २३८।

प्रश्नों पर वे विचारधारा के अपने दुश्मनों के साथ कोई रियायत नहीं करते। पार्टी समान विचार रखने वाले लोगों का ऐसा संगठन है जो बुनियादी समस्याओं पर—जैसाकि लेनिन ने जोर देकर कहा था—एकता के बिना काम नहीं कर सकती।

ऐसे हैं मज़दूर वर्ग की मार्क्सवादी पार्टी के संगठनात्मक सिद्धान्त जिन्हें लेनिन ने मार्क्स तथा एंगेल्स द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों एवं संसार भर में मज़दूर वर्ग के संघर्षों के ऐतिहासिक अनुभव के आधार पर विकसित किया था। ये सिद्धान्त स्वाभाविक तथा वस्तु-परक हैं। उन्हें मज़दूर वर्ग का ऐतिहासिक मिशन निर्धारित करता है जो लेनिन के शब्दों में ऐसी 'बौद्धिक तथा नैतिक प्रेरक शक्ति"* है जो पूंजीवाद के स्थान पर समाजवाद की स्थापना करने की महान प्रक्रिया को भौतिक दृष्टि से मूर्तरूप देती है।

पार्टी के संगठनात्मक सिद्धान्त मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचार-धारा का अनुगमन करते हैं। वे पार्टी के जो संघर्षशील, क्रान्ति-कारी, एकीकृत तथा स्वतंत्र संगठन है, सारतत्व हैं। ये सिद्धान्त पार्टी की कतारों के दृष्टिकोण का आधार हैं और उसे ऐसे संगठन में बदल देने में सक्षम हैं जो मजदूर वर्ग तथा समस्त मेहनतकश जनता के संघर्ष का पथ-प्रदर्शन करने और उन्हें विजय की ओर ले जाने में सक्षम हैं। लेनिन पार्टी को मज़दूर वर्ग, सारे मेहनतकश-

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां खण्ड २१, पृष्ट ७१।

जनों की मुख्य शक्ति और साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ संघर्ष में उनका मुख्य शस्त्र मानते थे।

तो फिर पार्टी जीवन के ठोस नियम तथा प्रतिमान क्या हैं ?

कम्युनिस्ट पार्टी का एक सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि पार्टी मज़दूर वर्ग की संगठित इकाई है। अवसरवादी इस बुनियादी प्रस्थापना को मौखिक रूप से स्वीकार करते हुए भी व्यवहार में ऐसे तत्व का उसमें समावेश करते हैं जो मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के तत्व से सर्वथा भिन्न होता है। इस शताब्दी के आरम्भ में रूसी अवसरवादियों ने एक ऐसे संगठन की वकालत की थी जो पार्टी सदस्यता तथा ग़ैर-पार्टी दर्जे के बीच कोई स्पष्ट भेद न करे। उन्होंने प्रस्ताव किया कि जो कोई बुद्धिजीवी या हड़ताली पार्टी से हमदर्दी रखता हो, उसे उसकी कतारों में भर्ती कर लिया जाय। पश्चिम यूरोपीय सोशल-डेमो ेटों ने पार्टी के द्वार सबके लिए खुले रखे और आज संशोधनवादी वस्तुतः एक संगठित अस्तित्व के रूप में पार्टी को भंग करने का और उसके स्थान पर 'राजनीतिक कार्यकलाप की संस्था के एक ऐसे संगठन की प्रतिष्ठापना का प्रस्ताव कर रहे हैं जो घनिष्ठ रूप में सूत्रबद्ध, एकीकृत राजनीतिक दस्ता नहीं वरन् प्रायः एक राजनीतिक महासंघ होगा। कुछ देशों के अन्दर राष्ट्रीय मुक्ति के लिए सशस्त्र संघर्ष के व्यवहार में ऐसे दृष्टान्त सामने आये हैं जहां किसी भी छापामार का नाम अपने आप पार्टी सूची में दर्ज कर लिया गया।

लेकिन पार्टी सदस्यता के प्रश्न को अलग ढंग से सुलझाते थे। वह यह मानकर चलते थे कि, "किसी संगठन का सामाजिक स्वरूप तथा उसकी नीति उस संगठन के नेतृत्व, उसकी कार्यनीति तथा क्रिया-कलाप पर ही नहीं वरन् उसकी सदस्यता पर भी निर्भर करती है। यही वजह है कि लेनिन ने इस प्रस्ताव का सुस्पष्ट रूप में विरोध किया कि हमदर्दी रखने वाला हर व्यक्ति पार्टी सदस्यों की सूची में शामिल हो सकता है और पार्टी-संगठन किसी भी प्रार्थी को भर्ती कर सकते हैं। अनुभव ने सिद्ध किया है कि इस तरह के आचरण से दक्षिणपंथी अवसरवादिता तथा वामपंथी किस्म की कई ग़लतियों का जन्म हुआ है। १९३६ की बात है जब चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर कई ऐसी त्रुटियां प्रकाश में आयी थीं जो पार्टी में पेटी बुर्जुआ तथा अन्य ग़ैर-सर्वहारा हलकों के कई प्रतिनिधियों के शामिल होने के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थीं। उन वर्षों की एक दस्तावेज के अनुसार, "यह सर्वथा स्वाभाविक है कि उनमें से कुछ ढुल मुल हो जायं और किसी नाजुक क्षण या पेचीदा स्थिति में और भी बुरा रूप दिखायें।"

पार्टी राहगीरों का जमघट नहीं, बल्कि समान विचार रखने वाले और मिलकर काम करने वाले ऐसे योद्धाओं का स्वैच्छिक संघर्षशील संगठन है जो मजबूती के कारण नहीं, बल्कि अपने हृदय की पुकार पर तथा राजनीतिक चेतना के कारण पार्टी में शामिल हुए हैं। कम्युनिस्ट की उपाधि बहुत बड़ी जिम्मेदारी डालती है और कोई विशेषाधिकार नहीं देती। कम्युनिस्टों को दूसरों की

तुलना में समान ध्येय की सिद्धि में अधिक शारीरिक तथा नैतिक शक्ति लगानी चाहिए और मेहनतकश जनता के हितों के लिए दूसरों से ज्यादा अच्छी तरह लड़ना चाहिए। कम्युनिस्टों के पास विशेषाधिकार नहीं होते। परन्तु यह उनका कर्तव्य है कि जहां स्थिति सबसे विकट हो, वहां वे अवश्य रहें। इस कारण पार्टी संगठन पार्टी में शामिल होने के लिए इच्छुक लोगों से की जाने वाली अपेक्षाओं का स्तर नीचा नहीं कर सकते। पार्टी में किसी भी नये व्यक्ति को शामिल करते समय उन्हें इस ओर बहुत ध्यान देना चाहिए। लेनिन ने एक बार कहा था कि लम्बीचौ-ड़ी हांकने वाले एक को पार्टी में भर्ती करने की बजाय दस को बाहर रखना बेहतर है।

जनवादी केन्द्रवाद सर्वहारा पार्टी का बुनियादी संगठनात्मक सिद्धान्त है। मज़दूर वर्ग की मार्क्सवादी -लेनिनवादी पार्टियां केन्द्रवाद तथा जनवाद को ऐसी चीजें नहीं मानती जो एक दूसरे से अलग-थलग हों, परन्तु मौक़ापरस्त लोग जनवाद को केन्द्रवाद से अलग कर देते हैं तथा पार्टी को वार्ता-क्लब में, ठोस कार्यवाही कर सकने में असमर्थ बेढंगे संगठन में, अथवा ऐसे नौकरशाह और संकीर्णतावादी समूह में परिणत कर डालते हैं जिनके सदस्य सक्रिय, राजनीतिक योद्धा होने के बजाय आज्ञाकारी औज़ार बन जाते हैं। लेनिन ने जनवाद को केन्द्रवाद के विपरीत होने की तीखी आलोचना की थी। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया था कि केन्द्रवाद कम्युनिस्टों तथा पार्टी संगठनों के क्रियाकलाप तथा पहलक़दमी में वृद्धि एवं नीति तैयार करने तथा नये कार्य प्रस्तुत करने के मामले में व्यापक विचार-

विनिमय की पूर्व कल्पना करता है। लेनिन ने लिखा कि कोई सक्रिय राजनीतिक पार्टी आम जनता द्वारा सबसे महत्वपूर्ण प्रश्नों पर अपनी राय ज़ाहिर न किये जाने की स्थिति में काम ही नहीं कर सकती। पार्टी केन्द्रवाद को जनवाद से, अनुशासन की अपने सदस्यों की गतिविधि से तथा तमाम प्रश्नों पर विचार-विमर्श करने और उन्हें निपटाने के कम्युनिस्टों के अधिकार को पार्टी निर्णयों और कार्यान्वित करने के कर्त्तव्य से मिलाती है।

मार्क्सवादी - लेनिनवादी पार्टी जनवादी है क्योंकि उनके सदस्यों द्वारा सुझाये जाने वाले अनगिनत विचारों तथा प्रश्नों के समाधान के बारे में बताये जाने वाले रुख़ों में से पार्टी उन्हें चुनती है जो सबसे अधिक ठोस तथा सबसे ज़्यादा कामकाजी होते हैं। पार्टी इनके आधार पर निष्कर्ष तथा निर्णय तैयार करती है जिन्हें उसके तमाम सदस्य अपने निष्कर्षों तथा निर्णयों के रूप में अंगीकार करते हैं। कभी-कभी समान विचार अनुमोदित होने से पहले गरमागरम बहस होती है। ख़ास मुद्दा यह है कि यह बहस सिद्धान्त के आधार पर होनी चाहिए और व्यक्त की जाने वाली राय रचनात्मक एवं पार्टी को दृढ़ बनाने की उसकी राजनीतिक लाइन तथा कार्यनीति को सुधारने की उत्कण्ठा द्वारा प्रेरित होनी चाहिए।

बहुमत द्वारा निर्णय कर लिये जाने पर हर पार्टी सदस्य को उसे शिरोधार्य करना चाहिए तथा उसका कार्यान्वयन सुनिश्चिय करने

के लिए कुछ भी न उठा रखना चाहिए। यह है पार्टी अनुशासन की अनिवार्य शर्त।

कम्युनिस्टों को लेनिन का यह आदेश स्मरण रखना होगा कि बातचीत के दौरान-विचार "अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की इजाज़त देते समय हम ऐसे विचारों के सक्रिय वकीलों के साथ मिलकर चलने के लिए बाध्य नहीं होते जिन्हें पार्टी का बहुमत ठुकरा देता है।"*

ऐसा नहीं हो सकता कि केन्द्रवाद तो स्वीकार कर लिया जाय तथा जनवाद ठुकरा दिया जाय, जो जनवाद केन्द्रवाद को ठुकराता है उसके कारण संगठनात्मक ढिलाई पैदा होती है, अनुशासन में दरार पड़ती हैं तथा धड़बन्दी पैदा होती है। साथ ही साथ केन्द्रवाद पर अत्यधिक ज़ोर देने तथा जनवाद के अभाव के फलस्वरूप संयुक्त विचार-विमर्श तथा सामहिक नेतृत्व लाज़िमी तौर पर ख़त्म हो जाता है और केवल ऐसी स्थिति रह जाती है जिसमें ऊपर से महज़ आदेश जारी होते रहते हैं।

पार्टी जीवन के प्रतिमानों तथा सिद्धान्तों का सारतत्व तथा प्रभावोत्पादकता उस समय पूरी तरह प्रकाश में आती है जब उन्हें अडिग रूप में अमल में लाया जाता रहे तथा उन्हें अंगागि रूप में मिला दिया जाय। आन्तरिक पार्टी जनवाद का विकास तथा अतः

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १५ पृष्ठ ४०६।

पार्टी-कार्य के स्वरूप का निरन्तर सुधार पार्टी सदस्यों की पहल तथा क्रियाशीलता को उद्दीप्त करते हैं। सामूहिक नेतृत्व तथा आम कार्यकर्ताओं से सम्पर्क ग़लत निर्णय न लिये जाने की गारंटी हैं तथा वे पार्टी संगठन की राजनीतिक लाइन की त्रुटिहीनता और राजनीतिक क्रियाकलाप की सफलता सुनिश्चित करते हैं। आलोचना तथा आत्मालोचना पार्टी के लिए अपने को सही लीक पर रखने के परखे हुए साधन हैं तथा व्यावहारिक ग़लतियों को रोकने की गारंटी हैं। पार्टी जीवन के लेनिनवादी प्रतिमान तथा पार्टी नेतृत्व के सिद्धान्त पार्टी-कतारों को सम्बद्ध करते हैं और उनका संगठन तथा कार्यकुशता बढ़ाते हैं।

जिस प्रकार मार्क्सवाद —लेनिनवाद का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है, उसी प्रकार पार्टी जीवन के लेनिनवाद के प्रतिमान तथा पार्टी ढांचे के लिए संगठनात्मक सिद्धान्त एक देशीय नहीं वरन सार्वत्रिक हैं जो मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के विकास के सबसे महत्वपूर्ण आम नियम प्रतिविम्बित करते हैं। जैसा कि कम्युनिस्ट तथा मज़दूर पार्टियों के १९६० के सम्मेलन के बयान में कहा गया है, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां जनवादी-केन्द्रवाद के सिद्धान्त के अनुरूप पार्टी जीवन के लेनिनवादी प्रतिमानों का दृढ़तापूर्वक पालन करना अपने क्रियाकलाप का अनुल्लंघनीय नियम मानती हैं; वे यह मानती हैं कि उन्हें पार्टी की एकता की रक्षा आंख की पुतली की तरह करनी होगी; पार्टी-जनवाद तथा सामूहिक नेतृत्व के सिद्धान्त का कड़ाई के साथ पालन करना होगा, क्योंकि वे लेनिनवाद के संगठनात्मक सिद्धान्तों

के अनुरूप पार्टी के जीवन में अग्रणी पार्टी-निकायों की भूमिका को बहुत महत्व देती है। उन्हें पार्टी सदस्यों तथा आम मेहनतकश जनता के साथ अपने सम्बन्ध मज़बूत बनाने के लिए अथक रूप में काम करना होगा, उन्हें व्यक्तिपूजा के लिए जो उन्हीं कार्यक्रमों के सृजनशील चिन्तन तथा पहल को जकड़ती है, कोई गुँजाइश नहीं रखनी होगी, उन्हें कम्युनिस्टों के क्रियाकलाप को जोरदार ढ़ंग से बढ़ावा देना होगा और अपनी कतारों में आलोचना तथा आत्म-आलोचना को बढ़वा देना होगा।

व्यावाहरिक अनुभव ने दिखा दिया है कि जहां कहीं पार्टी जीवन के लेनिनवादी प्रतिमानों का उल्लंघन होता है, वहां लेनिनवाद-विरोधी, मार्क्सवाद-विरोधी राजनीति लाने का अनुसरण किया जाता है। इसका एक दृष्टान्त है चीनी कम्युनिस्ट पार्टी।

अपनी नीति तथा कार्यनीति की व्याख्या करने तथा अपनी कार्यवाहियों के मामले में कम्युनिस्ट पार्टियां स्वतंत्र हैं परन्तु वे बिरादराना पार्टियों की एकजुटता के विरोध में खड़े होने में अपनी स्वतंत्रता के दर्शन नहीं करतीं तथा संयुक्त निर्णयों के परिपालन के अपने दायित्व को सदैव याद रखती हैं। अपनी कार्यवाहियों को समन्वयित किये बिना तथा स्वीकृत निर्णयों को मिलकर कार्यान्वित किये बिना कम्युनिस्ट आन्दोलन अपनी उन स्थितियाँ को खो बैंठेगा जिन्हें उसने हासिल की हैं।

मज़दूर वर्ग तथा कृषक समुदाय की एकजुटता के सम्बन्ध में, और निम्न पूंजीवादी विचारधारा एवं नीति के सम्बन्ध में लेनिन के विचार

विदेशी प्रभुत्व के शिकंजे से हाल में मुक्त उपनिवेशों तथा देशों के सामाजिक ढांचों के कुछ ऐसे विशेष गुण हैं जिनका स्रोत औपनिवेशिक अतीत के अवशेष हैं। इनमें एक है, कृषक समुदाय, शहरी निम्न मध्यम वर्ग (पेटी बुर्जुआ) तथा विभिन्न अर्द्ध सर्वहारा समुदायों का बोलबाला।

ये सामाजिक जमातें एक रूप कतई नहीं हैं। ऊपरी सतह कुलकों, समृद्ध कारीगरों और दुकानदारों की है। सबसे गरीब भाग भूमिहीन किसानों तथा शहरी बेघरबार असंगठित सर्वहारा का होता है जो ज़िन्दा रहने के लिए जो भी मिल जाय वह काम किया करते हैं।

ये सामाजिक श्रेणियाँ (जमातें) जिन्हें कभी-कभी मध्यवर्ती या बीच की जमातों के नाम से भी पुकारा जाता है उन्नत पूंजीवादी देशों में भी हुआ करती हैं, लेकिन पराधीन तथा विकासमान देशों में उनका अनुपात कहीं ज्यादा है। इसका कारण यह तथ्य है कि साम्राज्यवादी उत्पीड़िन तथा उसके बाद के प्रभाव इन देशों के

औद्योगिक विकास को विलम्बित किया करते हैं। फलस्वरूप 'मध्य-वर्ती' जमात का विघटन एक तरह से मन्द प्रक्रिया होती है। अपेक्षाकृत समृद्ध ऊपरी सतह के लिए पूंजीवादी स्वामित्व की कतिपय (यद्यपि सीमित) सम्भावनाएं रहती हैं जबकि निर्धन जमात (उद्योगों या कृषि में) मुश्किल से मजूरी पाने वाले मजदूरों के स्तर पर पहुंच पाती हैं।

सामन्ती तथा अर्द्ध-सामन्ती और औपनिवेशिक अवस्थाओं में बड़ी संख्या वाली मध्यवर्ती जमात तथा मज़दूर वर्ग आबादी का सबसे उत्पीड़ित भाग हुआ करता है।

लेनिन के अनुसार, कृषि-समस्या, कृषक समुदाय को सामन्ती शोषण तथा उसके तमाम अवशेषों से छुटकारा दिलाने की समस्या किसी भी बुर्जुआ-जनवादी क्रान्ति का सारतत्व हुआ करती है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय मुक्ति-क्रान्ति में साम्राज्यवाद-विरोधी तथा सामन्तवाद-विरोधी समस्याएं एक दूसरे से घनिष्ठ रूप में जुटी रहती हैं और साथ-साथ हल की जाती हैं। यदि बुर्जुआ-जनवादी कायापलट सुसंगत, मौलिक ढंग से होता है तो किसानों के लिए उस जमीन का स्वामी बनने का अच्छा मौका रहता है जिसे वे जोतते हैं। नगर तथा देहात, दोनों जगह निजी उद्यम के विकास के लिए व्यवस्था की जाती है। परन्तु जैसा कि लेनिन ने अपनी कृतियों में बताया, पूंजीवाद का विकास किसानों और निम्न-शहरी बुर्जुआ वर्ग के स्तरीयकरण की प्रक्रिया को बहुत ज़्यादा तेज़ करता

है, खुशहाल किसान और कभी-कभी जमींदार पूंजीपति किसान बन जाते हैं जो लोगों को मजूरी पर लगाते हैं तथा-कृषि तकनीकों का उपयोग करते हैं। समृद्ध कारीगर तथा दुकानदार कभी-कभी कारखानों के मालिक तथा समृद्ध व्यापारी बनने में सफल हो जाते हैं। अधिकांश किसान तथा छोटे-छोटे कारीगर बरबाद हो जाते हैं और शहरी तथा देहाती सर्वहारा समूह में शामिल हो जाता है। बड़े बुर्जुआ वर्ग के शासन से असन्तुष्ट होने के कारण किसानों तथा निम्न-मध्यम वर्ग के हलकों में पूंजीवाद-विरोधी भावना आ जाती हैं तथा वे समाजवाद के (अक्सर कल्पना विलास प्रधान) स्वप्न देखने लगते हैं। मज़दूर वर्ग तथा उसकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां, कृषक समुदाय तथा 'मध्यवर्ती' जमात को राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए तथा सामन्ती अवशेषों के विरुद्ध संघर्ष में और आगे चलकर एकाधिकारवादी बुर्जुआ वर्ग के ख़िलाफ़ लड़ने में अपना मुख्य पुरुषार्थी सहयोगी मानती हैं।

पूंजीवाद के अन्तर्गत कृषक समुदाय मदद के बिना शोषण, गरीबी तथा बरबादी से अपने को मुक्त करने में अक्षम रहता है। ऐसा वह तभी कर सकता है जब सर्वहारा क्रान्ति विजयी हो जाती है। वैधानिक कम्युनिज़म के जन्मदाताओं ने लक्षित किया कि किसानों को केवल पूंजी के धराशायी होने पर ही दुख-दैन्य से मुक्त किया जा सकता है और केवल पूंजीवाद-विरोधी सर्वहारा सरकार ही उसकी आर्थिक दुर्दशा तथा सामाजिक अधोगति का अन्त कर सकती है। मज़दूर वर्ग तथा कृषक समुदाय की मैत्री के सम्बन्ध में मार्क्स

तथा एँगेल्स के विचारों को ब्लादीमिर इलीच लेनिन तथा कम्युनिस्ट पार्टी ने, जिसका उन्होंने नेतृत्व किया था, विकसित तथा मूर्तमान किया।

उद्योग के अपेक्षाकृत द्रुत विकास के बावजूद ज़ारशाही रूस २० वीं शताब्दीं के आरम्भ में कृषि प्रधान देश बना रहा। रूस के किसान जो सबसे बड़ा वर्ग थे, भूमि के अभाव तथा दरिद्रता के कारण अक्षरशः छटपटा रहे थे। तीस हज़ार जमींदार परिवारों के पास इतनी भूमि थी जितनी १०५ लाख खेतिहरों के पास थी। इसमें पूंजीवाद के विकास के साथ खेत-मज़दूरों का शोषण बढ़ गया। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि इस तरह की दयनीय अवस्थाओं ने किसानों को मौजूदा व्यवस्था के ख़िलाफ़ विद्रोह करने के लिए विवश किया। इस तरह स्वयं जीवन किसानों को जारशाही के ख़िलाफ़ टक्कर लेने वाले मज़दूरों का साथी बना रहा था।

फ़िर भी, कृषक समुदाय को क्रान्ति के पक्ष में लाना कठिन काम था। यह खासतौर पर इसलिए भी मुश्किल था क्योंकि छोटे पैमाने के वस्तु उत्पादन में लगे अन्य ग़ैर-सर्वहारा समुदाय की तरह कृषक समुदाय का स्थान भी सर्वहारा तथा बुर्जुआ के बीच रहा करता है। कृषक समुदाय और सर्वहारा के बीच समान वस्तु यह है कि दोनों शोषित होते हैं परन्तु निजी सम्पत्ति वालों के रूप में किसान बुर्जुआ वर्ग के साथी होते हैं।

अपनी आर्थिक एकरूप हीनता के कारण ग़ैर-सर्वहारा जनसाधारण का पूंजीवादी विकास के दौरान स्तरीकरण होता है।

जैसा कि कहा जा चुका है, बहुसंख्या नितान्त दरिद्र हो जाती है और वह सर्वहारा की पांतों में शामिल हो जाती है जबकि अल्पसंख्या अमीर बन जाती है और बुर्जुआ वर्ग में मिल जाती है।

कृषक समुदाय के इस दुहरे स्वरूप को ध्यान में रखकर लेनिन इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि क्रान्ति की भिन्न-भिन्न मंजिलों में कृषक समुदाय की भिन्न-भिन्न जमातें मज़दूर वर्ग की साथी हुआ करेंगी। लेनिन ने लक्षित किया कि बुर्जुआ-जनवादी क्रान्ति के दौरान सारे किसान सर्वहारा के साथ होते हैं। किसान राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त करने, जनवादी सरकार प्राप्त करने और सामन्तवाद तथा भूदास प्रथा के अवशेष खत्म करने का प्रयास करते हैं। समाजवादी क्रान्ति की मंजिल के दौरान गरीब कृषक समुदाय सर्वहारा का साथी बन जाता है। देहात के शोषक तत्वों समेत बुर्जुआ वर्ग पर मज़दूर वर्ग की विजय ग़रीब किसानों के हित में होती है।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि कृषक समुदाय यद्यपि मज़दूर वर्ग का स्वाभाविक साथी है, फिर भी उसे (कृषक समुदाय को) मजदूर वर्ग की ओर करने, उसकी बहुत बड़ी क्रान्तिकारी क्षमताएं प्रकाश में लाने के लिए डटकर संघर्ष करना जरूरी होता है। ठीक यही वह दिशा है जिसमें मज़दूर वर्ग को कृषक समुदाय के मामले में अपनी पथ-प्रदर्शनकारी भूमिका का परिचय देना चाहिए। लेनिन ने कहा कि कृषक समुदाय के लिए संघर्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि मज़दूर वर्ग तथा कृषक समुदाय की ऐक्यबद्धता

के बिना, जिसमें सर्वहारा पथ-प्रदर्शनकारी भूमिका अदा करे, क्रान्ति की विजय तथा समाजवाद का निर्माण मुमकिन नहीं है।

समाजवादी क्रान्ति की तैयारी में लेनिन तथा पार्टी ने कृषक समुदाय को मजदूर वर्ग के पक्ष में करने के लिए क्या किया ? कम्युनिस्ट पार्टी का कृषि सम्बन्धी कार्यक्रम कृषक जनसाधारण के लिए संघर्ष में सशक्त विचारधारात्मक हथियार बन गया। इस कार्यक्रम में मुख्य मांग यह थी कि ज़मींदारों की ज़मीन जब्त कर ली जाय तथा उसे जोतने वालों के सुपुर्द कर दिया जाय। इस प्रकार की माँग रूसी कृषक समुदाय के जीवन्त हित प्रतिबिम्बित करती थी।

परन्तु सही कार्यक्रम तैयार करना ही काफ़ी नहीं होता। उसे किसानों को समझाना ज़रूरी होता है। मौजूदा अवस्थाओं में लेनिन तथा कम्युनिस्टों ने क्रान्तिपूर्व के वर्षों में कृषक समुदाय को संगठित करने के लिए तथा प्रचार कार्य के हेतु सेना में काम करने का व्यापक उपयोग किया। वह प्रथम विश्वयुद्ध का ज़माना था। डेढ़ करोड़ रूसी सैनिकों में से लगभग एक करोड़ तीस लाख किसान थे। बाकी थे मजदूर तथा बुद्धिजीवी। फलस्वरूप मज़दूर वर्ग तथा उसकी पार्टी के लिए कृषक समुदाय को सारे रूस में प्रभावित करने के वास्ते सेना में काम करने के बहुत ही सुन्दर संयोग प्राप्त हुए।

सैनिकों के बीच अपना कार्यकलाप केन्द्रित कर कम्युनिस्ट लोग लेनिन के नेतृत्व में दो समस्याएं हल कर रहे थे—एक तो वे

आम सशस्त्र जनसाधारण को मजदूर वर्ग के निकट ला रहे थे और सैनिकों को क्रान्ति के पक्ष में करने से मजदूर वर्ग को कृषक समुदाय के बीच अपनी विचारधारा के पोषक मिल गये ।

रूस के औद्योगिक नगरों में जहां फ़ौजी टुकड़ियां तैनात थीं, सैनिकों के बीच कम्युनिस्ट प्रचार करने के लिए संगठन कायम किये गये । उन्होंने सैनिक क्लब कायम किये जहाँ वे हालात की जानकारी देते, व्याख्यान देते, बातचीत करते और बैठकों तथा प्रदर्शनों का आयोजन करते जिनमें सैनिक लोग मजदूरों के साथ शामिल होते थे । हज़ारों सैनिक जो छुट्टी में शहरों से गांव जाते, वस्तुतः कृषक जन-साधारण के बीच क्रान्तिकारी विचारों के प्रचार में सिद्ध होते थे । इन्हीं सैनिकों से किसानों को कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम, मज़दूर वर्ग द्वारा संचालित संघर्ष, इस संघर्ष के माध्यम से पूरे किये जाने वाले लक्ष्यों तथा उस भूमिका की ज़ानकारी मिलती थी जो कृषक समुदाय को इस संघर्ष में अदा करनी थी ।

कम्युनिस्टों का युद्ध विरोधी कार्यकलाप कृषक समुदाय के बीच मज़दूर वर्ग का प्रभाव बढ़ाने में काफी हद तक सहायक सिद्ध हुआ । किसानों को जिस तथ्य ने आकृष्ट किया, वह यह था कि मज़दूर वर्ग तथा कम्युनिस्ट पार्टी शान्ति की मांग कर रही थी । आखिर किसान लोग ही तो उस युद्ध का मुख्य बोझ बहन कर रहे थे और खास वार झेल रहे थे जिसे पूंजीपतियों ने शुरू किया था । लड़ाई बन्द करने की कम्युनिस्टों की माँग का कृषक समुदाय ने

खुले हृदय से समर्थन किया। किसान महसूस करने लगे कि जब तक पूंजीपति सत्तारूढ़ हैं तब तक शान्ति हासिल करना सम्भव नहीं है।

वे समझने लगे कि मजदूर वर्ग के साथ एकजुट होकर ही वे पूंजीपतियों से लड़ सकते हैं। देहात में व्यापक रूप में किया गया पार्टी-प्रचार लाभप्रद रहा। अक्तूबर, १९०७ में जब शहर का सर्वहारा समाजवादी-क्रान्ति के लिए उठ खड़ा हुआ तो क्रान्ति के समर्थन में रूस के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक कृषक विप्लवों की बाढ़ आ गयी। सर्वहारा के संघर्ष की धारा कृषक समुदाय की व्यापक कार्यवाही की धारा से मिल गयी। परन्तु इस मैत्री ने अपने को केवल उन कृषक विप्लवों में ही अभिव्यक्त नहीं किया जो कस्बों और शहरों में मजदूर वर्ग की कार्यवाही के साथ-साथ हुए थे। यह मैत्री सर्वोपरि इस तथ्य में प्रतिबिम्बित हुई कि मजदूरों ने कृषक विप्लवों की सहायता की और प्राय: उनका पथ-प्रदर्शन किया। यदि कृषक-युद्ध कारखाना मजदूरों की कार्यवाइयों से जुड़ा न होता, तो वह अवश्यम्भावी रूप में विफल होता।

रूस की राजधानी के क्रान्तिकारी विप्लव से जब बूर्जुआ सरकार को उखाड़ फेंका गया, अगले दिन मज़दूरों, सैनिकों तथा किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियतों की द्वितीय अखिल रूसी कांग्रेस ने भूमि सम्बन्धी फ़रमान पास किया जिसे लेनिन ने तैयार

किया था। उसका एक अंश इस प्रकार है : "...भूमि पर स्वामित्व बिना किसी मुआवज़े के तत्काल समाप्त किया जा रहा है।"*

फारमान के अनुसार किसानों को १५ करोड़ हैक्टर (लगभग साढ़े सैंतिस करोड़ एकड़) ज़मीन मुफ़्त मिल गयी। उन्हें सालाना लगान और ज़मीन की खरीद पर होने वाले व्यय से जो कुल मिला कर ७० करोड़ स्वर्ण रूबल होता था, छूट दे दी गयी। उन्हें एक अरब ३० करोड़ रूबल का जो कर्ज़ बैंक को चुकाना था, उससे भी मुक्त कर दिया गया। कृषक जनसाधारण के लिए अक्तूबर क्रान्ति के व्यावहारिक परिणामों का मूल्यांकन करते हुए लेनिन ने लिखा है कि इस कृषक देश में समग्र रूप में कृषक समुदाय ही है जिसे सर्वहारा अधिनायकत्व से सर्वप्रथम लाभ हुआ, सबसे ज़्यादा लाभ हुआ और तत्काल हुआ। "......सर्वहारा के अधिनायकत्व में किसान पहली बार अपने लिए काम कर रहा है तथा नगरवासियों से ज़्यादा अच्छा खाना खा रहा है। किसानों ने पहली बार अपनी आज़ादी—अपनी रोटी खाने की आज़ादी, भुखमरी से आज़ादी देखी।"**

सर्वहारा के अधिनायकत्व ने जिसकी लेनिन ने चर्चा की है, रूस में सोवियतों के जनतंत्र का रूप धारण किया : "सर्वहारा का

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २६, पृष्ठ २५८।

** व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३०, पृष्ठ ११२

अधिनायकत्व मेहनतकश जनता के हिरावल, सर्वहारा तथा मेहनतकश जनता की अनेकानेक ग़ैर-सर्वहारा जमातों (पेटी बुर्जुआ, मामूली सम्पत्ति के मालिक, कृषक जनसाधारण बुद्धिजीवी समुदाय आदि के बीच), या इन जमातों के अधिकांश के बीच विशेष प्रकार की वर्ग ऐक्यबद्धता, पूंजी के विरुद्ध ऐक्यबद्धता आदि, ऐसी ऐक्यबद्धता है जिसका लक्ष्य पूंजी का तख़्ता पूरी तरह उलट देना और बुर्जुआवर्ग द्वारा किये जाने वाले प्रतिरोध को, फिर से खड़े होने के लिए उसके द्वारा की जाने वाली कोशिशों को पूरी तरह दबा देना है। वह समाजवाद की अन्तिम रूप से स्थापना और दृढ़िकरण के लिए ऐक्यबद्धता है।*

कम्युनिस्ट पार्टी का पथ-प्रदर्शन पाकर रूस का मज़दूर वर्ग भिन्न-भिन्न प्रगतिशील आन्दोलनों को सम्बद्ध करने और उन्हें एक ही दिशा की ओर—पूंजी की ताक़त को उलट फेंकने की ओर ले जाने में सफल हुआ। पार्टी ने शान्ति के लिए आम आन्दोलन, ज़मीन के लिए किसानों के संघर्ष, ज़ारशाही रूस के उत्पीड़ित जन-गण के राष्ट्रीय उत्पीड़न के खिलाफ़ संघर्ष, समाजवाद के लिए सर्वहारा के संघर्ष को एक क्रान्तिकारी धारा में मिला दिया।

मजदूरों तथा कृषक समुदाय की एकजुटता को मूर्तरूप देने में बोल्शेविकों के अनुभव को सर्वाधिक महत्व देते हुए लेनिन ने यह अनुभव तमाम देशों के मज़दूर वर्ग को सुलभ करने का प्रयत्न

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड, २९, पृष्ठ ३८१।

किया। जैसा कि साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष का इतिहास बताता है, यह अनुभव उत्पीड़ित जनगण की राष्ट्रीय तथा सामाजिक मुक्ति के सच्चे योद्धाओं के लिए पथ-प्रदर्शनकारी तत्व बन गया है। १९६१ में सोवियत संघ में एक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन हुआ था जिसका नाम था : "महान अक्तूबर क्रान्ति और एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के जनगण का राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन।" उसमें दक्षिण वियतनाम राष्ट्रीय-मुक्ति-मोर्चे के सोवियत संघ स्थित स्थायी मिशन के प्रधान दांग क्वांग मिन्ह ने भाषण किया। दक्षिण वियतनाम की राष्ट्रीय मुक्ति-क्रान्ति में रूसी कम्युनिस्टों के अनुभव को लागू करने के सम्बन्ध में बोलते हुए उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि किसानों का प्रश्न जनवादी क्रान्ति का मुख्य मुद्दा है, कि उपनिवेशों में क़ौमी मसला मूलतः कृषक प्रश्न है। दांग क्वांग मिन्ह ने कहा है, "रूसी अनुभव का परिशीलन करते हुए हम दक्षिणी वियतनाम में शहरी आबादी द्वारा किये जा रहे संघर्ष के पथ-प्रदर्शन को एक ऐसे कृषि नीति के कार्यान्वयन के साथ मिलते हैं जिस का सिद्धान्त है, "जमीन जोतने वालों को।"

इस तरह ग़ैर-सर्वहारा जनसाधारण तथा प्रथमतया और सर्वोपरि किसानों के साथ मजदूर वर्ग की एकजुटता के बारे में लेनिन की शिक्षा हमारे जमाने में दुनियां की मजदूर तथा कम्युनिस्ट पार्टियों के लिए जीवन का व्यावहारिक महत्व की वस्तु है। उसे तोड़ने-मरोड़ने अथवा भोंड़े ढंग से उसकी व्याख्या करने के किसी भी प्रयत्न से नकारात्मक फल निकल सकते हैं। यह पेकिंग की

नेताशाही के निराधार सैद्धान्तिक 'आविष्कारों' से स्पष्ट हो जाता है। हम कई मौक़ों पर देख चुके हैं कि मज़दूर वर्ग तथा कृषक समुदाय की एकजुटता के बारे में मार्क्सवादी—लेनिनवादी शिक्षा के स्थान पर माओ के 'विचारों' को प्रतिष्ठित करने का यत्न पेकिंग करता है।

सर्वहारा और क्रान्तिकारी संघर्ष का नेतृत्व करने की उसकी क्षमता के प्रति माओत्से-तुंग का अविश्वास सुविदित है। अखिल चीन ट्रेड यूनियन-संघ का विधान और तथाकथित सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान स्थानीय कम्युनिस्ट संगठनों के ख़िलाफ़ दमन-चक्र इस अविश्वास को प्रतिविम्बित करने हैं। माओ के हुक्म पर की गयी ये कार्यवाहियां मज़दूर वर्ग और कृषक समुदाय की मैत्री और सर्वहारा की पथ-प्रदर्शनकारी भूमिका पर कुठाराघात करती हैं। यह सोचना भोलेपन का परिचय देना होगा कि माओ का पेटी-बुर्जुआ दृष्टिकोण कृषक समुदाय को लाभ पहुंचा रहा है। तमाम किसानों को फ़ौजी बैरकों में भर देने, अपने जीवनमान को कभी सुधार सकने की आशा से वंचित कर देने की उनकी कोशिशें समाजवाद के विचारों को ही बदनाम करती हैं।

इसी तरह, यह भी स्पस्ट है कि नगरों को देहातों से घेरने, सशस्त्र छापामार संघर्ष का विकास करने तथा उन देशों में 'कृषि-क्रान्ति' करने के लिए जहां इसकी अवस्थाएं परिपक्व नहीं हुई हैं, माओ के आह्वान को मेहनतकश जनता द्वारा किये जाने वाले वर्ग संघर्षके आम नियमों से कुछ भी लेना-देना नहीं है।

व्यवहार सिद्ध करता है कि आज-कल एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमरीका के उन देशों के लिए जहाँ आबादी की विशाल संख्या कृषक समुदाय की है, मजदूर वर्ग और कृषक समुदाय के बीच एकजुटता के बारे में लेनिन की शिक्षा ने जबर्दस्त महत्व प्राप्त कर लिया है।

जहां तक तात्कालीन ऐतिहासिक सम्भावनाओं का प्रश्न है, यह एकजुटता राष्ट्रीय तथा सामाजिक मुक्ति के लिए शहरी तथा देहाती मेहनतकश जनता द्वारा किये जाने वाले संघर्ष में सफलता की गारंटी है।

फिर भी कृषक समुदाय, निम्न-शहरी बुर्जुआ वर्ग तथा अर्द्ध सर्वहारा तत्वों के दुहरे सामाजिक और राजनीतिक दर्जे को ध्यान में रखना आवश्यक है।

इन जमातों के आर्थिक हित (जिनकी ऊपर चर्चा की गयी है) उनकी सामाजिक चेतना और उनके राजनीतिक रुखों के विशिष्ठ गुण निर्धारित करते हैं।

उपनिवेशों तथा पराधीन देशों में जो संगठन पेटी बुर्जुआ तत्वों से बनते हैं और जिनका नेतृत्व ये तत्व करते हैं। वे आमतौर पर क्रान्तिकारी राष्ट्रवादी स्थिति अपनाते हैं वे आमतौर पर मज़-दूरों की मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के साथ मिलकर काम करते है और समाजवादी कार्यक्रम समेत क्रान्तिकारी राजनीतिक

कार्यक्रम अपनाने की क्षमता रखते हैं। पेटी बुर्जुआ उग्र-जनवादियों के राजनीतिक दृष्टि से सब से ज्यादा परिपक्व प्रतिनिधि मार्क्सवाद-लेनिनवाद की ओर झुकते हैं तथा उनमें से कई किसी खास मंजिल में कम्युनिस्ट आन्दोलन की कतारों में शामिल हो जाते हैं।

परन्तु कुल मिलाकर यह देखा गया है कि पेटी बुर्जुआ राष्ट्रीय क्रान्तिकारी संगठन बहुधा संघर्ष में ढुलमुलपन दिखाते हैं। वे ठोस परिस्थिति का संजीदा वैज्ञानिक विश्लेषण करने के कार्य को हिकारत की नज़र से देखते हैं और विचारशून्य अराजकतावादी कार्यनीति, विद्रोहवाद तथा संघर्ष की आतंकवादी विधियों की राह पकड़ने की प्रवृत्ति दिखाते हैं। वे क़ौमी, मज़हबी तथा नस्लवादी विशिष्टता की वकालत करने वाले प्रचार के (जो उनमें से कुछ को फासिस्ट आन्दोलन की कतार में झोंक देता है) सहज शिकार बन जाते हैं। लेनिन ने कहा था, "इस प्रकार के क्रान्तिवाद की अस्थिरता, उसका खोखलापन, तेज़ी से घुटना टेकने की प्रवृत्ति, उदासीनता, मोहभ्रम, और यहां तक कि इस या उस बुर्जुआ सनक के प्रति उन्मादपूर्ण लगाव—ये सब चीजें सुविदित हैं।"*

जैसा कि लेनिन ने ज़ोर देकर कहा था, पेटी बुर्जुआ ढुलमुलपन भिन्न-भिन्न रूप धारण करते हैं जो ऐतिहासिक स्थिति पर निर्भर रहते हैं। उन्होंने इस ढुलमुलपन को 'पेटी बुर्जुआ क्रान्तिवाद' का

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ३२।

नाम दिया और उसकी व्याख्या करते हुए कहा कि वह "कथनी में तो डरावना, गर्जनभरा और दर्पोक्तिपूर्ण है, परन्तु करनी में फूट, तोड़-फोड़ और बुद्धिहीनता का महज़ एक बुलबुला है।"*

लेनिन ने मज़दूर वर्ग, सर्वहारा पार्टी की कतारों में इन पेटी-बुर्जुआ बुराइयों के प्रवेश के खतरे से सावधान किया था।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है महान अक्तूबर क्रान्ति ने उस प्रक्रिया को जन्म दिया जिसके कारण उन्नत देशों के मेहनतकश जनता के आन्दोलन ने ही नहीं, वरन् किसानों के आन्दोलन तथा राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों ने भी मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त को अपनाना आरम्भ किया। इस चीज़ ने उत्पीड़ित राष्ट्रों के राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्षों तथा विश्व सर्वहारा के समाजवादी आन्दोलन को एक दूसरे के समीप आने में मदद दी। परन्तु इस पेचीदा स्थिति की कृषक आबादी की बहुलता वाले देशों, उपनिवेशों तथा पराधीन क्षेत्रों में खास विशेषताएं थीं। कुछ राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों के ऐसे नेता जो पर्याप्त रूप में परिपक्व नहीं थे और मूलतः किसान तथा पेटी बुर्जुआ तत्व थे, अक्सर मार्क्सवाद-लेनिनवाद को नारों तथा थीसिसों का एक समान योग मानते थे, विचारों की एक गुम्फित प्रणाली नहीं।

जिन लोगों का भरण-पोषण मुश्किल से रोटी-रोजी की व्यवस्था करा सकने वाले अर्थतंत्र की परिस्थितियों में होता है, जो

---

* व्ला० लेनिन संकलित कृतियां, खण्ड ३३, पृष्ठ २१।

सामन्तवाद तथा विदेशी पूंजी के हाथों उत्पीड़ित होते हैं, समाजवादी-जनवाद, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के विचारों की उनकी समस्त गहनता और द्वन्द्ववाद के साथ कुछ कर सकना कभी-कभी मुश्किल पाते हैं। लेनिन ने लक्षित किया कि वही सामाजिक-आर्थिक अवस्थाएं जो छोटी हैसियत के मालिक को जन्म देती है, "गहनतम पेटी बुर्जुआ पूर्वाग्रहों में से" एक को अर्थात् "राष्ट्रीय अहंवाद तथा राष्ट्रीय संकीर्ण मनोवृत्ति" को विशेष अड़ियलपन प्रदान करती है।"*

लेनिन और उनके हाथों निर्मित पार्टी ने सर्वहारा योद्धाओं की कतारों में घातक, पेटी-बुर्जुआ प्रभाव के प्रवेश के खिलाफ संघर्ष को हमेशा अपना सबसे बड़ा कर्तव्य माना। लेनिन ने लिखा है कि, "१६०३ में जब बोलशेविज़म का जन्म हुआ तो उसने पेटी-बुर्जुआ, अर्द्ध अराजकतावादी (या अपरिपक्व-अराजकतावादी) क्रान्तिवाद के खिलाफ निर्मम संघर्ष करने की परम्पराएं सम्भाल लीं।"**

कई मज़दूर पार्टियों का अनुभव बताता है कि ग़ैर-सर्वहारा जनसाधारण को सही मार्क्सवादी-लेनिनवादी भावना में शिक्षित-करने का काम निरपवाद रूप में कठिन काम है जिसका बीड़ा केवल विचारधारा की दृष्टि से तथा तपा-मँजा, राजनीतिक दृष्टि से अनुभवी हिरावल ही उठा सकता है।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां खण्ड ३१, पृष्ठ १५०।
** व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ३३।

जब पेटी-बुर्जुआ प्रवृतियों को बेलगाम कर दिया जाता है तब उसका क्या नजीजा होता है चीन की कम्युनिस्ट पार्टी इस चीज़ की जीती-जागती मिसाल है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जैसी पार्टी के, जिसकी सदस्यता कृषक बहुल है, सर्वहारा मर्मभाग का कार्यकलाप निर्णायक महत्व का होता जो पार्टी को सर्वहारा नीति का सतत रूप में पालन करने और उसके समक्ष खड़े पेटी-बुर्जआ तत्वों का मुकाबला करने के योग्य बनाता। परन्तु माओत्से-तुंग का गुट जिसने चौथे दशाक के आरम्भ में सत्ता सम्भाल ही ली थी, पेटी-बुर्जुआ विचारधारा के राष्ट्रवाद, मनमानेपन और नेतृत्व के सैनिक तरीकों जैसे उसके सारे, उलझावों समेत जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के लिए विजातीय हैं—वशीभूत हो गया था। इसलिए उसने पेटी-बुर्जुआ तत्व को आगे बढ़ने से नहीं रोका। इसके विपरीत उसने उसे पार्टी में पैर जमाने दिये। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी में सर्वहारा तत्वों के प्रभाव को पंगु करने दिया।

पांचवें दशक के आरम्भ में 'काम के ढंग का शुद्धीकरण' करने की आड़ में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेता पार्टी को मार्क्सवाद के चीनीकरण की, माओत्से-तुंग १६६८ में ही जिसकी घोषणा कर चुके थे, दिशा में मोड़ने लगे थे और इस तरह वस्तुतः मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा के अन्तर्राष्ट्रीयतावादी स्वरूप से इनकार कर रहे थे।

माओत्से-तुंग की व्यक्ति पूजा के बढ़ावे तथा प्रोत्साहन को (जिसका चौथे दशक के अन्त में जन्म हुआ और जिसे चीनी कम्यु-

निस्ट पार्टी की ७वीं कांग्रेस ने पार्टी-नीति के रूप में १६४५ में अधिकृत तौर पर औपचारिक रूप दिया) पार्टी नेतृत्व के अन्दर पेटी-बुर्जुआ अधोपतन का सकेत निस्संकोच माना जा सकता है। आगे के २० वर्षों में माओ की व्यक्तिपूजा का इस हद तक विकास हुआ कि वह अन्ततः चीन की कम्युनिस्ट पार्टी तथा चीनी जनता के लिए ट्रेजेडी बन गयी।

चीन की वर्तमान घटनाएं, चीन में इस समय चल रही तथा-कथित महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति, माओ-त्से-तुंग की पूजा, उनके दुस्साहसिक, मार्क्सवाद-विरोधी विचारों की प्रशंसा व्यक्तिपूजा के ख़तरे और हानिप्रद परिणामों की जांच अधिक विस्तार के साथ करना ज़रूरी बना देते हैं।

बुर्जुआ विचार धारा के विपरीत मार्क्सवाद-लेनिनवाद यह मानता है कि जनता ही इतिहास की स्रोत है, यह आम मेहनतकश जन ही हैं जो समाज के लिए भौतिक तथा आर्थिक मूल्यों का सृजन करते हैं। परन्तु मार्क्सवाद-लेनिनवाद इतिहास में कतिपय व्यक्तियों की भूमिका से इनकार नही करता। ऐसे व्यक्तियों में वैज्ञानिक, लेखक, कलाकार शामिल हैं जिनके सृजनात्मक श्रम, विज्ञान तथा कला को आगे बढ़ाने में मदद देता है। सार्वजनिक तथा राजनीतिक नेताओं की भूमिका भी समान रूप में महत्वपूर्ण है जो जनसाधारण प्रगतिशील वर्गों तथा राजनीतिक पार्टियों का नेतृत्व करते हैं। कोई वर्ग, ख़ासक़र मजदूर वर्ग तब तक समाज का नेतृत्व नहीं कर सकता जब तक वह संगठित नहीं होगा, जब तक उसके पास ऐसे नेता नहीं

होंगे जो उसकी नीतियाँ निर्धारित करते हों और उनका कार्यान्वयन करना बताते हों।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद असाधारण व्यक्तियों की भूमिका को मान्यता तो देता है परन्तु उसे सम्पूर्ण या निरपेक्ष नहीं मानता। वह नेताओं के कार्यकलाप को सामाजिक सम्बन्धों से अलग नहीं अपितु उनसे घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ मानता है। कोई असाधारण ऐतिहासिक व्यक्ति किसी प्रगतिशील ध्येय को तभी आगे बढ़ा सकता है जब वह सम्बन्धित व्यक्ति समाज के विकास का नियमन करने वाले नियमों को ध्यान में रखे।

इन नियमों को अपना आधार बनाकर नेता तात्कालिक सामाजिक परिवर्तनों को पहले से ही देखने, इन परिवर्तनों को मूर्त रूप लेने में मदद देने के लिए अपने ज्ञान तथा अनुभव का उपयोग करता है। १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा २० वीं शताब्दी के आरम्भ के प्रसिद्ध रूसी मार्क्सवादी ज्यार्जी प्लेखानों ने कहा था कि वास्तविक प्रख्यात नेता वही है जो इन अर्थों में अपने साथियों के ऊपर होता है कि वह नये प्रस्फुरित हो रहे सामाजिक सम्बन्धों के सारतत्व से सबसे पहले आत्मसात करता है।

लेनिन ने बार-बार ज़ोर दिया था कि आन्दोलन को संगठित करने की क्षमता रखने वाले अपने सबसे अग्रणी प्रतिनिधियों के प्रकाश में लाये बिना किसी भी वर्ग ने कभी प्रधानता हासिल नहीं

की। मज़दूर वर्ग को ख़ास तौर पर अनुभवी नेताओं की ज़रूरत है क्योंकि समाज का मौलिक कायाकल्प उसे ही करना है।

इस तरह मार्क्सवाद-लेनिनवाद मज़दूर वर्ग के प्रभावशाली नेताओं की भूमिका से कदापि इन्कार नहीं करता परन्तु किसी नेता के प्रभाव तथा अधिकार को मान्यता देने का अर्थ कदापि यह नहीं है कि उसके व्यक्तित्व की भाटों की तरह अन्धाधुन्ध प्रशस्ति की जाएं, कि आन्दोन की सारी अच्छाइयों का श्रेय एक व्यक्ति को—वह चाहे कितना ही असाधारण क्यों न हो—दिया जाय। हम महान सर्वहारा नेता कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिख एंगेल्स और ब्लादीमिर लेनिन के ज़बर्दस्त प्रभाव तथा लोकाप्रयता से अच्छी तरह परिचित हैं।

परन्तु उन्होंने व्यक्तिपूजा के ख़िलाफ़, अपने गुणों को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किये जाने के ख़िलाफ़ डटकर संघर्ष किया। कार्ल मार्क्स ने अपने एक क्रान्तिकारी मित्र को लिखे पत्र में लिखा, "किसी भी प्रकार की व्यक्ति पूजा के प्रति अरुचि होने के कारण, मैंने इन्टर-नेशनल के अस्तित्व के दौरान भिन्न देशों से अपने ऊपर की गयी प्रशंसा की बौछारों की कभी प्रचार की दुनिया तक पहुंचने की इजाज़त नहीं दी और सिवाय कभी-कभी झिड़कियां देने के अलावा उनका उत्तर नही दिया है।"*

---

* कार्लमार्क्स, फ्रेडरिख एंगल्स, संकलित पत्र-व्यवहार, प्रोग्रेस पब्लिशर्स, मास्को, पृष्ठ ३१०।

लेनिन को जब पता चला कि उनके कुछ पार्टी साथियों ने उनके जीवन तथा कार्य को समर्पित किया जाने वाला एक संग्रहालय स्थापित करने का फ़ैसला किया है तो उन्होंने इसका कसकर विरोध किया। लेनिन ने अपने व्यक्तित्व का गुणगान नहीं होने दिया, हालांकि उन्हें असीम अधिकार तथा लाखों-करोड़ों मेहनतकशों का प्यार प्राप्त था। लेनिन के अति विपुल प्रभाव ने कभी व्यक्तिपूजा का रूप धारण नहीं किया। वह पार्टी जीवन तथा पार्टी नेतृत्व के प्रतिमानों को निरन्तर व्यवहार में लाते रहे जिसने सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी तथा सोवियत राज्य द्वारा अमल में लायी जाने वाली नीति के सारे मौलिक मसलों पर सामूहिक विचार-विमर्श सुनिश्चित किया।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के जन्मदाता व्यक्तिपूजा के ख़िलाफ़ थे क्योंकि वह सर्वहारा विचारधारा तथा इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा को नुक़सान पहुंचाने वाली है। व्यक्तिपूजा मेहनतकश जनता, राष्ट्र तथा पार्टी की भूमिका को घटाती है।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त इतिहास में जनसाधारण की निर्णायक भूमिका पर ज़ोर देता है और बताता है कि ऐसा क्यों है? लेनिन का मत था कि, "दसियों लाख लोगों के, जो कुछ कर रहे होते हैं, दिमाग़ उससे असीम रूप में उदात्ततर वस्तु का निर्माण करते हैं जिसकी कोई महानतम मेधावी कल्पना कर सकता है।"*

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां खण्ड २६, पृष्ठ ४७४।

जनता ही, जनसाधारण ही इतिहास के निर्माता हैं, इसकी अनुभूति नेताओं के लिए ही नहीं वरन् स्वयं जनसाधारण के लिए भी महत्वपूर्ण है। वह उन्हें मुक्ति संघर्ष करने की प्रेरणा देती है, अपनी शक्ति पर विश्वास करने की भावना भरती है। व्यक्तित्व को गौरव मंडित करना, किसी व्यक्ति के गुणों की असीम प्रशंसा करना, जनसाधारण को ठीक विचारधारा की ओर अभिमुख करने के लिए अहितकर होता है। व्यक्तिपूजा आम जनता में निष्क्रियता का समावेश करती है, क्रान्तिकारी संघर्ष में, नये जीवन के निर्माण में जनसाधारण के सक्रिय रूप में शामिल होने की राह में बाधक बनती है।

यही नहीं, व्यक्तिपूजा समाजवादी आन्दोलन में अन्तर्निहित गहन जनवाद की जड़ों पर चोट करती है। व्यक्तिपूजा ऐसी अवस्थाएं पैदा करती है कि उनके कारण जनसाधारण क्रान्तिकारी प्रक्रिया में शामिल होने की सम्भावनाओं से वंचित हो जाते हैं तथा उनके नेता जनसाधारण से उसके अनुभव का सामाजीकरण करके जो सीखा करते हैं, वह नहीं सीख सकते।

व्यक्तिपूजा के अन्तर्गत नेताओं के पास परम शक्ति होती है। सामूहिक रूप में सुविचारित निर्णयों की जगह व्यक्तिगत, मनमाने फ़ैसले किये जाते हैं। ऐसा करते समय जनसाधारण के अनुभव का ख़्याल नहीं किया जाता और अक्सर वे ग़लत तथा सारे समाजवादी आन्दोलन के लिए हानिप्रद साबित होते हैं।

व्यक्तिपूजा बहुधा कुछ ऐसी हानिकर अभिव्यक्तियों को जन्म देती है जिनको समाजवाद की प्रकृति से कुछ भी लेना-देना नहीं होता तथा जिनका स्रोत नेता के नकारात्मक निजी गुण होते हैं।

व्यक्तिपूजा में और समाजवाद में जिसकी शक्ति कोटि-कोटि आम श्रमजीवी जनों से प्राप्त होती है, कुछ भी समान नहीं।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २०वीं कांग्रेस के निर्णयों, दूसरे देशों के कम्युनिस्ट तथा मज़दूर पार्टियों के निर्णयों के अनुसार काम करके व्यक्तिपूजा की तमाम आम व्यक्तियों की दृढ़ता-पूर्वक निन्दा की जाती है।

व्यक्तिपूजा चीन में फल-फूल रही है। इसका कारण यह तथ्य है कि पेटी-बुर्जुआ विचारधारा का चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने विरोध नहीं किया। बात इसके विपरीत हुई। उन्होंने इस पर लगातार ज़ोर दिया।

चीन में जहां सम्राट (दिव्य साम्राज्य के पिता) की पूजा का शताब्दियों तक दौर दौरा रहा, जनवादी परम्पराएं जड़ नहीं पकड़ सकीं।

पार्टी में पेटी-बुर्जुआ के प्रवेश ने नायकों के यशगान का वातावरण बनाया। १६३६ में ही लिउ शाव-ची ने येनान में मार्क्सवाद-लेनिनवाद के संस्थान में दिये गये भाषणों में संकेत किया था कि

कम्युनिस्ट पार्टी में बहुत से ऐसे लोग हैं जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बारे में कुछ नहीं जानते और मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शब्दावलि का उपयोग करते हैं। वे अपने को "चीनी मार्क्स" या "चीनी लेनिन" मान बैठे हैं।

लिउ शाव-ची ने कहा, "इसके अलावा वे यह मांग करने की हिम्मत कर बैठे कि पार्टी उन्हें वही सम्मान दे जो मार्क्स तथा लेनिन को दिया जाता है, कि नेता के रूप में उनका समर्थन किया जाय, कि उन्हें प्यार तथा सम्मान दिया जाय। वे नामज़दगी की प्रतीक्षा किये बिना ही अपने को नेता भी नियुक्त कर बैठे, वे घुसपैठ करके उच्च पदों पर पहुंच गये और उन्होंने पार्टी के ऊपर ऐसी हाकिम-शाही चलायी मानो वह उनकी आज्ञाकारी परिवार है; पार्टी को शिक्षा देने की कोशिश की जबकि ख़ुद हर चीज़ की निन्दा करते थे, उन्होंने मनमाने ढंग से पार्टी-सदस्यों को झिड़का, उन्हें सज़ा दी तथा उनके साथ मनमानी की।" लिउ शाव-ची ने किसी का नाम लिये बिना ही कहा किअब यह अतीत की बात हो चुकी है। यह पूछने पर कि क्या यकीन के साथ कहा जा सकता है कि इस तरह के तत्व पार्टी-कतारों में दुबारा प्रकट नहीं हो सकते, उन्होंने कहा कि यह निश्चय के साथ कहना मुश्किल है।

आज माओ की व्यक्तिपूजा ने भयावह आकार धारण कर लिया है। वह राष्ट्रवाद से मार्क्सवाद-विरोधी माओ-गुट के पेटीबुर्जुआ दुस्साहसिक कार्यों से अंगांगि रूप में जुड़ी हुई है। वह मज़दूर

वर्ग के हितों और समग्र चीनी जनता के हितों को बहुत नुकसान पहुंचाती है। वह मार्क्सवाद के झंडे को बदनाम करती है तथा वस्तुपरक दृष्टि से मेहनतकश जतता के सबसे निकृष्ट शत्रु, साम्राज्यवाद के हाथों का खिलौना बनी हुई है।

क्रान्तिकारी राष्ट्रीय-मुक्ति-संघर्ष की लेनिनवादी कार्यनीति

मानव समाज के आज तक के पूरे इतिहास के दौरान क्रमिक, विकासात्मक घटनाओं की लम्बी अवधि के बाद प्रचण्ड क्रान्तिकारी विस्फ़ोट होते रहे हैं जिन्होंने जनगण की जीवन पद्धति में गहरे परिवर्तन किये। मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के अनुसार क्रान्तियां किसी की इच्छा के अनुसार नहीं होती अपितु सामाजिक-आर्थिक विरोधाभासों के तीक्ष्ण होने का परिणाम होती हैं। किसी देश में सामाजिक क्रान्तियां केवल तभी सफल हुआ करती हैं जब वह देश उसके लिए परिपक्व हो जाता है, यानी केवल तभी जब कतिपय ऐतिहासिक परिस्थितियां उस देश में विद्यमान होती हैं। क्रान्ति की सफलता के लिए आवश्यक परिस्थितियों के कुल योग को लेनिन ने क्रान्तिकारी परिस्थिति का नाम दिया।

क्रान्तिकारी परिस्थिति की विशेषता बताते हुए उन्होंने लिखा :

"यदि हम निम्नलिखित तीन बड़े लक्षण लक्षित करें तो हम यक़ीनन ग़लती न करेंगे : (१) जब सत्तारूढ़ वर्ग के लिए बिना किसी परिवर्तन के अपना राज क़ायम रखना असम्भव हो जाता है, जब ऊपरी वर्गों में इस या उस रूप में संकट हो, "सत्तारूढ़ वर्ग" की नीति में ऐसा संकट जो दरार को जन्म दे जिससे होकर उत्पीड़ित वर्गों का असन्तोष तथा रोष फूट निकले । क्रान्ति होने के लिए आमतौर पर इतना काफ़ी नहीं होता कि 'निम्न' वर्ग पुराने ढंग से नहीं रहना चाहता, यह भी ज़रूरी है कि ऊपरी वर्ग 'पुराने ढंग से रहने' में असमर्थ हो; (२) जब उत्पीड़ित वर्गों का कष्ट तथा अभाव साधारण स्थिति से कहीं अधिक संगीन हो जाय; (३) जब उपरोक्त कारणों के फलस्वरूप, जनसाधारण के क्रियाकलाप में काफ़ी वृद्धि हो जाय, जो जनसाधारण शान्तिकाल में तो कोई शिकायत किये बिना अपने को लुटने देते हैं परन्तु उथल-पुथल भरे दिनों में संकट की तमाम परिस्थितियों और स्वयं 'ऊपरी वर्गों', दोनों के द्वारा स्वतन्त्र ऐतिहासिक कार्रवाई की ओर आकृष्ट किये जाते हैं ।

"इन वस्तुगत परिवर्तनों के बिना जो अलग-अलग समूहों और पार्टियों ही नहीं, वरन् पृथक-पृथक वर्गों की इच्छा की परिधि से बाहर होते हैं, क्रान्ति आमतौर पर असम्भव हुआ करती है । इन

तमाम वस्तुगत परिवर्तनों के मोड़ को क्रान्तिकारी परिस्थिति कहा जाता है।''*

इस तरह क्रान्तिकारी स्थिति का एक लक्षण मेहनतकश जनता के जीवन-स्तर का नीचे आना हुआ करता है, क्योंकि इसी जगह साम्राज्यवाद के विरोधाभास ख़ासतौर पर तेज़ होते हैं।

रूस तथा कई अन्य देशों के अन्दर क्रान्ति के इतिहास ने दिखा दिया है कि आम मेहनतकश जनता की दरिद्रता क्रान्तिकारी परिस्थिति के विकास में महत्वपूर्ण उपकरण हुआ करती है। परन्तु यह ज़रूरी नहीं है कि अकेले दरिद्रता ही क्रान्तिकारी परिस्थिति को जन्म दे। द्वितीय विश्वयुद्ध के ठीक पहले बहुत से पूंजीवादी देश आर्थिक संकट के कारण बुरी तरह डगमगा गये थे।

यह आर्थिक संकट इनमें से कुछ देशों के अन्दर मेहनतकश जनता के जीवन स्तर को तेज़ी से बहुत नीचे ले आया था। परन्तु उन देशों में कोई क्रान्तिकारी परिस्थिति नहीं उठ खड़ी हुई, क्योंकि वहां आम जनता की ग़रीबी के अलावा दूसरी अनेक अवस्थाओं का अभाव था जो क्रान्तिकारी परिस्थिति के उभार के लिए ज़रूरी होती हैं।

वर्तमान युग में उन्नत पूंजीवादी देशों में आम जनता की घोर दरिद्रता तथा तंगी की स्थिति से भिन्न अवस्थाओं में क्रान्तिकारी

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खंड २१, पृष्ठ २१४।

परिस्थिति मूर्त रूप धारण कर सकती है। परन्तु, इसमें शक नहीं कि शोषकों और शोषितों के बीच आर्थिक खाई बनी हुई है तथा चौड़ी होती जा रही है। फलस्वरूप जनसाधारण की दरिद्रता के बजाय आर्थिक विषमता की बढ़ती हुई ऊग्रता पूंजीवादी समाज में क्रान्तिकारी परिस्थिति को जन्म दे सकती है।

हमारा ख़याल है कि मार्क्सवादी सिद्धान्त को भ्रष्ट करने के लिए माओ गुट द्वारा की जा रही कोशिशों को ध्यान में रखते हुए इस प्रश्न का स्पष्टीकरण करना आवश्यक है।

पेकिंग की नेताशाही ज़ोर देकर कहती है कि क्रान्तिकारी परिस्थिति की सम्भावना की बात केवल उन देशों में की जा सकती है जहाँ मेहनतकश जनता घोर दरिद्र बना दी जाती है। माओ के अनुसार मेहनतकश जनता जितनी ही दरिद्र होगी और उसके शोषक जितने ही निर्मम होंगे, क्रान्तिकारी परिस्थिति के पैदा होने के सुयोग उतने ही अच्छे होंगे।

इस भ्रामक आधार को अपनाते हुए पेकिंग के नेता जो उतने ही भ्रामक एक और निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उन्नत पूंजीवादी देशों में मज़दूर वर्ग अपनी आर्थिक स्थिति कुछ हद तक सुधारने के बाद सन्तुष्ट हो जाता है और इस प्रकार क्रान्तिकारी संघर्ष को ठुकरा देता है। परन्तु आज का घटनाक्रम इस दृष्टिकोण का समर्थन नहीं करता। इज़ारेदारियों के ख़िलाफ़ लड़ने वालों की

सबसे अगली क़तारों में इस भिन्न-भिन्न वेतनस्तर वाले मज़दूरों को पाते हैं जो राजनीतिक दृष्टि से परिपक्व होते हैं।

अफ्रीका, एशिया तथा लैटिन अमरीका के कई देशों में, जहाँ शताब्दियों के औपनिवेशिक शासन से विरासत में मिली ग़रीबी और भूख को अभी तक नहीं मिटाया जा सका है, विद्यमान परिस्थिति भी माओवादी दृष्टिकोण को ग़लत साबित करती है जिसके अनुसार इनमें से हर एक देश में क्रान्ति की ज्वाला धधक जानी चाहिए थी।

जैसा कि लेनिन ने लक्षित किया, "उत्पीड़न अकेले चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, किसी देश में हमेशा क्रान्तिकारी परिस्थित को उत्पन्न नहीं किया करता। अधिकांश मामलों में क्रान्ति के लिए इतना काफ़ी नहीं है कि पुराने तरीक़े से रहना **निम्नतर वर्गों को पसन्द न हो।** बल्कि यह भी ज़रूरी है कि **ऊपरी वर्ग पुराने तरीके से राज करने और हुकूमत करने में असमर्थ हो।**"*

लेनिन की प्रस्थापनाओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद हमें क्रान्तिकारी परिस्थिति का निम्न लिखित चित्र प्राप्त होता है। बढ़ती हुई दरिद्रता या आर्थिक विषमता और साथ ही जातीय और वर्ग-विरोधाभासों की अन्य अभिव्यक्तियों के फलस्वरूप आम

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियाँ, खण्ड १६, पृष्ठ २२१-२२।

मेहनतकश जनसाधारण में असंतोष तथा रोष बढ़ने लगता है। जन साधारण मौजूदा व्यवस्था के ख़िलाफ़ सक्रिय राजनीतिक संघर्ष शुरू कर देते हैं। उनके रोश के फलस्वरूप हड़तालें तथा प्रदर्शन जैसी क्रान्तिकारी कार्रवाइयां होती हैं। शोषक समाज की नींव जन-कार्रवाइयों के दबाव से हिलने लगती है। सत्तारूढ़ वर्ग इस परिस्थिति से जो उनके लिये ख़तरनाक होती है, बच निकलने की राह ढूंढ़ने की कोशिश करते हैं। ऊपरी सतह का एक भाग क्रान्ति रोकने की उम्मीद में जनसाधारण को कुछ रियायतें देने की रुझान का परिचय देता है। अब सत्तारूढ़ वर्ग ऐक्यबद्ध नहीं रह जाता। सत्ता का संकट बढ़ता जाता है।

क्रान्तिकारी परिस्थिति कतिपय उपकरणों के मौजूद होने पर ही उपस्थित होती हैं। ये उपकरण हैं—जनसाधारण के बीच क्रान्तिकारी भावनाओं की वृद्धि तथा सत्तारूढ़ वर्गों के मध्य सत्ता का संकट। इन उपकरणों का प्रकट होना स्पष्ट ही देश में विशिष्ट राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति पर निर्भर करता है। इस परिस्थिति में ये चीज़ें शामिल हैं—विदेशी उत्पीड़न की मौजूदगी तथा उसका स्वरूप, मेहनतकश जनता के शोषण की मात्रा, क्रान्तिकारी वर्ग की शक्ति तथा संगठनात्मक स्तर और दूसरे वर्गों की अपने शक्तिशाली साथियों के साथ उसकी ऐक्यवद्धता, पूरे राजयंत्र की हालत तथा सत्तारूढ़ वर्ग के विघटन की मात्रा।

क्या कोई घटना क्रान्तिकारी परिस्थिति के परिपक्व होने की प्रक्रिया को तेज़ कर सकती है? इस बारे में लेनिन ने लिखा :

"जहाँ गहरे राजनीतिक संकट की वस्तुगत अवस्थाएं मौजूद होती हैं, वहाँ छोटे से छोटे संघर्ष भी जो क्रान्ति को जन्म देने वाली असली ज़मीन से कोसों दूर प्रतीत होते हैं, कारण के रूप में, किसी तिनके के रूप में, जन-भावना में मोड़ लाने वाले बिन्दु के रूप में सबसे गम्भीर महत्व के हो सकते हैं।"*

अतीत में क्रान्तिकारी परिस्थिति का विकास मुख्यरूप में उग्रतम परिस्थितियों के कारण हुआ करता था जैसे तीव्र आर्थिक संकट, मेहनतकश जनता का बुरी तरह दमन, तथा युद्ध। जैसा कि लेनिन ने लक्षित किया, युद्ध पूँजीवादी प्रणाली के विरोधाभासों को मौन और गम्भीर कर देते हैं. जनता की तंगहाली को असीम रूप में बढ़ाते हैं और इस प्रकार क्रान्तिकारी परिस्थिति को विस्फोट की ओर ले जाते हैं। पर साथ ही युद्ध देश को सैनिकीकरण की दिशा में भी ले जाता है जो चरम प्रतिक्रियावाद की स्थिति को अनिवार्यत: मज़बूत बनाता है।

आज जबकि समाजवादी देशों का ऐसा सशक्त समुदाय विद्यमान है जो युद्ध रोकने में सक्षम हैं तब युद्ध नहीं, वरन विश्व की परिस्थिति ही वह चीज़ है जो क्रान्ति की राजनीतिक पूर्वावश्यकताओं के अविर्भाव के लिए अनुकूल आवस्थाएं प्रदान करती है। सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्तिकारी युद्धों का समर्थन करते हैं लेकिन आक्रामक साम्राज्यवादी युद्धों का दृढ़तापूर्वक विरोध

* व्ला० लेलिन, संकलित कृतियाँ, खण्ड १५, पृष्ट २७६।

करते हैं। साम्राज्यवादी युद्ध, ख़ास तौर पर तापनाभिकीय युद्ध असीम भूखण्ड को उजाड़ सकते हैं, लाखों-करोड़ों लोगों के प्राण ले सकते हैं और मानवजाति के अस्तित्व को खतरे में डाल सकते हैं।

ऊपर कही गयी बातों से यह अर्थ निकलता है कि आज के ज़माने में मेहनतकश जनता को उसकी जनवादी उपलब्धियों तथा राष्ट्रीय स्वतंत्रता से वंचित करने की कोशिशों, शासन पलटने की प्रतिक्रियावादी फ़ौजी कार्यवाहियों और फ़ासिज़्म के पुनर्जन्म के साथ ही शान्ति तथा प्रभुत्ता के लिए ख़तरनाक साज़िशों को क्रान्तिकारी परिस्थिति के उभार का प्रधान कारण अवश्य मानना चाहिए। मेहनतकश जनता, जिनकी राजनीतिक चेतना इन दिनों असाधारण रूप में विकसित हो चुकी है, प्रतिक्रियावादियों की खतरनाक कार्यवाहियों की योजना को अपने संकल्पपूर्ण क्रान्तिकारी कदमों द्वारा व्यर्थ बना सकती है।

क्रान्तिकारी परिस्थिति के उभरने का मतलब यह नहीं है कि क्रान्ति की विजय अवश्यम्भावी है। क्रान्तिकारी परिस्थिति तो क्रान्ति के लिए केवल वस्तुनिष्ठ पूर्वावश्यकताओं को उत्पन्न करती है। परन्तु ये पूर्वावश्यकताएं अकेले ही मसला नहीं सुलझाती। इतिहास में ऐसी कई मिसालें हैं जो बताती हैं कि क्रान्तिकारी परिस्थिति के फलस्वरूप क्रान्ति नहीं हुई। जैसा कि लेनिन ने बारबार ज़ोर देकर कहा था, हर क्रान्तिकारी परिस्थिति के फलस्वरूप क्रान्ति नहीं हुआ करती। क्रान्ति सफल हो, इसके लिए यह आवश्यक है कि

अपरिहार्य वस्तुगत अवस्थाओं के अलावा हिरावल वर्ग की सचेत क्रान्तिकारी गतिविधियाँ हों और जनसाधारण सशस्त्र क्रान्तिकारी कार्रवाई करने में सक्षम हो, ताकि वे शोषकों के, जोकि लेनिन के शब्दों में, तब तक सत्ता से अलग नहीं होंगे जब तक उन्हें ऐसा करने के लिए मजबूर नहीं किया जायगा, प्रतिरोध को कुचल सकें। शोषक वर्गों का तख़्ता उलटने की आवश्यकता की मेहनतकश जन-साधारण द्वारा अनुभूति को तथा इसकी सिद्धि के लिए कुर्बानी देने की उनकी तत्परता को लेनिन मनोगत उपकरण मानते थे।

मेहनतकश जनता के प्रयत्नों को संगठित करने और उसका पथ-प्रदर्शन करने के लिए अनुभवी मार्क्सवादी-लेनिनवादी मज़दूर वर्ग की पार्टी को क्रान्तिकारी परिस्थिति के पैदा होने के क्षण को पहिचानने में सक्षम होना चाहिए। उस क्षण पार्टी को स्वतः स्फूर्त जन-कार्रवाइयों को ऐक्यवद्ध करते हुए और उन्हें क्रान्ति के लिए सचेत संघर्ष में परिणित करते हुए कारगर नेतृत्व का परिचय देना चाहिए।

पार्टी को राजनीतिक परिस्थिति का विश्लेषण करने में सक्षम होना चाहिए और देखना चाहिए कि संघर्ष में कौन-कौन से वर्ग किस हद तक शामिल हैं। क्रान्ति के अलग-अलग मोड़ों पर ये वर्ग किस तरह की कार्यवाहियाँ करेंगे इसको पहले ही परख सकने की योग्यता होनी चाहिए। क्रान्तिकारी क़िस्म की परिस्थिति के विकास के साथ-साथ राजनीतिक परिस्थिति चूंकि तेज़ी से बदल

सकती है, इस कारण के पार्टी के पास हर ख़ास मंज़िल पर परिस्थिति का सही-सही मूल्यांकन करने की और वह क्षण निर्धारित करने की योग्यता होनी चाहिए जब सत्तारूढ़ मण्डलों में सर्वाधिक ढुलमुलपन तथा भ्रम हो और जब जनता का रोष चरम बिन्दु पर पहुंच जाय। यही है वह क्षण जब पार्टी अवश्य ही को निर्णायक कार्यवाही करनी होगी।

लेनिन ने क्रान्ति की वस्तुपरक अवस्थाओं को अर्थात् क्रान्तिकारी परिस्थिति को मनोगत अवस्थाओं से, जो क्रान्तिकारी परिस्थिति का उसके उच्चतम दौर में संक्रमण सुनिश्चित करती हैं, अलग-थलग कर उन पर कभी विचार नहीं किया। लेनिन ने इसे राष्ट्रव्यापी राष्ट्रीय संकट का नाम दिया था। दूसरे शब्दों में राष्ट्रव्यापी संकट तभी विकसित होता है जब आम जनता यह समझने के लिए पर्याप्त राजनीतिक अनुभव प्राप्त करले कि क्रान्ति के अलावा और कोई चारा नहीं है।

मौजूदा परिस्थितियों में मनोगत उपकरण की भूमिका अधिकाधिक महत्वपूर्ण होती जा रही है। जो परिस्थितियाँ इस समय विकसित हो रही हैं और क्रान्ति के लिए अनुकूल हैं, उनका सही-सही उपयोग होगा या नहीं, यह सवाल मजदूर वर्गीय पार्टी की कार्यनीति सम्बन्धी नमनीयता पर, और ठोस ऐतिहासिक तथा राष्ट्रीय अवस्थाओं के आधार पर, संघर्ष के सही रूप चुनने की उसकी योग्यता पर अधिकाधिक निर्भर करता है।

परन्तु इससे मतलब यह नहीं कि पार्टी निष्क्रिय बैठी रहेगी और हाथ पर हाथ रखे फल के पकने तथा अपने पांव के पास टपकने का इन्तज़ार करती रहेगी। सही नीति का अनुसरण करके, तथा जनसाधारण के बीच काम करके पार्टी ऐसी प्रक्रिया को तेज़ कर सकती है जिसके फलस्वरूप सफ़ल क्रान्ति के लिए आवश्यक अवस्थाओं की सृष्टि हो, और उसे ऐसा करना चाहिए। इस लक्ष्य-सिद्धि के लिए पार्टी को विजयों और पराजयों से सही सबक़ सीखने में जनसाधारण को मदद देते हुए तथा उन्हें यह समझाते हुए कि जब परिस्थिति बदलती है तो संघर्ष के रूप तथा नारे क्यों बदले जाने चाहिए, जन-आन्दोलन का पथ-प्रदर्शन करना चाहिए। पार्टी को सामाजिक विरोधाभासों का तथा शोषण की कार्यविधि का पर्दाफ़ाश करना चाहिए और इस तरह आम जनता को कार्रवाई के लिए तैयार करना चाहिए और क्यों पार्टी को मेहनतकश जनता की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघर्ष को अन्तिम लक्ष्य के लिए संघर्ष से ठीक तरह मिलाना चाहिए।

आर्थिक रूप से पिछड़े हुए देशों की जहां साम्राज्यवादी प्रभुत्व है और जहां मेहनतकश जनता को सत्तारूढ़ वर्ग आतंकित रखते हैं, परिस्थिति का विश्लेषण करने से पता चलता है कि क्रांतिकारी वर्गों का सशस्त्र संघर्ष की अक्सर राष्ट्र-व्यायी संकट से पहले होता है। ऐसे मामलों में सशस्त्र संघर्ष की शर्त यह है कि उसे जनता का समर्थन प्राप्त हो क्रान्तिकारी परिस्थिति के विकास को तेज़ कर सकता है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि सशस्त्र क्रान्ति-

कारी कार्रवाई क्रान्ति को तभी समीप लायेगी जब क्रान्तिकारी परिस्थिति के लक्षण देश के राजनीतिक जीवन में प्रकट हो चुके हों तथा क्रान्तिकारी आकांक्षाएं जनसाधारण में व्यापक रूप से फैल चुकी हों। यदि क्रान्तिकारी परिस्थिति की परिपक्वता के ये बुनियादी लक्षण मौजूद न हों तथा जनसाधारण सशस्त्र संघर्ष का समर्थन करने के लिए तैयार न हों, तो संघर्ष की सफलता की कोई गारंटी नहीं हो सकती। ऐसी परिस्थिति में सफ़लता की आशा करना दुस्साहसिकता होगी। कुछ लैटिन अमरीकी देशों का और इंडोनेशिया का अनुभव बताता है कि ऐसी अवस्थाओं में सशस्त्र संघर्ष अवश्यम्भावी रूप में विफल होगा और वह क्रान्ति के विकास को व्याघात ही पहुंचायेगा।

क्रान्ति के लिए वस्तुगत तथा आत्मगत अवस्थाओं के प्रकट होने और विकसित होने से सम्बन्धित सारे प्रश्नों पर पार्टियां अपने देशों में मौजूद विशिष्ट परिस्थितियों के संदर्भ में ग़ौर करती हैं,कोई क्षेत्रीय अथवा महाद्वीप-व्यापी क्रान्ति नहीं हो सकती। क्रान्ति का प्रश्न हर देश अपने यहां मौजूद ठोस अवस्थाओं के आधार पर पृथक-पृथक रूप में तय किया करता है। हमें लेनिन ने यही सिखाया था और अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन का इतिहास इसे सिद्ध कर चुका है।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार क्रान्तिकारी संघर्ष की सफ़लता बड़ी हद तक सही नीति तैयार करने तथा उसका अनुसरण

कर सकने और संघर्ष के सही साधन तथा विधियां चुन सकने की क्रान्तिकारी पार्टी की योग्यता पर निर्भर करती है। परन्तु मज़दूर वर्ग और राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन का इतिहास बताता है कि क्रान्तिकारी पार्टियां सही नीति तैयार करने में हमेशा सक्षम नहीं हुआ करतीं। जैसा कि लेनिन ने लक्षित किया, अतीत में की गयी ग़लतियों में दुस्साहसिकतावाद शामिल है।

क्रांतिकारी आन्दोलन में दुस्साहिकतावाद का अर्थ ऐसी नीति का अनुसरण करना है जो संसार की यथार्थता पर, समाज में वर्ग शक्तियां के सन्तुलन के सही मूल्यांकन पर और जन साधारण के मिजाज़ को समझने पर आधारित नहीं हुआ करती। इस तरह दुस्साहसिकतावाद क्रान्ति के ध्येय के लिए अनिष्टकारी है। उसके कारण क्रान्तिकारी शक्तियों की पराजय होती है।

जो लोग जल्दबाज़ी से भरी अंधाधुंध कार्रवाइयां करना चाहते हैं,वे अपने को अक्सर चरम वामपंथी और चरम क्रान्तिकारी नारों से सम्मोहित कर बैठते हैं। वे कोई तैयारी किये बिना, विद्यमान वास्तविक परिस्थिति पर ज़ोर दिये बिना अथवा समाज के विकास के और वर्ग संघर्ष के आम नियमों को ध्यान में रखे बिना ही सारी समस्याएं जल्द और एकबारगी हल करना चाहते हैं। ऐसे उतावलेपन से भरी हरकतें साधारण पार्टी-सदस्यों की जिन्दगी को ख़तरे में डाल सकती हैं और ऐसी कुर्बानियां हो सकती हैं जिन्हें किसी तरह न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता। इस तरह राष्ट्रीय तथा सामाजिक मुक्ति के ध्येय को अन्ततोगत्वा बहुत नुक़सान पहुंचता है।

इसीलिए लेनिन ने रूसी और अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर वर्ग के आन्दोलन में दुस्साहसिकतावाद के ख़िलाफ़ बराबर संघर्ष किया था। अपनी कई कृतियों तथा सार्वजनिक भाषणों में—इन में **क्या करें** (१९०२), **जनवादी क्रान्ति में सोशल डेमोक्रेसी की दो कार्यनीतियां** (१९०५), और ख़ास तौर पर **वामपंथी कम्युनिज़्म एक बचकाना रोग** (१९२०) जैसी शानदार कृतियां शामिल हैं—लेनिन ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में विभिन्न दुस्साहसिकतावादी प्रवृतियों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया।

लेनिन के अनुसार कतिपय क्रान्तिकारियों के दुस्साहसकितावाद के पीछे मौजूद कारणों में से कुछ ये हैं—अपरिपक्वता, मामूली विचारधारात्मक तथा सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि, सामाजिक विकास, वर्ग संघर्ष तथा क्रान्ति के नियमों के मामले में अज्ञान और समाज में हो रही पेचीदा प्रक्रियाओं का गहन तथा व्यापक विश्लेषण करने में असमर्थता। वे विद्यमान वस्तुगत परिस्थितियों का लेखा लिये बिना कल्पना विलास के, और इकतरफ़ा विचारों के आधार पर अपनी नीति बनाते हैं। लेनिन ने सिखाया कि कम्युनिस्ट पार्टी को सम्बद्ध समाज के तमाम वर्गों के सम्बन्धों, उस समाज के विकास के स्तर तथा दूसरे देशों की परिस्थिति के कुल योग को वस्तुगत रूप में ध्यान में रखते हुए आगे बढ़ना चाहिए। ऐसा करते हुए उन तमाम वर्गों तथा देशों को गतिहीन शक्ति नहीं अपितु ऐसी शतियां मानना चाहिए जिसमें परिवर्तन की प्रक्रिया चल रही है।

लेनिन ने लिखा है कि कुछ क्रान्तिकारियों के दुस्साहसिकता-

वादी रुख के पीछे एक और कारण यह है कि संघर्ष की उनकी कार्यनीति इस संघर्ष के विविध अनुकूल तथा प्रतिकूल तत्वों से सम्बन्धित होने के बजाय लोगों के अलग-अलग समूहों की क्रान्तिकारी भावनाएं पथ-प्रदर्शन पातीं हैं। ''यक़ीनन, जनसाधारधण में क्रान्तिकारी मन:स्थिति के अभाव में और इस मन:स्थिति के विकास को सुगम बनाने वाली अवस्थाओं के बिना, क्रान्तिकारी कार्यनीति कभी कार्यवाही का रूप धारण नहीं कर सकती। परन्तु रूस में लम्बे, दर्दनाक तथा रक्तपात पूर्ण अनुभवों ने हमें इस सत्य से अवगत कराया है कि क्रान्तिकारी कार्यनीति अकेली क्रान्तिकारी मन:स्थिति पर ही नहीं बनायी जा सकती। कार्यनीति को राज्य विशेष की (तथा उसके इर्द-गिर्द स्थिति राज्यों तथा संसार भर के राज्यों) की तमाम वर्ग-शक्तियों के और साथ ही क्रान्तिकारी आन्दोलनों के अनुभव के संजीदगी से भरे और कड़ाई के साथ वस्तुगत मूल्यांकन पर आधारित होना चाहिए।''*

लेनिन ने इंगित किया कि क्रान्तिकारी संघर्ष में दुस्साहसिकतावाद, संघषं के उन रूपों के जो जनसाधारण को अभी स्वीकार्य नहीं, उपयोग करने की प्रवृत्ति में अपने आप को प्रकट करता है। सशस्त्र संघर्ष जिसमें वैयक्तिक आतंकवाद, छापामार मुहिम तथा विप्लव शामिल हैं, सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी तरीक़ा, तमाम परिस्थितियोंपर लागू हो सकने वाला एकमात्र तरीक़ा माना जाता

---
* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ६३।

है । लेनिन ने इस तरह के क्रान्तिकारियों की आवश्यकता को दृढ़ता-पूर्वक ठुकरा दिया। ऐसा करते समय उन्होंने संकेत किया कि जिन तरीकों को जनसाधारण का समर्थन प्राप्त नहीं है तथा जिनके लिए वे तैयार नही है, वे क्रान्तिकारी आन्दोलन को केवल नुक़सान ही पहुंचाते हैं ।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि सभी क्रान्तिकारियों को मेहनतकशजनों के संघर्ष के इस या उस रूप को पूर्ण नहीं मान लेना चाहिए । उन्हें क्रान्तिकारी आन्दोलन के आकार, जन-साधारण की मन:स्थिति तथा वास्तविक परिस्थिति का लेखा लेते हुए संघर्ष की हर मंज़िल पर उसके रूपों की उपयुक्तता पर ध्यान-पूर्वक ग़ौर करना चाहिए । मज़दूर वर्ग को 'उद्वेलित' करने, उस कार्रवाई के लिए आगे धकेलने की 'आवश्यकता के नाम पर वैय-क्तिक आतंकवाद और सशस्त्र संघर्ष के अन्य रूपों को न्यायोचित ठहराने की कोशिशों के लेनिन सख्त ख़िलाफ़ थे । लेनिन ने लक्षित किया कि मज़दूर वर्ग को संघर्ष में' धकेलना असम्भव है । मज़दूर वर्ग क्रान्तिकारी अपीलों को तब तक नहीं सुनेगा जब तब वह क्रांति के लिए तैयार नहीं हो जाता ।

मज़दूर वर्ग तथा राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन में दुस्साहसिकता-वाद के खिलाफ़ संघर्ष में लेनिन ने उसके वर्ग स्वरूप तथा उसकी सामाजिक जड़ों का पर्दाफ़ाश किया । उन्होंने बताया कि दुस्साह-सिकतावादी विचारों तथा प्रवृतियों का मूल पेटी-बुर्जुआ विचारधारा

और राजनीति में, पेटी-बुर्जुआ क्रांतिकारी चिन्तन में निहित है। उन्होंने लिखा, "......छोटा मालिक, छोटा स्वामी ·....जो पूंजीवाद के अन्तर्गत हमेशा उत्पीड़न तथा प्राय: अपनी और तीव्र गिरावट, यही नहीं बरबादी का शिकार होता है, आसानी से क्रान्तिकारी चरम सीमाओं पर पहुंच जाता है।"*

लेनिन ने लक्षित किया कि पेटी-बुर्जुआ यद्यपि पूंजीवाद की विभिषिकाओं से विद्रोह करता है, फिर भी वह लम्बे समय तक चलने वाली और संगठित लड़ाई छेड़ने में असमर्थ रहता है। उसमें आत्म-नियंत्रण, अनुशासन तथा धैर्य का अभाव होता है। वह बड़ी पूँजी की हुकूमत का यथाशीघ्र खात्मा करना चाहेगा और फलत: संघर्ष के सबसे जोखिम भरे उपायों तक को अपना लेगा। वह चरम वामपंथी, चरम क्रान्तिकारी नारों और प्रवृतियों का समर्थन करता है। ऐसा करते ससय वह यह सोचता है कि ये चीज़ें उसे विजय दिला देंगी। यह पेटीबुर्जुआ क्रान्तिकारी चिन्तन मजदूर वर्ग तथा राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन पर प्रभार डालता है और इस तरह सभी किस्म के दुस्साहसिकतावादी विचारों तथा प्रवृतियों को जन्म देता है।

लेनिन के नेतृत्व में पार्टी को मजदूर वर्ग आन्दोलन में बार-बार दुस्साहसिकतावादी प्रवृतियों से संघर्ष करना पड़ा। यह संघर्ष

* ब्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ३२।

अक्तूबर क्रान्ति के बाद के आरम्भिक दिनों में ख़ास तौर से तेज़ था।

अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति प्रथम विश्व युद्ध के दौरान उस समय हुई जब रूस जर्मनी तथा उसके साथियों के ख़िलाफ़ फ़ौजी कार्रवाहियों में लगा हुआ था। समाजवादी क्रान्ति के हितार्थ रूस साम्राज्यवादी युद्ध से अलग हो गया तथा उसने युद्धरत शक्तियों से शान्ति सम्पन्न की। पर कुछ पार्टी-सदस्य तथाकथित वामपंथी कम्युनिस्ट इस के ख़िलाफ़ थे। उन्होंने कहा कि सर्वहारा आधिनायकत्व वाले देश के लिए साम्राज्यवादी शक्तियों के साथ शान्ति सम्पन्न करना शर्म की बात है। उन्होंने अधीरता के साथ दावा किया कि कम्युनिस्टों के लिए एक मात्र सही नीति यह होगी कि सोवियत रूस तमाम साम्राज्यवादियों के ख़िलाफ़ क्रान्तिकारी युद्ध करे।

लेनिन और पार्टी सदस्यों के बहुमत ने वामपंथी कम्युनिस्टों की अनुत्तरदायित्वपूर्ण बात का डटकर विरोध किया। उस समय सोवियत रूस के पास जर्मन साम्राज्य के आगे बढ़ते हुए सैनिकों के ख़िलाफ़ प्रतिरक्षात्मक युद्ध करने के लिए भी पर्याप्त फ़ौज नहीं थी। लाल सेना का अभी जन्म नहीं हुआ था। जहां तक क्रान्तिकारी युद्ध को पश्चिमी यूरोप तक ले जाने के वामपंथी कम्युनिस्टों के आह्वानों का ताल्लुक़ था, इस तरह के पग की तो अनुमति दी ही नहीं जा सकती थी क्योंकि लेनिनवाद क्रान्ति के बाहर से शीघ्रतापूर्वक ले जाने के कार्य को, क्रान्ति का 'निर्यात' करने की किसी भी

कोशिश को सिद्धान्ततः ठुकराती है। इस सिलसिले में लेनिन ने लिखा, "शायद प्रणेताओं का यह यक़ीन है कि विश्व क्रान्ति के लिए तक़ाज़ा करते हैं कि उसे धक्का देने की आवश्यकता है और इस प्रकार का धक्का केवल युद्ध ही दे सकता है……इस प्रकार का सिद्धान्त मार्क्सवाद के सर्वथा विपरीत होगा क्योंकि मार्क्सवाद क्रान्तियों को जो वर्ग विरोधभासों की बढ़ती हुई संगीन हालत के साथ विकसित होती हैं, आगे धकेलने का हमेशा विरोधी रहा है।"*

इन दुस्साहसिकतावादी दावों की कि क्रान्ति 'लाल सैनिकों की संगीनों के बल पर' आगे बढ़ायी गयी, दृढ़तापूर्वक निन्दा करते हुए लेनिन ने इस प्रश्न के मार्क्सवाद-विरोधी रुख के खतरे पर प्रकाश डाला था। उन्होंने कहा, "ऐसे भी लोग हैं जो यह विश्वास करते हैं कि हुक्म देकर या करार के जरिए दूसरे देश में क्रान्ति आरम्भ हो सकती है। ये लोग या तो पागल हैं अथवा, दूसरों के इशारों पर भड़काने का काम करने वाले हैं।"**

क्रान्तिकारी आन्दोलन में दुस्साहसिकतावाद के खिलाफ अनवरत संघर्ष करने की आवश्यकता के बारे में लेनिन की शिक्षा आज भी महत्वपूर्ण बनी हुई है। निस्सन्देह, अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन, मज़दूर वर्ग तथा राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों द्वारा संचित

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २७, पृष्ठ ७१-७२।

** व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २७, पृष्ठ ४८०।

व्यापक अनुभव के बावजूद कई देशों में क्रांतिकारियों को अब भी मार्क्सवादी विचारों की रक्षा करने के लिए और 'वामपंथी' लफ़्फ़ाज़ी के ख़िलाफ़, वर्ग संघर्ष की जगह सब तरह की दुस्साहसिकताओं और 'मज़दूरों में षड्यंत्रों के ज़रिए राज्य-विप्लव कराने' के ख़िलाफ़ लड़ने को मजबूर होना पड़ता है।

उदाहरण के लिए, इस तरह की कोशिशें माओ गुट द्वारा की जा रही हैं। मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा की खुलेआम उपेक्षा करके पेकिंग के नेता एशिया तथा दुनिया के अन्य प्रदेशों में कम्युनिस्ट आन्दोलन पर 'माओ-त्से-तुंग के विचार' थोपने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी फूट डालने वाली नीतियां अनेक दक्षिण पूर्व एशियाई देशों को काफ़ी नुक़सान पहुंचा चुकी हैं। हमें मालूम है कि माओ के कतिपय विचारों की क्या क़ीमत इंडोनेशियाई जनता को अदा करनी पड़ी। इंडोनेशियाई कम्युनिस्ट पार्टी के करीब तीस लाख सदस्यों की बहुत बड़ी संख्या थी। सातवें दशक के आरम्भ में उसके नेताओं ने पेकिंग के नेताओं की, जो इंडोनेशिया को माओ के विचारों की 'परीक्षण-स्थली' में बदलना चाहते थे, मर्ज़ी के आगे सिर झुकाना शुरू कर दिया था। इंडोनेशिया की कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ नेताओं ने बड़े पैमाने पर वर्ग संघर्ष करने और प्रतिक्रियावाद के ख़िलाफ़ संघर्ष में जनसाधारण पर निर्भर होने के बजाय ग़लत, दुस्साहसिकतावादी मार्ग पकड़ा। वे फ़ौजी अफ़सरों की षड़यंत्रकारी लाइन का समर्थन करने लगे। जैसा कि बाद में साफ़ हो गया, इस प्रकार की योजनाओं की सूचना आम पार्टी-सदस्यों को नहीं दी गयी। उनकी

जानकारी तो नेताओं के एक छोटे से हल्के तक सीमित थी। प्रतिक्रियावादी जनरलों के खिलाफ़ विद्रोह जिसे '३० सितम्बर आंदोलन' का नाम दिया गया, बहुत ही घटिया ढंग से तैयार किया सिद्ध हुआ, उसके नेताओं के पास कार्रवाई का कोई सुस्पष्ट, ध्यानपूर्वक विशद रूप से निर्मित कार्यक्रम नहीं था, उन्हें मेहनतकश जनता से कोई समर्थन नहीं मिला।

'३० सितम्बर आन्दोलन' ऐसी दुस्साहसिकतावादी कार्रवाई साबित हुआ जिसकी विफलता अवश्यम्भावी थी। प्रतिक्रियावादी आन्दोलन ने इस घटना का फ़ायदा उठाया तथा पहला मौक़ा मिलते ही राज-परिवर्तन का अपना मन्सूबा पूरा कर लिया। कम्युनिस्ट पार्टी तथा मेहनतकश जनता के अनेकानेक संगठन प्रतिक्रान्तिकारियों से टक्कर लेने के लिए तैयार न थे। अतः वे कोई मुक़ाबला नहीं कर सके। कम्युनिस्ट पार्टी कुचल दी गयी। पार्टी नेताओं तथा कार्याधिकारियों सहित सैकड़ों हज़ार कम्युनिस्ट मार दिये गये। देश में कम्युनिस्ट विरोधी उन्माद छा गया तथा कम्युनिस्टों को छुपने के लिए मजबूर होना पड़ा। इंडोनेशिया को प्रतिक्रियावाद ने अपनी बेड़ियों में कस लिया।

इस तरह वस्तुपरक दृष्टि से माओ-गुट प्रतिक्रियावादी शक्तियों के हाथों में खेल गया।

इंडोनेशियाई कम्युनिस्ट पार्टी तथा पूरी इंडोनेशियाई जनता का दर्दनाक किस्सा, जिस पर दुनिया भर के कम्युनिस्टों को गहरा

दुख है, बताता है कि दुस्साहसिकतावादी कार्यनीति से क्रान्तिकारी आन्दोलन को कैसा असीम खतरा है।

जैसा कि लेनिन ने बार-बार ज़ोर देकर कहा था, किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीतिक परिपक्वता का एक मुख्य प्रमाण परिस्थिति के बदलते ही क्रान्तिकारी संघर्ष की अपनी विधि को तेज़ी से बदलने की उसकी योग्यता है। कम्युनिस्टों को अपने अन्तिम लक्ष्यों की सिद्धि के लिए क्रान्तिकारी संघर्ष के सारे रूपों का उपयोग करना चाहिए। यह महत्वपूर्ण लेनिनवादी सिद्धान्त आज भी विधिसम्मत है।

क्या आप किसी ऐसे कारीगर की कल्पना कर सकते हैं जो किसी भी चीज़ को तैयार करने में, किसी भी सामग्री का उपयोग करते हुए एक ही प्रकार का औज़ार इस्तेमाल करता हो ? यक़ीनन नहीं। ऐसे विचित्र कारीगर शायद ही कामयाब हों और वह समाज के लिए किसी भी तरह उपयोगी नहीं होंगे। राजनीतिक जीवन में इस तरह की स्थिति हो सकती है। बस अन्तर इतना है कि जो राजनीतिक नेता हर परिस्थिति में संघर्ष का एक ही रूप इस्तेमाल करता है वह अपने को ही नहीं, वरन् उन सामाजिक शक्तियों को भी नुकसान पहुंचाता है, जिनकी ओर से वह काम करता है।

लेनिनवाद की एक खूबी यह है कि वह संघर्ष के सार्वत्रिक रूपों पर, जो तमाम परिस्थितियों में लागू हों, कोई आस्था नहीं रखता। सबसे ज़्यादा क्रान्तिकारी नारा जो संघर्ष के सबसे क्रान्तिकारी ढंग

का तक़ाजा करता हो, अगर क्रान्तिकारी विकास की सम्बद्ध मंजिल और वास्तविक परिस्थिति के विशिष्ट गुण प्रतिविम्बित न करे, तो वह निरर्थक है। जिस चीज़ ने कभी क्रान्तिकारी भूमिका अदा की हो, वह भिन्न परिस्थितियों में क्रान्ति के लिए हानिप्रद हो सकती है। जैसा कि लेनिन ने कहा, दूसरे छोर वाली ग़लती "ठीक उसी तरह हानिप्रद है, जब लोग उद्‌भूत वास्तविक परिस्थिति और विशेष जन-आन्दोलन की वास्तविक अवस्थाओं का लेखा लेने से इसलिए इन्कार कर देते हैं, क्योंकि किसी नारे की ग़लत परिभाषा कर उसे अपरिवर्तनीय बताया जाता है। किसी नारे का इस प्रकार का कार्यान्वयन अवश्यम्भावी रूप में विगड़ कर क्रान्तिकारी लफ़्फाज़ी बन जाता है।"*

लेनिन यह मानते थे कि सच्चे क्रान्तिवाद का अर्थ यह तय करने की योग्यता है कि किसी सम्बद्ध परिस्थिति में कैसी नीति का अनुसरण किया जाय।

दुर्भाग्यवश क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास में इस महत्व-पूर्ण लेनिनवादी सिद्धान्त के उल्लंघन की कई मिसालें हैं जिनके दुखद परिणाम निकले हैं। माओ गुट की नीति ऐसी एक मिसाल है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विपरीत माओवादी क्रातिकारी संघर्ष की केवल एक ही विधि, सशस्त्र संघर्ष को आगे बढ़ाते हैं। लम्बे अर्से तक खिचने वाले गृह युद्ध और जापानी हमलावरों के ख़िलाफ़

१—व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १५, पृष्ठ २१५।

सशस्त्र प्रतिरोध की परिस्थितियों में १६३८ में माओ द्वारा कहे गये ये शब्द कि 'बन्दूक सत्ता को जन्म देती है,' उस समय की मौजूदा परिस्थिति के सर्वथा अनुकूल थे। परन्तु माओ तो उसी वक्त फ़तवा दे चुके थे कि चीन के संघर्ष के विशिष्ट गुण विश्वव्यापी महत्व के हैं। हथियार सत्ता के स्रोत हैं, इस सम्बन्ध में उनका लेख इस दावे के साथ शुरू होता है कि "क्रान्ति का मुख्य उद्देश्य और साथ ही उसका सर्वोच्च रूप सशस्त्र विधि द्वारा सत्ता हस्तगत करना है; अर्थात समस्या को युद्ध के जरिए हल करना है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद का यह क्रान्तिकारी सिद्धान्त विश्वव्यापी रूप में सही है; यह चीन तथा दूसरे सभी देशों के लिए निर्विवाद रूप में सही है।"

इस उपहासास्पद विचार को जो मेहनतकश जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलन के विभिन्न रूपों को युद्ध में सीमित कर देते हैं, मार्क्सवाद-लेनिनवाद के मत्थे मढ़ कर माओ सशस्त्र संघर्ष के प्रति रुख को क्रान्तिवाद का मापदण्ड मानने लगे हैं। जो लोग संघर्ष के अन्य रूपों को अपने ध्यान में रखते हैं, माओ और उनके चीनी समर्थक उन्हें झूठे-क्रान्तिकारी कहते हैं। इस तरह पेकिंग की नेताशाही तमाम पूंजीवादी देशों के अन्दर ही नहीं वरन् संयुक्त अरब गणराज्य, अल्जीरिया, सीरिया तथा अन्य देशों में भी, जहां प्रगतिशील सामाजिक परिवर्तन हो रहे हैं, सशस्त्र संघर्ष का अह्वान करती है।

माओ गुट जिस चीज़ को 'सच्चा मार्क्सवाद-लेनिनवाद' कहता है, उसका मार्क्सवाद-लेनिनवाद से कुछ भी लेना-देना नहीं है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद यह सिखाता है कि क्रान्ति हर जगह एक

ही सांचे के मुताबिक विकसित नहीं हो सकती, क्योंकि विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया एक बड़े आकार की चीज़ है तथा अवस्थाएं देश-देश के अनुसार भिन्न होती हैं। मेहनतकश जनता द्वारा सत्ता की बाग-डोर सम्भाला जाना भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न ढंग से हो सकता है। साथ ही पुरानी व्यवस्था को मिटाने के लिए साधन के रूप में सशस्त्र संघर्ष की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता। फ़ौजी तानाशाही में जनवादी स्वतंत्रताओं के पूर्ण दमन की अवस्थाओं में, इस बात की अपेक्षा नहीं की जाती कि सामाजिक परिवर्तन बिना सशस्त्र संघर्ष के हो जायेंगे।

ऐतिहासिक अनुभव—जिस रूप में मार्क्सवाद-लेनिनवाद उसका सामान्यीकरण करता है—बतलाता है कि सशस्त्र कार्रवाई की सफ़लता इस बात पर निर्भर करती है कि पहले से उसकी अच्छी तरह से पूरी तैयारी की जाय तथा क्रान्तिकारी विचार रखने वाले आम लोग उसका समर्थन करें। अन्यथा वह ऐसा दुःसाहस कार्य होगा जिसकी जनता को मंहगी क़ीमत देनी पड़ेगी। अक्तूबर क्रान्ति के सम्पन्न होने के एक माह पूर्व लेनिन ने पार्टी-कामरेडों से कहा था: "परन्तु सशस्त्र विप्लव राजनीतिक संघर्ष का एक **विशेष** रूप है; वह ऐसी चीज़ है जिस पर वे विशेष नियम लागू होते हैं जिनकी ओर बारीकी से ध्यान दिया जाना चाहिए। कार्लमार्क्स ने यह सत्य उस समय उल्लेखनीय स्पष्टता के साथ प्रकट किया था जब उन्होंने लिखा, "विप्लव ठीक उतनी ही एक कला है जितना कि युद्ध।"*

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २६, पृष्ठ १७६।

इस चिट्ठी में उन्होंने उनका ध्यान 'विप्लव की कला से सम्बन्धित नियमों की ओर भी इस प्रकार आकृष्ट किया था : दृढ़ता-पूर्वक तथा साहसपूर्वक काम करना चाहिए, विप्लव के विचार से कभी 'खिलवाड़' नहीं करना चाहिए, निर्णायक मौक़े पर तथा नाज़ुक घड़ी में 'शक्तियों की अति प्रवल श्रेष्ठता' सुनिश्चित करनी चाहिए।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद सशस्त्र संघर्ष के प्रश्न को महज सशस्त्र के रूप में नहीं लेता, वरन् उसे जन-आन्दोलन के विकास से जोड़ता है। अपने लेख 'क्रान्तिकारी वाक्यावलि' (१६१८) में लेनिन ने लिखा, "......प्रतिक्रियावाद का प्रतिरोध क्रान्ति के लिए केवल उसी समय सहायक होता है जब वह समयोचित हो......हम मार्क्सवादियों को हमेशा गर्व रहा है कि हम जनशक्तियों तथा वर्ग-सम्बन्धों का बिलकुल ठीक-ठीक आँकलन कर संघर्ष के किसी भी रूप की समयो-पयुक्तता निर्धारित करते हैं हमने कहा है कि विप्लव सदैव उपयुक्त नहीं होता, यदि उसके लिए पूर्वावश्यक वस्तुएं मौजूद न हों तो वह जुएबाजी है।"*

यहां हम सशस्त्र संघर्ष के प्रति इस रुख तथा माओत्स-तुंग और उनके चेलों के, जो 'क्रान्तिकारी आमूल परिवर्तनवाद' पर गर्व करते हैं, रुख के बीच बहुत बड़ा अन्तर देखते हैं।

अतः यह स्वाभाविक ही है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति वफ़ादार कम्युनिस्ट पार्टियां क्रान्तिकारी संघर्ष की कार्यनीति के

---

* व्ला० लेनिन, संकलित रचनाएं, खण्ड २७, पृष्ठ २४।

प्रति कठमुल्लेपन से भरे रूख का दृढ़तापूर्वक विरोध करें। वे इस पक्ष में हैं कि विद्यमान परिस्थिति के अनुसार नमनीय कार्यनीति तथा विधियाँ अपनायी जायें। यदि किसी देश की वस्तुगत अवस्थाएं संघर्ष की शान्तिपूर्ण विविधों की अनुमति देती हैं तो कम्युनिस्टों को क्रांतिकारी कार्रवाई का यह रूप स्वीकार कर लेना चाहिए। पर यह ध्यान में रखना होगा कि सामाजिक सुधारवादियों के विपरीत सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी संघर्ष की शान्तिपूर्ण विधियों को चरम अवस्था नहीं मानते, बल्कि उन्हें पूँजीवाद का तख़्ता उलटने के लिए क्रान्तिकारी सँघर्ष का एक रूप मानते हैं। वे सुधारवादियों की जो पूँजीवादी समाज को केवल थोड़ा-बहुत 'सुधारना' चाहते हैं, संकीर्ण व्यावहारिकता के सख़्त ख़िलाफ़ हैं। परन्तु सुधारवाद की निन्दा करते समय सुधारों तथा संसदीय कार्यकलाप के संघर्ष को लेनिनवाद सुधारवाद की अभिव्यक्ति नहीं मानता। शर्त यह है कि वे कुछ छोटी मोटी मांगों की पूर्ति करने के बजाय अन्तिम क्रान्तिकारी लक्ष्यों की सिद्धी के ख़ातिर संचालित किये जायें। कम्युनिस्ट हमेशा यह मानते रहे हैं कि सुधारों के लिए संघर्ष तथा क्रान्ति के लिए संघर्ष एक दूसरे से इस हद तक जुड़े हुए हैं कि पूंजी से हस्तगत की गयी हर रियायत अन्तिम विश्लेषण के अनुसार क्रान्तिकारी संघर्ष का परिणाम है तथा आगे प्रगति की दिशा में एक पग हो सकती है। कम्युनिस्टों ने संघर्ष के शान्तिपूर्ण स्वरूपों कोअवसरवादी ढंग से तोड़ने मरोड़ने का हमेशा विरोध किया है, फिर भी उसका अर्थ यह नहीं है कि इन रुपों को पूर्णतया तिलांजलि दे दी जाय।

संघर्ष के शान्तिपूर्ण रूपों के बारे में 'माओ-चिन्तन" के हामियों का विचार बिलकुल भिन्न है। माओवाद बुर्जुआ जनवाद के संस्थानों का क्रांतिकारी उद्देश्यों के हेतु उपयोग में लाने की सम्भावना को पूरी तरह ठुकरा देता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह सशस्त्र संघर्ष को सत्ता के लिए संघर्ष का एकमात्र स्वीकार्य रूप मानता है। इस ग़लत मार्ग के जिसे प्रचार के ज़रिए और कभी-कभी भोंडी शक्ति के बल पर एशियाई माओवादियों ने एशियाई-अफ्रीकी देशों के कम्युनिस्टों पर थोपा है, बार-बार दुःखद परिणाम निकले।

तो फिर संघर्ष का ऐसा रूप निर्धारित करना कैसे सम्भव है जो सम्बन्धित देश की ठोस यथार्थताओं से सबसे अधिक मेल खाये? १९०५ की क्रान्तिकारी लड़ाइयों के अनुभव के अध्ययन के बल पर लेनिन ने निष्कर्ष निकाला कि क्रान्तिकारी संघर्ष के तत्व, पिछले क्रान्तिकारी अनुभव तथा प्रतिक्रान्तिकारी प्रतिरोध के रूपों के बीच जटिल आन्तरिक सम्बन्ध है।

इसका यह अर्थ निकलता है कि संघर्ष के रूपों की परिकल्पना दफ़्तर की मेज़ के पास बैठकर नहीं की जा सकती। वे क्रान्तिकारी सरगर्मियों के दौरान सामने आते हैं तथा बहुत ही अप्रत्याशित रूप धारण कर सकते है। मार्क्सवादी-लेनिनवादी संघर्ष के रूपों के बारे में सोचते नहीं रहते वरन् जनसाधारण के बीच काम करके उनकी बराबर तलाश करते रहते हैं, जिन्हें आम जनता जन्म देती है, उन्हें विकसित करते हैं। मज़दूर प्रतिनिधियों की सोवियतों की बात किसी

ने पहले नहीं सोची थी जिन्हें क्रान्तिकारी विप्लव का अंग और रूस में मज़दूर वर्ग के शासन का भ्रूण बनना था। किसी ने पूर्वी यूरोप के देशों के लोक-मोर्चों के, जिन्होंने फ़ाशिज़्म के ख़िलाफ़ संघर्ष में महत्वपूर्ण भमिका अदा की तथा जो हिटलरशाही के ख़ात्मे के बाद कई देशों में लोक-जनतंत्रों की आधारशिला बन गये थे, ठोस रूपो की बात नहीं सोची थी।

जनसाधारण की सृजनशीलता के फलस्वरूप पैदा होने वाली चीज़ में जीवन्त शक्ति होती है। परन्तु लेनिन ने कभी यह महसूस नहीं किया कि कम्युनिस्टों को क्रान्तिकारी अनुभव के दौरान संघर्ष के किन्हीं रूपों के जन्म लेने की प्रतीक्षा हाथ पर हाथ रख करके करते रहना चाहिए। उन्होंने पहले अभियान के, पहलक़दमी दिखाने और संघर्ष की विधियां तथा उपाय तैयार करने में सक्रिय भाग लेने के कम्युनिस्टों के कर्तव्य के महत्व पर प्रकाश डाला था। लेनिन ने चेतावनी दी थी कि प्रक्रिया में ग़लतियां हो सकती हैं। "पहले अभियान" के जोखिम का राजनीतिक दुस्साहसिकतावादियों की अधाधुँध हरकतों से कुछ लेना-देना नहीं है। जब संघर्ष तेज़ करने की वस्तुगत आवश्यकता होती है, तब पार्टी की पहलक़दमी उस चिनगारी का काम दे सकती है जो जन-आन्दोलन की ज्वाला प्रज्वलित करती है। परिस्थिति का सही मूल्यांकन करने तथा संघर्ष के किन्हीं रूपों से दूसरे रूपों की ओर, जो क्रान्तिकारी आन्दोलन के उभार को बढ़ावा देते हैं, तेज़ी से मुड़ने की योग्यता में पार्टी की राजनीतिक परिपक्वता अभिव्यक्त होती है।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद, जो प्राणवान है, और निरन्तर विकसित होता रहता है, अमूर्त या गढ़े-गढ़ाये फ़ार्मूलों के बिलकुल ख़िलाफ़ है। सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्तिकारी संघर्ष के रूपों की बात नहीं सोचा करते बल्कि अनुभवों का, जनता द्वारा किये जाने वाले वास्तविक संघर्ष का वर्गीय अनुसरण करते हैं। क्रान्तिकारी आन्दोलन ज्यों-ज्यों विकसित होता जाता है तथा संघर्षरत आम जनता राजनीतिक दृष्टि से अधिकाधिक सचेत होती जाती है, संघर्ष के भिन्न मार्ग तथा रूप जन्म लेते हैं। कम्युनिस्ट इन रूपों का सामान्यीकरण करना, उन्हें सोद्देश्य बनाना अपना कर्तव्य मानते हैं।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद संघर्ष के रूपों के अध्ययन के प्रति ऐतिहासिक दृष्टि से ठोस रुख़ का तक़ाज़ा करता है। सम्बद्ध मंज़िल में सम्बद्ध आन्दोलन की ठोस परिस्थितियों का ऐतिहासिक विश्लेषण किये बिना संघर्ष के सम्बद्ध रूप को स्वीकार या अस्वीकार करना क्रान्तिकारी संघर्ष के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण रुख के विचार के प्रतिकूल है और उसके परिणामस्वरूप अनिवार्यत: पराजय होती है। संघर्ष के रूप का चयन राजनीतिक, राष्ट्रीय, पारिवारिक तथा जीवन की नित्यप्रति की अवस्थाओं पर निर्भर करता है।

क्रान्तिकारी आन्दोलन–वर्ग अथवा राष्ट्रीय मुक्तिसंघर्ष–विकास के भिन्न-भिन्न मंज़िलों से होकर गुज़रता है जिनकी विशेषता संघर्ष की घटती-बढ़ती प्रचण्डता है। संघर्ष का संगठित रूप संघर्ष के अनुरूप विविध स्वरूप निर्धारित करता है। लेनिन ने कहा था

"संगठित आर्थिक तथा राजनीतिक संकटों की किन्हीं अवधियों में वर्ग संघर्ष से परिपक्व होकर प्रत्यक्ष गृह युद्ध बन जाता है।"*

वर्ग संघर्ष संयोगवश अथवा किसी की सनक पर या किसी की दुर्भावना के कारण गृहयुद्ध में नहीं बदलता। वह तो क्रान्तिकारी विकास की लम्बी प्रक्रिया का परिणाम है। मुठभेड़ तथा आर्थिक व राजनीतिक लड़ाईयां बार-बार होती हैं, विकसित होती हैं, फ़ैलती हैं, तथा अधिकाधिक प्रचण्ड होती हैं और अन्ततः ऐसे बिन्दु पर पहुंच जाती हैं जहां वे एक वर्ग के विरुद्ध दूसरे वर्ग के सशस्त्र संघर्ष का रूप धारण कर लेती हैं। कुछ मामलों में तो यह सरकार के ख़िलाफ़ एक सीमित क्षेत्र में अल्पकालीन विप्लव होता है। दूसरे मामलों में वह पूरे देश को अपनी लपेट में लेने वाले लम्बे गृह युद्ध को अधिक जटिल रूप धारण करता है; अर्थात् राष्ट्र के दो भागों के बीच सशस्त्र संघर्ष बन जाता है। यह युद्ध आम तौर पर बीच-बीच में होने वाली बड़ी-बड़ी लड़ाइयों का सिलसिला है। इनके सध्य अपेक्षाकृत काफ़ी फ़ासला हुआ करता है तथा बीच की अवधि में अनेकानेक छोटी छापामार लड़ाइयां होती रहती हैं। छापामार लड़ाईयाँ व्यक्तियों या छोटे समूहों का सशस्त्र संघर्ष है। वे राष्ट्रीय मुक्ति या वर्ग संघर्य के अत्यधिक तेज़ हो जाने पर होती हैं। छापामार युद्ध उस समय जन्म लेता है जब किसी सम्बद्ध प्रदेश में जनता का संघर्ष बहुत ज़्यादा सरगर्म तो हो जाय परन्तु अवस्थाएं निर्णायक युद्ध के लिए अभी परिपक्व न हों।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ११, पृष्ठ २१६।

छापामार लड़ाई कब अवश्यम्भावी होती है ? लेनिन का विश्वास था कि छापामार लड़ाई उस वक्त अवश्यम्भावी होती है जब जन-आन्दोलन वस्तुत: विप्लव के बिन्दु पर पहुंच चुका हो तथा गृह-युद्ध की "बड़ी लड़ाइयों" के बीच कमोबेश लम्बा मध्यान्तर हो। इसका मतलब यह हुआ कि छापामार संघर्ष की शुरूआत का मुख्य प्रश्न संगठनात्मक नहीं, बल्कि सामाजिक-आर्थिक मामला है। सवाल यह है कि सम्बद्ध देश में सामाजिक विरोधाभास अत्यधिक तेज़ हुए हैं या नहीं, कि जनान्दोलन वास्तव में उथल-पुथल की बिन्दु तक पहुंच चुका है अथवा नहीं।

क्या छापामार संघर्ष को संघर्ष का मुख्य तथा अनन्य रूप माना जा सकता है ? नहीं, ऐसा नहीं माना जा सकता। लेनिन ने इस सवाल का उत्तर इस रूप में दिया था, "आबादी का अवारा भाग, बे-घरबार सर्वहारा तथा अराजकतावादी समूहों ने संघर्ष के इस रूप को सामाजिक संघर्ष का बेहतर और यहां तक कि अनन्य रूप माना था।"* अपने विचार को विकसित करते हुए लेनिन ने आगे कहा था, "सर्वहारा की पार्टी छापामार युद्ध को कभी संघर्ष की एक मात्र, यहां तक कि प्रमुख विधि भी कभी नहीं मान सकती, इसका मतलब यह है कि इस विधि को हमारी विधियों के मातहत किया जाये, कि वह युद्ध की प्रमुख विधियों का आनुपातिक हो तथा उसे समाजवाद के ज्ञानवर्द्धक तथा संगठनकारी प्रभाव से उदात्त बनाया जाये।"**

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ११, पृष्ठ २१६।
** व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ११, पृष्ठ २२१।

छापामार लड़ाई के महत्व को बढ़ाने-चढ़ाने, उसे एक मात्र साधन बनाने और देशकाल की ठोस अवस्थाओं से पृथक कर देने के अनिवार्यतः प्रतिकूल, यहां तक कि घातक परिणाम भी निकल सकते हैं।

इस सवाल के प्रति अनुत्तरदायित्वपूर्ण रुख़ की मिसाल है बर्मा तथा मलयेशिया में सरकार-विरोधी छापामार संघर्ष भड़काने के लिए पेकिंग के प्रायः किये जाने वाले आह्वान। हाल में हुए तथा-कथित "नवीं चीनी कम्युनिस्ट पार्टी कांग्रेस" के सभारम्भ के बाद ये आह्वान बार-बार गला फाड़-फाड़ कर किये गये। इस बीच बर्मा तथा मलयेशिया में गत दो दशकों का घटनाचक्र स्पष्ट रूप में संकेत करता है कि यदि छापामार आन्दोलन वस्तुपरक सामाजिक तथा राजनीतिक आधार पर खड़ा न हो तो वह निश्चित रूप में जन समर्थन खो बैठता है तथा टूट-फूट जाता है। इंडोनेशिया की हाल की घटनाएं भी सिद्ध करती हैं कि यह चीज़ सही है। सशस्त्र छापामार संघर्ष तभी सफल हो सकता है जब उसकी पूरी-पूरी तैयारी हो और उसे जन साधारण का समर्थन प्राप्त हो। इन लेनिनवादी प्रस्थापनाओं की उपेक्षा कर आज के माओवादियों ने इंडोनेशियाई कम्युनिस्टों का आह्वान किया है कि वे जंगलों में चले जायं तथा वहां से नियमित सेना तथा पुलिस टुकड़ियों के ख़िलाफ़ छापामार कार्यवाहियां आरम्भ करें। जो लोग प्रतिक्रियावादियों के हाथों कुचले गये हैं, उनकी भावनाओं को स्पर्श करते हुए माओवादियों ने कई इंडोनेशियाई देशभक्तों को इस दुस्साहसिकता में लपेटा है। वे

जनसाधारण के कारगर समर्थन के अभाव में उनके जल्दी में भर्ती किये गये दस्ते दण्ड देने के लिए तैनात टुकड़ियों के देखते-देखते शिकार बन गये। "हजारों इंडोनेशियाई क्रान्तिकारी मारे गये। एशिया पर अपना "क्रान्ति-मार्ग" थोपने की कोशिश कर रहे माओत्स-तुंग के गुर ने इस तरह इंडोनेशियाई प्रतिक्रियावाद की मुराद पूरी कर दी और खून की नदी में डुबोई गयी इंडोनेशियाई कम्युनिस्ट पार्टी का जो कुछ भाग बच गया था, उसे भी उसने फ़ौज की संगीनों के हवाले कर दिया।

छापामार लड़ाई तभी कारगर होती है जब वह जन-साधारण का संघर्ष हो, हालांकि छापामार छोटे-छोटे समूहों में काम करते हैं। वह तभी कामयाब हो सकती है जब योद्धाओं का जनसाधारण तथा स्थानीय जनता से सम्पर्क हो तथा उनका समर्थन प्राप्त हो। छापामार किसलिए हैं, यदि जनता को इसका पता न हो, इसकी वह क़द्र न करती हो, यदि वह यह अनुभव न करे कि छापामार उसके ध्येय का समर्थन करते हैं तो वह स्वभावतया उन्हें मदद देने से दूर रहेगी, उनके साथ शामिल नहीं होगी, और संघर्ष का कोई नतीजा नहीं निकलेगा। यदि ये छापामार अपने ईर्द-गिर्द के मेहनत-कशों की भावनाओं को नहीं समझते और उनके साथ उनका कोई सम्पर्क नहीं है, तो वह सही अर्थों में छापामार दस्ता नहीं है। अगर छापामार लड़ाई शुरू करने के लिए कोई विद्यमान सामाजिक अवस्थाओं तथा मेहनतकश जनता तथा आम शोषित लोगों की भावनाओं के बजाय अनुकूल भौगोलिक स्थिति, गहन वनों या ऊंचे

पर्वतों की बात ज़्यादा सोचें, यदि संयुक्त कार्यवाहियों के लिए जन-साधारण की तैयारी के बजाय शस्त्रास्त्रों के जख़ीरे की स्थिति की ज़्यादा चिन्ता हो तो संघर्ष निराशाजनक है, वह सही छापामार लड़ाई नहीं है।

वह सही अर्थों में छापामार युद्ध, व्यापक जन-संघर्ष उसी सूरत में बनता है, जब वह आतंकवादियों तथा षड़यंत्रकारियों के छिटपुट कार्रवाइयों से राष्ट्रव्यापी संघर्ष में परिणित होता है, जब वह उत्पीड़ितों तथा शोषितों का समान ध्येय बन जाता है।

छापामार लड़ाई एक वर्ग विशेष, उदाहरण के लिए कृषक समुदाय के संघर्ष का रूप नहीं है जैसा कुछ लोग मानेंगे। न वह चन्द लोगों के संघर्ष का रूप है। वह मज़दूरों और किसानों तथा मध्यम दर्जे की शहरी आबादी के संघर्ष का रूप हो सकता है।

छापामार संघर्ष के ठोस ऐतिहासिक रूप सर्वथा वैविध्य-पूर्ण हैं, वह अपनी समाजवादी प्रणाली की रक्षा के लिए जनता के क्रान्तिकारी युद्ध का भाग, या विदेशी उत्पीड़कों के ख़िलाफ़ जनता के क्रान्तिकारी युद्ध की आरम्भिक मंज़िल हो सकता है। राष्ट्रीय सेना द्वारा किये जाने वाले न्यायोचित संघर्ष के समर्थन में वह राष्ट्र के एक इलाक़े पर कब्ज़ा करने वाली विदेशी सेना के ख़िलाफ़ संघर्ष हो सकता है। इसी तरह का वह संघर्ष था जो द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान सोवियत क्षेत्र पर क़ब्ज़ा करने वाली फ़ासिस्ट फ़ौज के ख़िलाफ़ विशाल

मोर्चे पर छेड़ा गया था। वह उस विदेशी सेना के विरुद्ध संघर्ष हो सकता है जिसने राष्ट्रीय सेना को अभी अभी परास्त किया हो। राष्ट्रीय सेना के बचे-खुचे भागों तथा असैनिक लोगों का छापामार संघर्ष ताज़ा शक्तियों को एक जुट करना और आगे के लिए बड़ी लड़ाई का मार्ग प्रशस्त करना सम्भव बनाता है। इस तरह का वह संघर्ष था जो पूर्वी योरोप के जनगण ने जर्मन-उत्पीड़न के ख़िलाफ़ किया था। वह प्रतिक्रियावादियों द्वारा परास्त जनता द्वारा की जाने वाली लड़ाई का सिलसिला हो सकता है। स्पेनी जनता के संघर्ष की एक मंज़िल में ऐसी ही बात थी। राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्ति अगर कुछ परिस्थितियों के कारण, जैसा कि चीन में हुआ, लम्बी खिंच जाये तो वह छापामार युद्ध का भी रूप धारण कर सकती है। परिपक्व होती क्रान्तिकारी परिस्थिति की अवस्थओं में प्रतिगामी शासन के ख़िलाफ़ छापामार संघर्ष की शुरूआत क्रान्तिकारी आन्दोलन के विकास में एक सबसे ज़्यादा प्रेरणादायी तत्व और निरंकुशता के ख़िलाफ़ जनता की क्रान्ति में एक नया मोड़ बन सकता है। इसकी एक मिसाल है क्यूबा। छापामार लड़ाई कमोबेश सभी गृह युद्धों तथा क्रान्तिकारी युद्धों से सम्बन्ध रखती है। वियतनाम की वीर जनता का सफल संघर्ष इस रूप के जिसे दूसरे रूपों के साथ मिलाया गया, कुशलतापूर्ण उपयोग की शानदार मिसाल है।

छापामार युद्ध के प्रति किसी राजनीतिक पार्टी के रुख की चर्चा करते हुए लेनिन ने मांग की थी कि क्रान्तिकारियों को हर ठोस सामाजिक-राजनीतिक परिस्थिति का ठोस ऐतिहासिक विश्लेषण करना

चाहिए। कतिपय सामाजिक अवस्थाओं में छापामार युद्ध अराजकतावादी सरगर्मी का निरर्थक रूप अथवा क्रान्तिकारी संघर्ष का कारगर साधन बन सकता है। लेनिन ने निष्कर्ष निकाला कि ऐसे युग में जब वर्ग संघर्ष उग्र बनकर गृहयुद्ध की स्थिति तक पहुंच जाता है, तब यह कम्युनिस्टों का काम है कि वे जनसाधारण के आम छापामार युद्धों में भाग लें तथा उनका संचालन करें। राष्ट्रीय मुक्ति तथा वर्ग आन्दोलन के विविध रूपों का मार्क्सवादी-लेनिनवादी विश्लेषण वर्गगत तथा राष्ट्रीय उत्पीड़न के ख़िलाफ़, जनवाद, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और समाजवाद के लिए जनगण के क्रान्तिकारी संघर्ष का विश्वसनीय पथ-प्रदर्शक है।

जुलाई, १९२० में कोमिन्टर्न की दूसरी कांग्रेस की पूर्ववेला पर लेनिन ने उस संगठन में प्रवेश की शर्तें तैयार कीं। कांग्रेस ने चन्द संशोधनों के साथ उन्हें मंजूर किया। एक धारा में कहा गया है कि "जिन देशों में घेरे की अवस्था अथवा आपातकालीन अवस्था कम्युनिस्टों के लिए क़ानूनी ढंग से कार्य करना असम्भव बना दे, वहाँ यह नितान्त आवश्यक है कि क़ानूनी तथा ग़ैरक़ानूनी कार्य को मिला दिया जाये।"*

प्रवेश–नियमों का उद्देश्य नवनिर्मित कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल को ऐसी पार्टियों से बचाना था जो क्रान्तिकारी उभार की स्थिति में तो

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २०८।

अपने को कम्युनिस्ट घोषित करने के लिए तैयार हों, लेकिन वस्तुतः वे अवसरवादी हों। आमतौर पर ऐसी पार्टियां अपने क़ानूनी दर्जे के ख़तरे में पड़ते ही क्रान्तिकारी सिद्धान्तों तथा कांटों भरे संघर्ष को तिलांजलि देने के लिए तैयार रहती हैं। किसी भी क़ीमत पर वैधता ख़रीद सकने वाली पार्टियों को लेनिन क्रान्तिकारी नहीं मानते थे। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि इन्टरनेशनल को केवल उन्हीं संगठनों को अपने अन्दर लेना चाहिए जो "सर्वत्र...एक समानान्तर ग़ैर क़ानूनी संगठन का जो निर्णायक घड़ी में पार्टी को क्रान्ति के प्रति अपने कर्त्तव्य की पूर्ति में मदद देने की स्थिति में हो," निर्माण करना अपना कर्त्तव्य मानते हों।*

तब से बीत चुके लगभग ५० वर्षों के दौरान दुनिया में बहुत ज़बर्दस्त परिवर्तन हुए हैं। फ़ासिज़्म का पराभव, नये समाजवादी देशों का उदय और औपनिवेशिक प्रणाली की धसकन वे उपकरण हैं जिन्होंने कम्युनिस्ट पार्टियों को क़ानूनी तौर से काम करने की सम्भावनाएं प्रदान की हैं। परन्तु आज भी क़ानूनी तथा ग़ैरक़ानूनी काम को मिलाने वाला लेनिन का सिद्धान्त निम्नलिखित कारणों से किसी क्रान्तिकारी पार्टी के बड़े मानदण्ड के रूप में अर्थहीन नहीं हुआ है।

पूंजीवादी देशों तथा तृतीय विश्व में काम करने वाली आधी से ज़्यादा कम्युनिस्ट पार्टियों पर पाबन्दी लगी हुई है और

---

* व्ला० लेनिन संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २०८।

उन्हें मज़बूरी से छुपकर काम करना पड़ता है। उनके ख़िलाफ़ निर्ममतापूर्वक दमन-चक्र चलाया जाता है तथा कुछ देशों में तो (उदाहरण के लिए इंडोनेशिया तथा दक्षिणी अफ्रीकी गणराज्य में) कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता के लिए प्राणदण्ड दिया जाता है। ग्रीस में प्रतिक्रियावादियों कम्युनिस्टों का क़त्लेआम हो रहा है। स्पेन, पुर्तगाल तथा लैटिन अमरीकी देशों के अन्दर अनेकानेक पार्टी सदस्य फ़ासिस्ट आतंकवाद के शिकार बन चुके हैं।

जिन स्थानों में कम्युनिट पार्टियों पर सरकारी तौर पर पाबन्दी नहीं है, वहां भी उनका बराबर दमन किया जाता है। वहां पार्टी सदस्य होने का अर्थ है काम या नौकरी से हाथ धोना, कुत्सा अथवा उत्तेजना का शिकार होना। पूंजीवादी देशों में कम्युनिस्टों के ख़िलाफ़ सख़्त कार्रवाइयां सिर्फ़ यही साबित करती हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी को—भले ही वह ग़ैरक़ानूनी घोषित न की गयी हो—सदैव सतर्क रहना होगा क्योंकि यह क़ानूनीपन मात्र सापेक्ष है।

इन बातों को दृष्टिगत रखते हुए उन संशोधनवादियों के तर्क कितने वेतुके लगते हैं जो दलील देते हैं कि रूसी कम्युनिस्टों द्वारा क्रान्ति से पहले जब पार्टी छुपकर काम करती थी, हासिल किया गया अनुभव अब केवल ऐतिहासिक दिलचस्पी का विषय है। यदि ऐसा होता तो वस्तुतः कितना अच्छा होता। पर यह एक तथ्य है कि बहुत सी कम्युनिस्ट पार्टियां ग़ैरक़ानूनी ढंग से छुपकर काम कर रही हैं। संक्षेप में वे उस तरह काम कर रही है जिस तरह लेनिन ने कहा था।

गुप्त रूप में काम करने वाले किसी भी संगठन के मूलभूत नियम हैं : कर्त्तव्यों का उचित वितरण तथा हो रहे कार्य का कड़े ढंग से विशेषीकरण। लेनिन ने इस बात पर नज़र रखी कि इस सिद्धान्त का कड़ाई से पालन हो। ज़ारकालीन रूस में जब बोल्शेविकों की पार्टी छुपकर काम कर रही थी, उसका कार्य सम्बन्धी नियम था। नियम यह था कि उसके भिन्न-भिन्न कार्य, जैसे साहित्य की छपाई और वितरण, छुपाकर रखने की जगह की व्यवस्था करना, पैसा इक्ट्ठा करना, केन्द्रीय तथा स्थानीय संगठनों के बीच सम्पर्क रखना और पार्टी कार्यकर्ताओं को चुपके से निदेश भेजना—भिन्न-भिन्न लोग करें। ये लोग जिन कामों में जुटते थे, वे विस्मयकारी प्रतीत नहीं होते थे परन्तु वस्तुतः वीरत्वपूर्ण थे। उनमें से हर एक केवल उतना जानता था जितना उसके काम के लिए ज़रूरी था। वह उन्ही से सम्पर्क रखता था जिन से सम्पर्क रखना ज़रूरी होता था। छुपकर काम करने के अन्य सिद्धान्तों के साथ-साथ इस सिद्धान्त ने अधिकारियों के दमन चक्र से पार्टी तथा उसके नेताओं की रक्षा करना सम्भव बनाया।

फिर भी लेनिन का सिद्धान्त केवल यहीं तक सीमित नहीं था कि छुपकर काम कैसे किया जाये, कैसे गुपचुप काम करने में दक्ष बनाया जाये। लेनिन ने सिखाया कि इन सरगर्मियों को क़ानूनी कार्य से मिलाया जाना चाहिए। क़ानूनी कार्य से हाथ धोने का मतलब था जनसाधारण से सम्पर्क तोड़ बैठना और राजनीतिक प्रभाव में तेज़ी से ह्रास।

इंडोनेशिया की कम्युनिस्ट पार्टी के तहस-नहस होने के बाद पेकिंग के सलाहकारों ने कम्युनिस्टों से जंगलों में छुपने का आग्रह किया। बाजाब्ता सेना तथा पुलिस के ख़िलाफ़ "मज़बूत केन्द्रों" की स्थापना होने लगी। उद्देश्य था फ़ौजी कार्रवाहियां करना। १६६८ के ग्रीष्मकाल में इन 'मज़बूत केन्द्रों' के सफ़ाये के फलस्वरूप और ज़्यादा निरर्थक रक्तपात हुआ। इंडोनेशियाई कम्युनिस्ट पार्टी की यह अति दुःखद घटना साबित करती है कि अलग-अलग होने पर छुपकर की जाने वाली गतिविधियां वास्तविक राजनीतिक शक्ति का रूप धारण नहीं कर सकतीं।

माओवादियों की सलाह पर मलाया के कम्युनिस्टों को जंगलों में छुपे हुए अब कई साल हो गये हैं। वे लोग भी जन-साधारण से अलग-थलग हैं।

लेनिन का तात्पर्य इस प्रकार के गुप्त कार्य से नहीं है। लेनिन का छुपकर काम करने का मुख्य सिद्धान्त है गैर-क़ानूनी और क़ानूनी कार्यकलाप को मिलाना। इस सिद्धान्त का स्रोत है पार्टी का, जनसाधारण की पार्टी का मूल स्वरूप। और यदि परिस्थिति इस तरह की पार्टी को छुपकर काम करने के लिए विवश करती है, तो उसे देखना होगा कि आम जनता उसके अस्तित्व को निरन्तर अनुभव करती रहे। उस मेहनतकश जनता के बीच संगठनात्मक तथा शैक्षणिक कार्य करते रहना होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास ने इस सिद्धान्त की सच्चाई की पुष्टि की है। प्रतिक्रियावादी कितने ही उग्र क्यों

न हों, वे पार्टी को जनसाधारण से पूरी तरह अलग-थलग नहीं कर सकते, उसे अपनी सारी वैधशक्ति से वंचित नहीं कर सकते। कम्युनिस्टों का लम्बे अर्से से यह पक्का विश्वास रहा है कि जन-साधारण से सम्बन्ध रखने वाली पार्टी छुपकर कार्य करने के बावजूद जनसंगठनों में अपने लिए आधार हासिल कर सकती है। किसी देश विशेष में राजनीतिक हकूमत कितनी ही प्रतिक्रियावादी क्यों न हो, वह जन संगठनों का पूरी तरह से सफ़ाया नहीं कर सकती, उसे निर्वाचन प्रणाली आदि का दिखावा तो करना ही पड़ेगा। यह चीज़ वैध क्रान्तिकारी कार्य के लिए कुछ सुयोग देती है।

क़ानूनी सरगर्मी में जुटे रहने की कला छुपकर काम करने की कला से कम कठिन नहीं है। हो सकता है कि वह ज़्यादा कठिन ही हो। क़ानूनी सम्भावनाओं का उपयोग करना सीखने का अर्थ है किसी भी संगठन में, सब से ज़्यादा प्रतिक्रियावादी संगठनों तक में काम करना सीखना।

क़ानूनी संगठनों में काम करने वाले कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में अपने मुँह पर ताला नहीं डालते। वे उसके अस्तित्व को नहीं छुपाते। जहाँ भी सम्भव होता है, वे पार्टी की नीति को लागू कराने की कोशिश करते हैं।

कुछ साल पहले स्पेनी तथा पुर्तगाली कम्युनिस्ट पार्टियों में कई लोग यह मानते थे कि फ़ासिज़्म के अन्तर्गत कोई क़ानूनी कार्य

करना असम्भव है और जनसाधारण के बीच काम बन्द करना, छुपकर रहना ज़रूरी है।

परन्तु कम्युनिस्ट पार्टियों में इस संकीर्णतावादी दृष्टिकोण से छुटकारा पा लिया गया है। ग्वाटेमाला के एक कम्युनिस्ट ने कहा कि मुझे अपने अनुभव के ज़रिए पक्का विश्वास हो गया है कि यदि "कोई प्रचार नहीं किया जाता और पार्टी की आवाज़ जनता नहीं सुन पाती तो यह अपेक्षा करना असमम्भव है कि वह आपका पक्ष ग्रहण करेगी, आप की रक्षा करेगी तथा आपके पदचिन्हों पर चलेगी। यह बात कहकर उन्होंने ग़ैर-कानूनी तथा क़ानूनी कार्य को मिलाने की आवश्यकता को बहुत बढ़िया ढंग से पेश किया।

लेनिन कहा करते थे (और व्यवहार ने उनकी बात की पुष्टि कर दी है) कि किसी जनवाद-विरोधी राज्य में सफल क़ानूनी सरगर्मियां तब तक सम्भव नहीं हो सकतीं जब तक इन सरगर्मियों का निर्देशन गुप्त रूप से नहीं होगा, ठीक उसी तरह छुपकर काम करने वाले संगठन तब तक कारगर नहीं हो पायेंगे जब तक खुलकर काम करने वाले अनेकानेक संगठन उनके लिए आवरण का काम नहीं देंगे। लेनिन ने छुपकर काम करने को कभी क़ानूनी सरगर्मियों के मुक़ाबले में खड़ा नहीं किया। वह तो दोनों के मिलाने के पक्ष में थे।

परन्तु आज लेनिनवादी सिद्धान्तों का पालन करने वाली कम्युनिस्ट पार्टियों को क़नूनी सरगर्मियों से पूरी तरह नाता तोड़ने और

न हों, वे पार्टी को जनसाधारण से पूरी तरह अलग-थलग नहीं कर सकते, उसे अपनी सारी वैधशक्ति से वंचित नहीं कर सकते। कम्युनिस्टों का लम्बे अर्से से यह पक्का विश्वास रहा है कि जन-साधारण से सम्बन्ध रखने वाली पार्टी छुपकर कार्य करने के बावजूद जनसंगठनों में अपने लिए आधार हासिल कर सकती है। किसी देश विशेष में राजनीतिक हकूमत कितनी ही प्रतिक्रियावादी क्यों न हो, वह जन संगठनों का पूरी तरह से सफ़ाया नहीं कर सकती, उसे निर्वाचन प्रणाली आदि का दिखावा तो करना ही पड़ेगा। यह चीज वैध क्रान्तिकारी कार्य के लिए कुछ सुयोग देती है।

क़ानूनी सरगर्मी में जुटे रहने की कला छुपकर काम करने की कला से कम कठिन नहीं है। हो सकता है कि वह ज़्यादा कठिन ही हो। क़ानूनी सम्भावनाओं का उपयोग करना सीखने का अर्थ है किसी भी संगठन में, सब से ज़्यादा प्रतिक्रियावादी संगठनों तक में काम करना सीखना।

क़ानूनी संगठनों में काम करने वाले कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में अपने मुँह पर ताला नहीं डालते। वे उसके अस्तित्व को नहीं छुपाते। जहाँ भी सम्भव होता है, वे पार्टी की नीति को लागू कराने की कोशिश करते हैं।

कुछ साल पहले स्पेनी तथा पुर्तगाली कम्युनिस्ट पार्टियों में कई लोग यह मानते थे कि फ़ासिज़्म के अन्तर्गत कोई क़ानूनी कार्य

करना असम्भव है और जनसाधारण के बीच काम बन्द करना, छुपकर रहना ज़रूरी है।

परन्तु कम्युनिस्ट पार्टियों में इस संकीर्णतावादी दृष्टिकोण से छुटकारा पा लिया गया है। ग्वाटेमाला के एक कम्युनिस्ट ने कहा कि मुझे अपने अनुभव के ज़रिए पक्का विश्वास हो गया है कि यदि "कोई प्रचार नहीं किया जाता और पार्टी की आवाज़ जनता नहीं सुन पाती तो यह अपेक्षा करना असमम्भव है कि वह आपका पक्ष ग्रहण करेगी, आप की रक्षा करेगी तथा आपके पदचिन्हों पर चलेगी। यह बात कहकर उन्होंने ग़ैर-कानूनी तथा क़ानूनी कार्य को मिलाने की आवश्यकता को बहुत बढ़िया ढंग से पेश किया।

लेनिन कहा करते थे (और व्यवहार ने उनकी बात की पुष्टि कर दी है) कि किसी जनवाद-विरोधी राज्य में सफल क़ानूनी सरगर्मियां तब तक सम्भव नहीं हो सकतीं जब तक इन सरगर्मियों का निर्देशन गुप्त रूप से नहीं होगा, ठीक उसी तरह छुपकर काम करने वाले संगठन तब तक कारगर नहीं हो पायेंगे जब तक खुलकर काम करने वाले अनेकानेक संगठन उनके लिए आवरण का काम नहीं देंगे। लेनिन ने छुपकर काम करने को कभी क़ानूनी सरगर्मियों के मुक़ाबले में खड़ा नहीं किया। वह तो दोनों के मिलाने के पक्ष में थे।

परन्तु आज लेनिनवादी सिद्धान्तों का पालन करने वाली कम्यु-निस्ट पार्टियों को क़नूनी सरगर्मियों से पूरी तरह नाता तोड़ने और

क्रान्तिकारी संघर्ष में राइफ़ल को एक मात्र विश्वसनीय हथियार मानने के सरासर ग़लत संकीर्णतावादी रुख का ही मुक़ाबला नहीं करना पड़ रहा है, उन्हें तो छुपकर काम करने की विधियों का परित्याग के अवसरवादी विचार से भी लड़ना पड़ रहा है। यह ख़तरे से भरा रुख है जो संघर्षशील क्रान्तिकारी संगठन की जगह पार्टी को समझौतापरस्त संगठन बना सकता है।

वामपंथी संकीर्णतावाद तथा दक्षिणपंथी अवसरवाद बाहर से सर्वथा विपरीत लगने वाले रवैये हैं, परन्तु दोनों वस्तुत: एक ही दिशा में पहुंचाने वाले हैं। यह है—निष्क्रियता अथवा पराजय। दोनों रवैयों का नतीजा दरअसल अकर्मण्यता का पक्षपोषण है। दोनों हाथ पर हाथ रक्खे बैठे रहने तथा इन्तज़ार करने की ओर ले जाते हैं जिनमें संकीर्णतावादी क्रान्ति के दिन का तथा अवसरवादी लोग प्रतिक्रियावादी हकूमत के धीरे-धीरे कायापलट का इन्तज़ार करते हैं। इस तरह दो विरोधी मिलते हैं।

कम्युनिस्ट पार्टियों को भिन्न-भिन्न देशों में, भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में काम करना होता है और यह चीज़ क़ानूनी तथा ग़ैर-क़ानूनी सरगर्मियों का सन्तुलन निर्धारित करती है। क्रान्तिकारी अनुभव सिद्ध करता है कि कोई पार्टी तमाम परिस्थियों में अपनी संघर्षशील क्रान्तिकारी भावना उसी सूरत में क़ायम रख सकती है जब वह क़ानूनी और ग़ैरक़ानूनी सरगर्मियों को मिलाने के लेनिनवादी सिद्धान्त का पालन करे, ठीक इसी तरह अन्ततोगत्वा जन-

साधारण के साथ उसके घनिष्ट सम्पर्क के फलस्वरूप समस्त मेहनतकशों के हितार्थ बड़ी-बड़ी सफलताएं मिल सकती हैं।

क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास बताता हैं कि संघर्ष समतल ढंग से विकसित नहीं होता। वह टेढ़े-मेढ़े रास्ते से ज्यादा मिलता है। सफलताएं और पीछे हटना बारी बारी से होता है, पराजयों के बाद जीतें हासिल होती हैं।

क्रान्तिकारी पार्टियों को अदभुत रूप से कठिन अवस्थाओं में काम करना पड़ता है, उन्हें अप्रत्याशित बाधाओं पर काबू पाना होता है और क्रान्तिकारी उभार के समय कार्यनीतिक गलतियों या नीति के मामले में ग़लत अन्दाज़ों के जहां पार्टी के लिए गम्भीर परिणाम हो सकते हैं, वहाँ ऐसे समय जब क्रान्ति में भाटा आ गया हो और प्रतिक्रियावाद प्रचण्ड हो गया हो, ग़लत कार्यनीति पार्टी का ही ख़ात्मा कर सकती है। इसलिए लेनिनवाद हर क्रान्तिकारी पार्टी के लिए अपने तथा उन क्रान्तिकारी पार्टियों के जो कठोर अग्निपरीक्षाओं के बीच से गुज़र चुकी हों, यही नहीं उन्माद भरे प्रतिक्रियावाद के ज़माने में शिक़स्तें भी देख चुकी हों परन्तु अन्ततः निर्णायक विजय प्राप्त कर चुकी हों, अनुभव का अध्ययन करना अनिवार्य बनाता है। इससे गम्भीर परिणाम न होने देने, पार्टी को बनाये रखने और जनता को विजयी बनाने में मदद मिलेगी।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को १९०५ की प्रथम रूसी क्रान्ति के ऐतिहासिक अनुभव का अध्ययन करने का सुयोग प्राप्त है।

लेनिन ने उस क्रा[illegible]सिद्ध किया कि क्रान्तिकारी पार्टी को ऐसे समय किस तरह काम करना चाहिए जब क्रान्ति मे भाटा आ गया हो और प्रतिक्रियावाद का बोलबाला हो।

१६०५-१६०७ की क्रान्ति की पराजय के बाद घोर बर्बर प्रतिक्रियावाद आया। ज़ार, ज़मींदारों तथा पूंजीपतियों ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेने के कारण मेहनतकश जनता से कटु प्रतिशोध लिया। दण्ड देने के लिए तैनात टुकड़ियों ने उन लोगों का बेरहमी से क़त्लेआम किया जिन्होंने क्रान्ति में भाग लिया था। हिरावल मज़दूरों को ख़ासतौर पर निशाना बनाया गया। बोल्शेविकों की पार्टी घोर निर्मम प्रतिशोध का शिकार बनी। पुलिस ने अग्रणी पार्टी संगठनों पर ज़ुल्म ढाया, कम्युनिस्टों की अंधाधुंध गिरफ़तारी की, उन्हें निर्वासित किया तथा जेलों में ठूंसा।

वह बोल्शेविकों की पार्टी के लिए विषम काल था। स्थिति को एक और चीज़ ने भी विषम बनाया। बात यह थी कि अलग-अलग तरह के अवसरवादियों ने पार्टी नीति पर अन्दर से प्रहार किया। कुछ ने मांग की कि ग़ैरक़ानूनी पार्टी समाप्त कर दी जाय। वे इस तरह वस्तुतः यह सलाह दे रहे थे कि संघर्ष रोक दिया जाये। दूसरे इस पक्ष में थे कि पार्टी षड्यंत्रों और आतंकवादी कार्रवाइयों के जोखिम भरे मार्ग पर चले। ये कार्य पार्टी को निश्चित रूप में जन साधारण से अलग-थलग कर देते। पार्टी कठिन संकट से होकर गुज़री।

उस विषम काल में लेनिन ने उस समय के लिए प्रमुख कार्य की रूप-रेखा तैयार की तथा उसकी परिपुष्टि की। कार्य था-पार्टी को क़ायम रखना तथा मज़बूत बनाना, जनसाधारण से उसका सम्पर्क रखना और नयी लड़ाइयों तथा फिर से नये क्रान्तिकारी उभार की तैयारी करना। लेनिन ने बोल्शेविक पार्टी के कार्यनीतिक सिद्धान्त तथा ठोस कार्य भी निर्धारित किये। इन चीज़ों ने मिल-कर इस बारे में साफ़ तस्वीर पेश की कि क्रान्ति में भाटे के तथा प्रतिक्रियावाद में उभार के ज़माने में क्रान्तिकारी पार्टी को क्या करना चाहिए। अगर इन सिद्धान्तों का पालन न किया गया होता और ये ठोस कार्य न किये गये होते तो मुख्य रणनीतिक लक्ष्य की सिद्धि असम्भव होती।

लेनिन यह मानते थे कि क्रान्ति की पराजय की दशा में क्रान्तिकारी पार्टी का प्रधान कर्त्तव्य यह है कि वह पार्टी को व्यवस्थित ढंग से पीछे हटाने की व्यवस्था करे। लेनिन यह मानते थे कि व्यवस्थित ढंग से पीछे हटना नियोजित तथा सुसंगठित होना चाहिए जिसमें ज़रा भी भ्रान्ति तथा घबराहट न हो। संगठित ढंग से पीछे हटने का अर्थ है अधिकतम पार्टी सदस्यता, पार्टी की क़तारों की एकता तथा संघर्षशील भावना को बनाये रखना। सही ढंग से पीछे हटने के अर्थ और पार्टी के लिए उसके महत्व का विश्लेषण करते हुए लेनिन ने १९०५ की क्रान्ति की पराजय के बाद बोल्शेविकों की पार्टी की दशा का वर्णन करते हुए लिखा, "समस्त पराजित विपक्षी तथा क्रान्तिकारी पार्टियों में बोल्शेविकों ने सबसे अधिक व्यवस्थित ढंग

से पीछे हटने का काम पूरा किया जिसमें उनकी 'सेना' को सबसे कम नुक़सान पहुंचा, उसका मर्म भाग सर्वाधिक सुन्दर ढंग से सुरक्षित रहा, उल्लेखनीय दरारें (गहराई तथा असाध्यता की दृष्टि से) कम से कम पड़ीं, हौसला कम से कम पस्त हुआ और यह काम ऐसी श्रेष्ठ अवस्थाओं में किया गया कि व्यापकतम आधार पर और सर्वाधिक ठीक तथा उत्साहपूर्ण ढंग से काम दुबारा चालू किया जा सके।"*

लेनिन ठीक ढंग से पीछे हटने की व्यवस्था करने की योग्यता को क्रान्तिकारी पार्टी के शस्त्रागार का एक बड़ा कार्यनीतिक साधन, ऐसा हुनर मानते थे जो धावा बोलने से कम पेचीदा नहीं था। उन्होंने कहा कि "क्रान्तिकारी पार्टियों को अपनी शिक्षा पूरी करनी पड़ी। वे आक्रमण करना सीख रही थीं। ···उन्हें यह अनुभव करना पड़ा--और क्रान्तिकारी वर्ग कटु अनुभव से ही यह अनुभव करना सीखता है–कि जब तक कोई यह नहीं सीखता कि कैसे हमला करना चाहिए और कैसे ठीक से पीछे हटना चाहिए, विजय असम्भव है।"**

पीछे हटने की योग्यता हासिल किये बिना कोई क्रान्तिकारी पार्टी क्रान्तिकारी संघर्ष के जटिल घटनाक्रम में सफलता की आशा नहीं कर सकती।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २८

** उपरोक्त।

साथ ही लेनिन ने क्रान्तिकारी पार्टी को उस मुख्य ख़तरे से भी सावधान किया जो सही ढंग से पीछे हटने की राह रोक सकता है। यह ख़तरा पार्टी के अन्दर विभिन्न अवसरवादी तत्वों की, उन लोगों की ओर से आता है जो यह चाहते हैं कि पार्टी सुसंगठित ढंग से पीछे हटने के मार्ग पर चलने के बजाय किसी उतावलेपन से भरी नीति का अनुसरण करे या सिद्धान्तहीन समझौतापरस्ती का रास्ता पकड़े। लेनिन ने इस बात पर जोर दिया कि इनमें से किसी भी रास्ते को पकड़ने का अर्थ होगा पार्टी का ख़ातमा। स्मरण रहे, १९०५ की क्रान्ति की पराजय के बाद तथा प्रतिक्रियावाद के ज़माने में रूसी कम्युनिस्ट सही ढंग से पीछे हटने का काम संगठित करने में और अधिकांश सदस्यता को क़ायम रखने और मूलतः अपनी समग्र पार्टी-नीति को ज़ारी रखने में इस कारण सफल रहे, क्योंकि उन्होंने "क्रान्तिकारी लफ्फ़ाज़ों को, उन लोगों को बेनक़ाब किया तथा निकाल दिया, जो यह नहीं समझना चाहते थे कि पीछे हटना पड़ता है, कि यह जानना निहायत ज़रूरी है कि पीछे कैसे हटा जाता है।"*

लेनिन का यह विश्वास था कि क्रांति के पीछे हटने तथा प्रतिक्रियावाद के हमले के ज़माने में नयी कार्यनीति दूसरा महत्वपूर्ण पार्टी कार्य है। उनकी यह राय थी कि इस कार्य की मांग है कि देश में चल रही राजनीतिक परिस्थिति और प्रतिक्रियावादी शक्तियों

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २८।

की नयी नीति का मार्क्सवादी विश्लेषण किया जाय, कि संघर्ष के तात्कालिक कार्य निर्मित किये जाएं और क्रान्ति के सबक़ों का मूल्यांकन किया जाय; यह जरूरी है कि पार्टी में संकट के कारणों को स्पष्ट किया जाये, उस पर क़ाबू पाने के तरीके ढूंढे जायं और क़ानूनी तथा ग़ैरक़ानूनी पार्टी कार्य का परस्पर सम्बन्ध निर्धारित किया जाय। अन्त में नये क्रान्तिकारी उभार तथा नयी क्रान्ति की पूर्वाविश्यकताएं निर्धारित करना भी ज़रूरी है।

राजनीतिक परिस्थिति के विश्लेषण में राज्य का और विभिन्न वर्गों, आबादी के समूहों के अन्त:सम्बन्ध का विवाद विषद लक्षण–चित्रण करना, वर्गशक्तियों के संतुलन का तथा विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के आचरण का वस्तुपरक मूल्यांकन करना शामिल है। राजनीतिक परिस्थिति के विश्लेषण में किसी बुरे पहलू की जो किसी पार्टी कार्यकर्ता के आत्मगत विचार या निजी चित्-वृत्ति के कारण पैंदा हो सकता है, ज़रा भी सजाने-संवारने या इसके विपरीत बढ़ाने-चढ़ाने की किसी भी सूरत में कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। १९०५ की रूसी क्रान्ति की पराजय के बाद लेनिन ने उत्पन्न हुई नीति का आलोचनात्मक तथा वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन किया। उनके शब्द वास्तविकताओं के मूल्यांकन के प्रति यथार्थवादी तथा संजीदा रुख़ की शानदार मिसाल पेश करते हैं। उन्होंने कहा : "ज़ारशाही की फ़तह हुई। समस्त क्रान्तिकारी तथा विरोधी पार्टियां चकनाचूर कर दी गयीं। निराशा, पस्तहिम्मती, दरारें, फूट।"*

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१ पृष्ठ २७।

क्रान्ति की पराजय के बाद प्रतिक्रियावाद किस तरह का व्यवहार करता है, क्रान्तिकारी पार्टी को इसका साफ़ अन्दाज़ा होना चाहिए। लेनिन ने बताया कि रूसी प्रतिक्रान्ति, ज़ारशाही के हाकिमों और ज़मींदारों ने १९०५ की क्रान्ति के बाद ठीक उस तरह काम किया जिस तरह अतीत में विजयी प्रतिक्रान्तिकारी करते थे। ज़ारशाही के हाकिम तथा जमींदार मज़दूर वर्ग और कृषक समुदाय से बदला लेने के लिए उन पर बुरी तरह टूट पड़े और उन्होंने अतीत के सबक से लाभ उठाने की तथा नयी क्रान्ति का रास्ता रोकने के लिए क्रान्तिकारी शक्तियों के ख़िलाफ़ संघर्ष की एक कारगर नीति तैयार करने की कोशिश की। स्वेच्छाचारी ज़ारशाही हुकूमत ने सर्वथा प्रतिक्रियावादी भूस्वामी वर्ग जो उसका पुराना सामन्ती आधार था तथा गांव के नये पूंजीवादी लुटेरे कुलक वर्ग के बीच सांठ-गांठ की नीति अपनायी। लेनिन ने इस तिकड़म का पर्दाफ़ाश करते हुए उसे देश में नया, व्यापकतर समर्थन प्राप्त करने की प्रतिक्रियावाद इच्छा बताया ताकि क्रान्तिकारी मेहनतकश जनता से अधिक प्रभावशाली ढंग से लड़ा जा सके। इस चीज़ ने बोल्शेविकों की पार्टी को क्रान्तिकारी संघर्ष की सही कार्यनीति तैयार करने और रूसी मज़दूर वर्ग का नये क्रान्तिकारी युद्ध में नेतृत्व करने में मदद की।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया कि जब कोई पार्टी क्रान्ति के पीछे हटने के ज़माने में नयी क्रान्तिकारी कार्यनीति तैयार करती है तो उसे हर वर्ग की स्थिति तथा उनके सम्बन्ध को अति

सूक्ष्मतापूर्वक निर्धारित करना चाहिए। "वर्ग शक्तियों का स्तर-विन्यास जो क्रान्तिकारी युद्धों के समय अवश्यम्भावी रूप में होता है और क्रान्ति के भाटे के समय तथा प्रतिक्रियावाद के अभियान के दौरान पूरी तरह दिखाई देता है, इस कार्य को बहुत अधिक सुगम बनाता है। इसके साथ-साथ निश्चित वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली राजनीतिक पार्टियों में अन्तरिक क्रिया भी न्यूनाधिक रूप में स्पष्ट रूप मे होती है। ऐसी थी वह प्रक्रिया जो १६०५ की क्रान्ति के बाद शुरू हुई थी। उस समय जनक्रान्तिकारी संघर्ष के आकार को तथा मज़दूर वर्ग को देखकर मारे डर के रूसी बुर्जुआ के कुछ भागों की जान निकलने लगी थी। और उन्होंने ज़ारशाही के समर्थन में प्रतिक्रिया का पक्ष लिया। जब क्रान्ति चल रही थी, उस समय बुर्जुआ के विभिन्न भागों के आचरण दिखायी देने वाला भेद क्रान्ति के पीछे हटने के ज़माने में प्रायः पूरी तरह लुप्त हो गया।

सुनियोजित ढंग से पीछे हटने की तरह नयी कार्यनीति तैयार करने की बात सब किस्म के अवसरवादियों और मार्क्सवाद-विरोधियों, उनके विचारों तथा नीतियों के क्रान्ति विरोधी सारतत्व को बेनकाब किये बिना नहीं सोची जा सकती। १६०५ की क्रान्ति के बाद रूसी कम्युनिस्टों को दो मोर्चों पर लड़ना पड़ा, ताकि अपनी पार्टी की रक्षा की जा सके और उसे क़ायम रखा जा सके। एक ओर लेनिन और बोल्शेविकों ने पार्टी क़तारों के अन्दर अवसरवादियों के ख़िलाफ़, उन लोगों के ख़िलाफ़ निर्णायक युद्ध किया जो यह मांग कर रहे थे

कि पुराने क्रान्तिकारी नारों का परित्याग किया जाये। इसका मतलब दरअसल मज़दूर वर्ग पार्टी को निर्धारित करना था।

दूसरी ओर बोल्शेविकों के अवसरवादियों के एक दूसरे समूह के ख़िलाफ़ लड़ना पड़ा। इन लोगों ने "वामपंथी" लफ़्फ़ाज़ी की आड़ में एलान किया कि क्रान्तिकारियों को प्रतिक्रियावादी संसद में तथा दूसरे क़ानूनी संगठनों में बैठना शोभा नहीं देता, कि क्रान्तिकारियों का स्थान मोर्चों पर है। पार्टी कार्य के कानूनी रूपों को ठुकराने की उनकी नीति का निश्चित परिणाम यह निकलता कि पार्टी का जनसाधारण से नाता टूट जाता। जन-साधारण के बीच नित्य-प्रति के कार्य पूरा करने की उनकी अनिच्छा, ऐसे कार्य की जगह क्रान्तिकारी शब्दाडम्बर की प्रतिष्ठापना ने पार्टी के सामने सबसे बड़ा ख़तरा पैदा किया। या तो वह प्रत्याशा की शिकार बन जाये, या वामपंथी दुस्साहसिकतावादी कार्रवाइयों में पिल पड़े।

१६०५ की क्रान्ति की पराज्य के बाद रूसी कम्युनिस्टों की सरगर्मियों का विश्लेषण करते हुए लेनिन ने यह निष्कर्ष निकाला कि वामपंथी तथा दक्षिणपंथी अवसरवादियों के ख़िलाफ़ लड़े बिना सही क्रान्तिकारी कार्यनीति तैयार करना असम्भव है।

जो चीज़ नये क्रान्तिकारी उभार को जन्म दे सकती थी, उसे निर्धारित करते हुए लेनिन ने सिद्ध किया कि जिन वस्तुगत यथार्थताओं ने प्रथम रूसी क्रान्ति को जन्म दिया था, वे सब अब भी मौजूद हैं। क्रान्ति की पराजय के बाद एक भी बुनियादी समस्या

हल नहीं हुई है। वर्ग संघर्ष का तेज़ होना तथा नया क्रान्तिकारी उभार आना आवश्यम्भावी है। फलस्वरूप मज़दूर वर्ग तथा कृषक समुदाय को नयी क्रान्ति के लिए तैयार करने की वस्तुगत आवश्यकता ने पार्टी की कार्यनीति तथा रणनीति सम्बन्धी कार्यों को जन्म दिया। जहां तक कार्यनीति का सम्बन्ध है, इसका क्रान्तिकारी उभार के जमाने में अपनायी गयी पार्टी कार्यनीति से भिन्न होना लाज़िमी था। निरंकुश शासन को उखाड़ फेंकने के लिए जनता का आवाहन करने तथा आम हड़ताल व सशस्त्र विप्लव जैसी प्रत्यक्ष क्रान्तिकारी संघर्ष की विधियाँ अपनाने के बजाय नयी क्रान्ति की पूरी तैयारियां करने के लिए मेहनतकश जनसाधारण को शिक्षित और संगठित करने की विधिवत कार्य करना आवश्यक था। उस लक्ष्य का मतलब था ग़ैरक़ानूनी पार्टी को क़ायम रखना तथा मज़बूत बनाना और क्रान्तिकारी कार्य के लिए तमाम क़ानूनी सम्भावनाओं का उपयोग करना। इस चीज़ ने कम्युनिस्टों को यह सीखने के लिए विवश किया कि ग़ैरक़ानूनी पार्टी संगठन के पथ-प्रदर्शन में क़ानूनी तथा ग़ैरक़ानूनी कार्य को कैसे मिलाया जाता है। लेनिन ने ज़ोर देते हुए कहा कि, "यही वह बड़ी पराजय थी जिसने क्रान्तिकारी पार्टियों तथा क्रान्तिकारी वर्ग को एक असल और बहुत उपयोगी पाठ पढ़ाया जो ऐतिहासिक द्वन्द्ववाद के अन्तर्गत और राजनीतिक संघर्ष को समझने का पाठ है।"*

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१ पृष्ठ २७।

कम्युनिस्ट तथा मज़दूर पार्टियों को यद्यपि अति भिन्न अवस्थाओं में काम करना पड़ता है फिर भी, आधुनिक राजनीतिक अनुभव इस बात की पुष्टि करते हैं कि भिन्न-भिन्न देशों में क्रान्तिकारी आन्दोलन का विकास इतिहास तथा वर्ग संघर्ष के आम नियमों पर आधारित होते हैं। यही कारण है कि इस सम्बन्ध में लेनिन द्वारा बनाये गये ये सिद्धान्त कि, एक क्रान्तिकारी पार्टी को किस तरह करना काम चाहिए, बोल्शेविकों की पार्टी तथा अन्य क्रान्तिकारी पार्टियों के अनुभव द्वारा परखे और पुष्ट किये जा चुके सिद्धान्त हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन तथा एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के योद्धाओं के लिए अमूल्य महत्व रखते हैं।

समाजवादी निर्माण के सामान्य नियमों और विकास के ग़ैर-पूंजीवादी मार्ग के सम्बन्ध में लेनिन के विचार

एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका की घटनाओं से स्पष्ट है कि इन महाद्वीपों की जनता के सामने अब यह निर्णय करने की आवश्यकता आ गयी है कि युगों पुराने पिछड़ेपन से अपने को मुक्त करने और आर्थिक व सामाजिक प्रगति के कार्यों के लिए वह कौन-सा मार्ग अपनाये। वह अच्छी तरह से देख रही है कि जैसी भौतिक

और प्राविधिक प्रगति पूँजीवादी देशों में हुई है वह श्रमजीवी जन-समुदाय को सामाजिक असमानता की बुराइयों और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण से मुक्त नहीं करती। औपनिवेशिक शासन से मुक्त जनगण विकास के पूँजीवादी मार्ग को ठुकरा रहे हैं और सोवियत-संघ एवं अन्य देशों की ओर मुड़ रहे हैं, जिन्होंने समाजवादी क्रान्ति की है और अब समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं। वे इस अनुभव की ओर क्रान्तिकारी प्रक्रिया के नियमों को समझने के उद्देश्य से देख रहे हैं। ये नियम विकास का सही मार्ग पाने में उनकी सहायता करेंगे।

इसका यह मतलब नहीं है कि किसी देश में समाजवाद की ओर संक्रमण रूस या उन देशों के अनुरूप होगा जिन्होंने समाजवाद को अपना लिया है। जैसा कि लेनिन ने कहा : "सभी राष्ट्र समाजवाद तक पहुंचेंगे। यह अवश्यम्भावी है। किन्तु सब एक ही रास्ते से नहीं जायेंगे। हर एक राष्ट्र का अपना जनतंत्रिक रूप होगा, सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व अपनी तरह से कायम करेगा और सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं में समाजवादी कायापलट की गति अलग-अलग होगी।"*

आर्थिक विकास के स्तर, श्रमिक वर्ग की शक्ति, और राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के आकार और शक्ति की दृष्टि से एशिया के देश लैटिन

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २३, पृष्ठ ६९-७०।

अमरीका के देशों से काफ़ी भिन्न हैं, किन्तु एशिया और लटिन अमरीका दोनों में समाजवाद की ओर संक्रमण के नियम एक ही हैं। राष्ट्रीय विशेषताएं क्रान्तिकारी प्रक्रिया के मूल नियमों में परिवर्तन नहीं लातीं।

पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण के विशिष्ठ राष्ट्रीय विशेषताओं पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर, और प्रक्रिया के मूल नियमों का अनुसरण करने से इन्कार, हमें मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा की उपेक्षा या संशोधन करने तथा समाजवादी निर्माण के सामान्य सिद्धान्तों के उल्लंघन की ओर ले जाता है। इसका उपयुक्त उदाहरण चीन है। वहां महिमामण्डित माओ का अधिनायकत्व है। समाज के संचालन में जन समुदाय को उसकी भूमिका से वंचित रखा गया है। देश की अर्थव्यवस्था जड़वत् हो गयी है और जीवन-स्तर ऊंचे उठने में असफल हैं। यह सब माओ-त्से-तुंग गुट द्वारा क्रान्ति के मूल नियमों की अवहेलना का परिणाम है। चीनी क्रान्ति के विशिष्ठ राष्ट्रीय विशेषताओं पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर ने उसे न सिर्फ अन्य कम्युनिस्ट पार्टियों के विरोध में लाकर खड़ा किया है, बल्कि समाजवाद के विरुद्ध लड़ने वाले साम्राज्यवादियों का भागीदार बना दिया है।

इतिहास और पूंजीवादी समाज के विकास के नियामक नियमों के अध्ययन और सर्वहारा वर्ग तथा बुर्जुआ वर्ग के बीच संघर्ष के स्वरूप और सम्भावनाओं के विश्लेषण से मार्क्सवाद-लेनिनवाद के

गौरव ग्रन्थ (कलासिक) इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि समाजवाद अवश्यम्भावी रूप से पूंजीवाद को हटाकर वहां स्थापित होगा। किन्तु उन्होंने इस बात की ओर भी संकेत किया कि यह परिवर्तन पूंजीवाद के शनैः शनैः समाजवाद में परिवर्तन या कतिपय बहादुर व्यक्तियों की स्वकल्पित धारणा के परिणामस्वरूप नहीं होगा। श्रमजीवी जनता तभी मुक्ति पा सकती है जब वह सक्रिय क्रान्तिकारी संघर्ष प्रारम्भ करे। सिर्फ समाजवादी क्रान्ति करने और अपने हाथों सत्ता लेने के बाद ही श्रमजीवी जनता एक नये समाजवादी समाज का निर्माण शुरू करने में समर्थ होगी।

अधिनायकतंत्र ऐसा कुछ नहीं है जिसका आविष्कार मार्क्सवादी-लेनिनवादियों ने किया हो। मार्क्स और एंगेल्स ने सिद्ध कर दिया है कि वर्गों में विभाजित हर समाज में राजनीतिक सत्ता (और इसका मतलब है कि सम्पूर्ण राजतंत्र) शासक वर्ग के हाथों में होती है और उसके वर्ग-हितों को साधती है। यद्यपि शासक वर्गों के शासन के रूप भिन्न हो सकते हैं, उनका सार-तत्व सदा एक ही—एक या दूसरे वर्ग का अधिनायकतंत्र—रहता है। पूंजीवादी देशों में बुर्जुआ वर्ग शासक वर्ग है। देश की आर्थिक और राजनीतिक सत्ता उसके हाथों में होती है और सरकार उसके हितों और विशेषाधिकारों की रक्षा के लिए होती है।

बुर्जुआ विचारक पूंजीवादी समाज में राजसत्ता के वास्तविक स्वरूप के बारे में श्रमजीवी जनता को भ्रम में डालने की यथाशक्ति प्रयत्न करते हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमरीका में

''जन-पूँजीवाद'' का सिद्धान्त काफ़ी प्रचलित है। इसका उद्देश्य अमरीकी समाज के तीव्र वर्ग-विरोधों पर परदा डालना और उसे स्वतंत्र एवं जनतांत्रिक समाज के रूप में प्रस्तुत करना है। किन्तु यह देखना कठिन नहीं है कि अमरीकी सरकार किनके हितों को साधती है। क्या वियतनाम में युद्ध की आवश्यकता अमरीकी जनता को है? निश्चित रूप से नहीं। बुर्जुआ वर्ग अर्थात् अमरीकी इजारेदार शस्त्रास्त्रों की होड़ से अपार मुनाफ़ा प्राप्त करते हैं। उन्हें ही इस लड़ाई की आवश्यकता है। क्या किसी सच्चे जनतांत्रिक देश में जातीय भेद-भाव सम्भव है? पुनः उत्तर है, नहीं। किन्तु जातीय भेद-भाव संयुक्त राज्य में है जहां नीग्रो जनता के विरोध-प्रदर्शन को शासक वर्ग द्वारा बेरहमी से दबा दिया जाता है।

पूंजीवादी देशों में राजतंत्र, फ़ौज, पुलिस, और न्यायालय गरीबों के विरुद्ध धनी लोगों, और श्रमिकों एवं किसानों के विरुद्ध पूँजीपतियों एवं भूमिपतियों के हितों को साधते और उनकी रक्षा करते हैं। इसीलिए मार्क्स और एंग्रेल्स ने सिखाया कि श्रमजीवी जनता तब तक स्वतंत्रता नहीं पा सकती, जब तक वह पूंजीपतियों और भूमिपतियों की शक्ति का अन्त और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकतंत्र की स्थापना नहीं कर देती।

मार्क्स और एंगेल्स ने कम्युनिस्ट घोषणापत्र में लिखा कि ''श्रमिक वर्ग की क्रान्ति का काम है सर्वहारा को शासक वर्ग के दर्जे पर पहुँचाना।''*

---

*कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स, संकलित कृतियां, खण्ड १, पृष्ठ ५३।

गौरव ग्रन्थ (कलासिक) इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि समाजवाद अवश्यम्भावी रूप से पूंजीवाद को हटाकर वहां स्थापित होगा। किन्तु उन्होंने इस बात की ओर भी संकेत किया कि यह परिवर्तन पूंजीवाद के शनैः शनैः समाजवाद में परिवर्तन या कतिपय बहादुर व्यक्तियों की स्वकल्पित धारणा के परिणामस्वरूप नहीं होगा। श्रमजीवी जनता तभी मुक्ति पा सकती है जब वह सक्रिय क्रान्तिकारी संघर्ष प्रारम्भ करे। सिर्फ समाजवादी क्रान्ति करने और अपने हाथों सत्ता लेने के बाद ही श्रमजीवी जनता एक नये समाजवादी समाज का निर्माण शुरू करने में समर्थ होगी।

अधिनायकतंत्र ऐसा कुछ नहीं है जिसका आविष्कार मार्क्सवादी-लेनिनवादियों ने किया हो। मार्क्स और एंगेल्स ने सिद्ध कर दिया है कि वर्गों में विभाजित हर समाज में राजनीतिक सत्ता (और इसका मतलब है कि सम्पूर्ण राजतंत्र) शासक वर्ग के हाथों में होती है और उसके वर्ग-हितों को साधती है। यद्यपि शासक वर्गों के शासन के रूप भिन्न हो सकते हैं, उनका सार-तत्व सदा एक ही–एक या दूसरे वर्ग का अधिनायकतंत्र–रहता है। पूंजीवादी देशों में बुर्जुआ वर्ग शासक वर्ग है। देश की आर्थिक और राजनीतिक सत्ता उसके हाथों में होती है और सरकार उसके हितों और विशेषाधिकारों की रक्षा के लिए होती है।

बुर्जुआ विचारक पूंजीवादी समाज में राजसत्ता के वास्तविक स्वरूप के बारे में श्रमजीवी जनता को भ्रम में डालने की यथाशक्ति प्रयत्न करते हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमरीका में

"जन-पूँजीवाद" का सिद्धान्त काफ़ी प्रचलित है। इसका उद्देश्य अमरीकी समाज के तीव्र वर्ग-विरोधों पर परदा डालना और उसे स्वतंत्र एवं जनतांत्रिक समाज के रूप में प्रस्तुत करना है। किन्तु यह देखना कठिन नहीं है कि अमरीकी सरकार किनके हितों को साधती है। क्या वियतनाम में युद्ध की आवश्यकता अमरीकी जनता को है? निश्चित रूप से नहीं। बुर्जुआ वर्ग अर्थात् अमरीकी इजारेदार शस्त्रास्त्रों की होड़ से अपार मुनाफ़ा प्राप्त करते हैं। उन्हें ही इस लड़ाई की आवश्यकता है। क्या किसी सच्चे जनतांत्रिक देश में जातीय भेद-भाव सम्भव है? पुनः उत्तर है, नहीं। किन्तु जातीय भेद-भाव संयुक्त राज्य में है जहां नीग्रो जनता के विरोध-प्रदर्शन को शासक वर्ग द्वारा बेरहमी से दबा दिया जाता है।

पूंजीवादी देशों में राजतंत्र, फ़ौज, पुलिस, और न्यायालय गरीबों के विरुद्ध धनी लोगों, और श्रमिकों एवं किसानों के विरुद्ध पूँजीपतियों एवं भूमिपतियों के हितों को साधते और उनकी रक्षा करते हैं। इसीलिए मार्क्स और एंग्रेल्स ने सिखाया कि श्रमजीवी जनता तब तक स्वतंत्रता नहीं पा सकती, जब तक वह पूंजीपतियों और भूमिपतियों की शक्ति का अन्त और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकतंत्र की स्थापना नहीं कर देती।

मार्क्स और एंगेल्स ने कम्युनिस्ट घोषणापत्र में लिखा कि "श्रमिक वर्ग की क्रान्ति का काम है सर्वहारा को शासक वर्ग के दर्जे पर पहुँचाना।"*

*कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स, संकलित कृतियां, खण्ड १, पृष्ठ ५३।

उन्होंने बतलाया कि कम्युनिस्टों का तात्कालिक कार्य "बुर्जुआ प्रभुत्व को उखाड़ फेंकना सर्वहारा द्वारा राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करना है।"*

क्रान्तिकारी संघर्ष के इतिहास का अध्ययन करते हुए मार्क्स और एंगेल्स इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि सत्ता अधिकृत करने के बाद सर्वहारा के सर्वप्रथम कार्यों में एक होना चाहिए, पुरानी राज्य-मशीनरी—राज्य-अंगों, फौज, पुलिस, न्यायालय और सत्ता के अन्य बुर्जुआ गठनों को तोड़ डालना। मार्क्स और एंगेल्स ने लिखा कि, "सर्वहारा अपनी राजनीतिक प्रभुता का प्रयोग बुर्जुआ वर्ग के हाथों से, धीरे-धीरे सारी पूँजी छीन लेने, उत्पादन के समस्त उपकरणों को राज्य के हाथों में, अर्थात् शासक वर्ग के रूप में संगठित सर्वहारा के हाथों में केन्द्रित करने के लिए करेगा।"†

१९१७ की समाजवादी क्रान्ति के बाद रूसी श्रमिकों ने ठीक यही किया। बोल्शेविकों के नेतृत्व में, गृहयुद्ध की कठिन अवस्थाओं में उन्होंने बिल्कुल नये राज्य संघटकों—श्रमिकों, किसानों और सैनिकों के प्रतिनिधियों की सोवियतों की स्थापना की। उन्होंने पुराने न्यायालयों के स्थान पर जनता के न्यायालय खोले जो क्रान्ति के हितों की रक्षा करेंगे। उन्होंने नव-संस्थापित सोवियत जनतंत्र की रक्षा के लिए लाल सेना का संगठन किया।

---

* वही, पृष्ठ ४६।

† वही, पृष्ठ ५३।

सर्वहारा अधिकनायकतंत्र श्रमजीवी जनता के लिए न सिर्फ़ क्रान्ति के शुरू के दिनों में ही आवश्यक है जब बुर्जुआ वर्ग के विरुद्ध संघर्ष बहुत तेज़ होता है, बल्कि बुर्जुआ वर्ग के उखाड़ फेंके जाने के बहुत काल बाद तक भी आवश्यक होता है। मार्क्स ने अपनी पुस्तक **गोथा कार्यक्रम की आलोचना** में लिखा : "पूंजीवादी और कम्युनिस्ट समाज के बीच एक के दूसरे में क्रान्तिकारी रूपान्तरण का काल है। इसके अनुरूप ही राजनीतिक संक्रमण का एक काल है जिसके अन्तर्गत राज्य **सर्वहारा के क्रान्तिकारी अधिनायकतंत्र** के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।"*

मार्क्स और एंगेल्स ने अडिग रूप से सब प्रकार के उन अवसरवादियों के विरुद्ध संघर्ष किया जिन्होंने सर्वहारा के अधिनायकतंत्र की आवश्यकता से इन्कार करने की कोशिश की। मार्क्स और एंगेल्स की मृत्यु के बाद यूरोपीय सोशल डेमोक्रेटों के दक्षिणपंथ के नेताओं ने, जिन्होंने श्रमिक वर्ग के प्रवक्ता की भूमिका निभाने और उसके एकमात्र सुसंगत सिद्धान्तकार होने का दावा किया, वैज्ञानिक समाजवाद के संस्थापकों के सर्वहारा अधिनायकतंत्र से सम्बन्धित विचारों को दफ़नाने की कोशिश की। जब रूस में समाजवादी क्रान्ति सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गयी और सर्वहारा अधिनायकतंत्र की स्थापना हुई तो उन्होंने उसके विरुद्ध कुत्सा पूर्ण प्रचार शुरू किया और

---

* कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स : संकलित कृतियां, खण्ड २, पृष्ठ ३२-३३।

जोर देकर कहा कि सर्वहारा अधिनायकतंत्र जनतंत्र और स्वतंत्रता का निषेध है।

सर्वहारा अधिनायकतंत्र के इन आलोचकों को उत्तर देते हुए लेनिन ने इंगित किया कि सर्वहारा अधिनायकतंत्र का अर्थ श्रमजीवी जनता के लिए वास्तविक जनतंत्र—देश की विशाल जनसंख्या के लिए जनतंत्र है। इस दृष्टि से यह बुर्जुआ जनतंत्र से मूलरूप में भिन्न है, जो बुर्जुआ वर्ग के आधिपत्य के राजनीतिक रूप के सिवाय और कुछ नहीं है। लेनिन ने लिखा कि "बुर्जुआ जनतंत्र सदा सीमित, खण्डित, झूठा और पाखण्डी होता है। वह समृद्ध लोगों के लिए स्वर्ग तथा शोषित एवं दरिद्र लोगों के लिए एक जाल व धोखा है; और पूंजीवाद के अधीन उसे ऐसा रहना ही होगा।"*

सर्वहारा अधिनायकतंत्र के अन्तर्गत स्थिति भिन्न है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वहां परम स्वतंत्रता होगी। स्थिति इसके विपरीत है। लेनिन ने लिखा कि, "सर्वहारा अधिनायकतंत्र उत्पीड़कों, शोषकों और पूंजीपतियों की स्वतंत्रता पर बहुत से प्रतिबन्ध लगाता है।"† किन्तु साथ ही गरीबों और जनता के लिए सर्वहारा अधिनायकतंत्र का अर्थ व्यापक जनतंत्र है।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २८, पृष्ठ २४३।

† व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २५, पृष्ठ ४६१।

यही श्रमजीवी जनता के हाथों में सत्ता और पूंजीपति वर्ग के आधिपत्य में मूल अन्तर है।

लेनिन ने उन बुर्जआ सिद्धान्तकारों की कड़ी आलोचना की जो सर्वहारा अधिनायकतंत्र को ऐसी सत्ता के रूप में पेश करते थे कि वह सिर्फ़ मनुष्य जाति द्वारा सृजित के विनाश में सक्षम है किन्तु अपने आप सृजनात्मक प्रयत्नों को प्रारम्भ नहीं कर सकता।

निश्चिन्त रहें कि, पुराने बुर्जुआ राज्ययंत्र को तोड़े बिना, निजी सम्पत्ति की व्यवस्था को समाप्त किये बिना, बुर्जुआ विचारधारा के प्रभाव को नष्ट किये बिना श्रमजीवी जनता अपने वर्ग शत्रुओं पर विजय नहीं पा सकती। लेनिन ने इंगित किया कि ये कार्य सर्वहारा अधिनायक-तंत्र के कार्य का सिर्फ़ एक अंश है। दूसरा, सर्वाधिक महत्वपूर्ण और कठिन अंश एक नये समाजवादी राज्य की स्थापना है।

रूस में सर्वहारा अधिनायकतंत्र की स्थापना के बाद के प्रारम्भिक वर्षों के दौरान पुराने राजतंत्र की समाप्ति का अनुगमन नये राजतंत्र के निर्माण ने किया। निजी सम्पत्ति की व्यवस्था के उन्मूलन का अनुसरण लोक सम्पत्ति के सृजन ने किया। सोवियत सत्ता, श्रमजीवी जनता की सत्ता द्वारा निकाले गये प्रारम्भिक फरमानों का उद्देश्य भूमि, उद्योग, बैंकों और परिवहन का राष्ट्रीयकरण, देश की अर्थव्यवस्था का निर्माण और जनता के जीवन-स्तर को ऊंचा

उठाना था। अन्तिम विश्लेषण के अनुसार सोवियत संघ की आज की विशाल उपलब्धियां सर्वहारा अधिनायकतंत्र के सृजनात्मक प्रयत्नों के परिणाम हैं।

लेनिन ने उन लोगों की गलतियाँ भी बतलाईं जो सर्वहारा अधिनायकतंत्र के सिर्फ उसी पक्ष को देखते हैं जो बल-प्रयोग से सम्बद्ध है। उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि श्रमजीवी जनता की सत्ता बुर्जुआ वर्ग और अन्य शोषकों के प्रति बल प्रयोग से बच नहीं सकती। क्रान्ति की उपलब्धियों को क्रान्ति-विरोधी शक्तियों से सुरक्षित और क्रान्तिकारी शासन को उखाड़ फेंकने के उनके प्रयासों को नाकाम करने के लिए उसे ऐसा बाध्य होकर करना पड़ता है।

नवस्थापित सोवियत राज्य को गृह युद्ध के दिनों में बल-प्रयोग करना पड़ा। रूसी श्रमिकों और किसानों ने शोषकों, यानी उखाड़ फेंके गये रूसी पूंजीपतियों और भूमिपतियों के आक्रमण से अपने देश की रक्षा हाथों में बन्दूकें लेकर की।

सोवियत राज्य को फिर, आन्तरिक प्रतिक्रान्ति के साथ मिल कर आक्रमण करने वाले चौदह बाहरी देशों को मार भगाने के लिए बल प्रयोग करना पड़ा।

हाँ, यह बल-प्रयोग था, किन्तु सिर्फ विश्व में श्रमिकों और किसानों के प्रथम राज्य की उपलब्धियों को सुरक्षित रखने के लिए।

सर्वहारा अधिनायकतंत्र के हितों की रक्षा के लिए बल-प्रयोग की आवश्यकता आज भी है, क्योंकि संसार में ऐसी शक्तियाँ अब भी हैं जो कालचक्र को पीछे की ओर ले जाना चाहेंगी। इसके बावजूद, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सर्वहारा अधिनायकतंत्र के अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलुओं को हम उसके संगठनात्मक और सृजनात्मक कार्यों में देखते हैं। सोवियत सरकार के शासन काल में एक शक्तिशाली सेना का संगठन किया गया है जो श्रमजीवी जनता और विश्व शान्ति के हितों की रक्षा करती है। एक शक्तिशाली समाजवादी अर्थव्यवस्था का निर्माण किया गया है और जनता का जीवन एवं सांस्कृतिक स्तर तेजी से ऊंचा होता जा रहा है। श्रम और सार्वजनिक सम्पत्ति के प्रति जनता ने एक बिल्कुल नया दृष्टिकोण अपनाया है। सोवियत राज्य के संगठनात्मक और शैक्षिक कार्यों के ही परिणाम स्वरूप सोवियत संघ अल्पकाल में विरासत में मिले पुराने पिछड़ेपन को दूर कर दुनिया के अत्यधिक विकसित देशों में एक हो गया है।

लेनिन ने अपनी कृतियों में यह दर्शाया कि समाजवाद के निर्माण के लिए श्रमजीवी जनता की सत्ता स्थापित करने की आवश्यकता क्यों है। उन्होंने बतलाया कि समाजवादी क्रान्ति का नेता बनने के लिए सिर्फ श्रमजीवी वर्ग ही पर्याप्त रूप से सुसंगठित तथा आवश्यक राजनीतिक चेतना से सम्पन्न है। श्रमजीवी वर्ग के पास कोई निजी सम्पत्ति नहीं है इसलिए सिर्फ वही वस्तुपरक दृष्टि से और पूंजीवाद के विरुद्ध संघर्ष में अडिग रूप से लगे रहने में समर्थ है।

१९१७ को रूसी समाजवादी क्रान्ति के पहले, देश का श्रमजीवीवर्ग संख्या की दृष्टि से इनना बड़ा नहीं था जितना किसान-समुदाय था। इसके बावजूद अपने विशिष्ठ गुणों के कारण ज़ारशाही को उखाड़ फेंकने और पूंजीवाद को ख़त्म करने की अपनी लड़ाई में श्रमजीवी वर्ग रूस की श्रमजीवी जनता का नेता बन गया।

साथ ही लेनिन पहले मार्क्सवादी थे जिन्होंने दर्शाया कि श्रमिक वर्ग अपने अधिनायकतन्त्र को अन्य श्रमजीवी जनता और सबसे ऊपर किसानों के घनिष्ट सहयोग से ही सफलतापूर्वक चला सकता है। लेनिन ने लिखा कि "सर्वहारा अधिनायकतंत्र पूँजी के विरुद्ध श्रमजीवी जनता के हिरावल सर्वहारा और श्रमजीवी जनता के अन्य अनेक ग़ैर-सर्वहारा स्तरों (निम्न मध्यम वर्ग, छोटे मालिकों किसान-समुदाय, बुद्धिजीवियों, आदि), या इन स्तरों के बहुसंख्यक लोगों की वर्ग मैत्री का एक विशिष्ट रूप है, वह ऐसी मैत्री है जिसका लक्ष्य पूंजी को पूर्ण रूप से उखाड़ फेंकना और बुर्जुआवर्ग के प्रतिरोध व उसके द्वारा पूंजीवाद को पुनर्जीवित करने के प्रयासों को दबाना है; समाजवाद की पूरे तौर पर स्थापना करना और उसे सुदृढ़ बनाना है।"*

पूँजीवाद के उन्मूलन और समाजवाद की विजय के लिए सर्वहारा अधिनायकतंत्र के अत्यधिक महत्व की ओर इंगित करते हुए लेनिन ने सिखाया कि यह सदा क़ायम नहीं रहेगा क्योंकि सर्वहारा

* व्ला. लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २९, पृष्ठ ३८१

को अधिनायकतंत्र की आवश्यकता सदा के लिए अपना आधिपत्य स्थापित करने के वास्ते नहीं है, बल्कि वर्गविहीन समाज की स्थापना और राज्य के विदीर्ण होने की अवस्थाएँ लाने के लिए है। इस मंज़िल की ओर ले जाने वाला रास्ता आसान नहीं बल्कि लम्बा और जटिल है।

रूस और कुछ अन्य यूरोपीय तथा एशियाई देशों की सफल समाजवादी क्रान्ति ने सर्वहारा अधिनायकतत्र के महत्व से सम्बन्धित मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के विचारों का ठीक होना सिद्ध कर दिया है। इतिहास ने दिखा दिया है कि सर्वहारा अधिनायकतंत्र श्रमजीवी जनता के हाथों में पूंजीवाद के ख़िलाफ़ समाजवाद के लिए संघर्ष करने का मुख्य अस्त्र है।

भिन्न-भिन्न देशों और भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक अवस्थाओं में सर्वहारा अधिनायकतंत्र ने भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण किये हैं। लेनिन ने लिखा कि, "पूंजीवाद से कम्युनिज़म में संक्रमण का अति प्रचुर और विविध राजनीतिक रूप होना ध्रुव निश्चित है, किन्तु उसका अनिवार्यत: एक ही सार होगा : **सर्वहारा अधिनायकतंत्र**।"*

शासक शक्ति के रूप में अपने कार्यों को पूरा करने के लिए श्रमिक वर्ग को किस चीज़ की आवश्यकता है? सर्वहारा

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड २५, पृष्ठ १४३।

अधिनायकतंत्र को मुख्यतया इस तथ्य से ताकत मिलती है क्योंकि वह श्रमजीवी जन समूह, विशेषकर किसान-समुदाय के साथ औद्योगिक श्रमिकों की मैत्री पर आधारित है। श्रमिक किसानों और समाज के सभी निम्न मध्यमवर्गीय भागों का नेतृत्व करते हैं और उन्हें बुर्जुआ और निम्न मध्यम वर्गीय विचारों से धीरे धीरे मुक्त करते हैं।

यह कार्य समझा-बुझा कर, मैत्रीपूर्ण सहायता से और आदर्श उपस्थित करके किया जाता है। जन सख्या के कृषक एवं निम्न मध्यम वर्गीय भागों के साथ व्यवहार में सर्वहारा अधिनायकतंत्र बल-प्रयोग को ठुकरा देता है, वह उनका स्वत्वहरण या दमन नहीं करता। लेनिन ने ज़ोर दिया कि किसानों के साथ व्यवहार में आज्ञा और आदेश जारी न किये जांय।

सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों में उन सब जन-तांत्रिक तत्वों की व्यापक मैत्री की ओर रूझान रही है जिस पर श्रमजीवी वर्ग का शासन आधारित है। रूस में क्रान्ति के तुरन्त बाद इस मैत्री में किसानों का सबसे निर्धन हिस्सा शामिल हो गया। बाद में, शेष श्रमजीवी किसान भी इसमें आ गये। जनवादी जन-तंत्रों में तो समाजवादी क्रान्ति होते ही श्रमजीवी वर्ग ने तमाम श्रमजीवी किसानों, शहरों के छोटे मालिकों, और अन्य जनतांत्रिक शक्तियों से मैत्री स्थापित कर ली।

इस अनुभव का आज एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के लिए विशेष महत्व है। वहां श्रमजीवी वर्ग आमतौर से अल्प

संख्या में और प्राय: दुर्बल ढंग से संगठित है। वहां बहुत बड़ी जनसंख्या किसानों की है। ऐसी अवस्थाओं में क्रान्ति के नेता के रूप में श्रमजीवी वर्ग सिर्फ अन्य ग़ैर-सर्वहारा श्रमजीवी जनसमूहों के साथ घनिष्ट मैत्री स्थापित करके और उनका नेतृत्व करके ही क्रान्ति के नेता के रूप में अपने ऐतिहासिक मिशन को पूरा कर सकता है। कतिपय चरणों में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग श्रमजीवी वर्ग का मित्र बन सकता है, क्योंकि साम्राज्यवादी शासन से मुक्त देशों में क्रान्तियां निरपवाद रूप से उपनिवेशवाद-विरोधी होती हैं।

कम्युनिस्ट इण्टर नेशनल की दूसरी कांग्रेस के लिए राष्ट्रीय और औपनिवेशिक समस्याओं से सम्बद्ध आयोग की रिपोर्ट में लेनिन ने बतलाया कि एक समाजवादी राज्य के उदय ने विश्व में शक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों को राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के पक्ष में मौलिक रूप में बदल दिया क्योंकि वह संघर्ष के अधिक अनुभव प्राप्त कर सकेगा। राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के लिए सोवियत संघ राजनीतिक, भौतिक और नैतिक समर्थन का स्रोत था। लेनिन ने पूरब के कम्युनिस्टों को रूस और उसके राष्ट्रीय क्षेत्रों के क्रान्तिकारी आन्दोलन के अनुभव का अध्ययन करने की सलाह दी।

रूस के सुदूरवर्ती राष्ट्रीय ज़िलों, जैसे तुर्किस्तान, के निवासी किसान थे। वहां औद्योगिक सर्वहारा नहीं के बराबर था और पूर्व-पूंजीवादी सम्बन्धों का बोलबाला था। इसलिए रूस के राष्ट्रीय जिलों में कोई शुद्ध सर्वहारा आन्दोलन नहीं हो सकता था। लेनिन ने

लिखा : "फिर भी हमने जन साधारण में स्वतंत्र राजनीतिक चिन्तन और स्वतंत्र राजनीतिक कार्य की आकांक्षा जगाने के लिए वहां भी नेता की भूमिका ग्रहण की और हमें ऐसा करना ही चाहिए।"*

राष्ट्रीय क्षेत्रों में कृषक-परिषदों की स्थापना की गयी, और लेनिन ने पूर्व के कम्युनिस्टों को इस विशेष प्रकार के राजनीतिक संगठन के निर्माण की सलाह दी। लेनिन ने कहा कि, "कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल की नीति को इंगित करना चाहिए कि किसान सोवियतें, शोषितों की सोवियतें ऐसे अस्त्र हैं जिनका इस्तेमाल न सिर्फ पूंजीवादी देशों में बल्कि ऐसे देशों में भी हो सकता है जहाँ पूर्व-पूंजीवादी सम्बन्ध मौजूद हैं......।"†

किन्तु साथ ही लेनिन ने चेतावनी दी कि जब तक अनुकूल अवस्थाएं न हों ऐसी परिषदें न संगठित की जांय। लेनिन के दिमाग में कौन सी अवस्थाएं थीं ? सबसे पहले सोवियत जनतंत्रों के सर्वहारवर्ग से पिछड़े हुए देशों की श्रमजीवी जनता को सहायता पाने की सम्भावना थी।

इतिहास ने दिखा दिया कि लेनिन सही थे। तुविनियाई और मंगोल जनवादी जनतंत्रों में जनता के खुरालों ने, जो वास्तव में

* व्ला०लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २४३।

† व्ला० लेनिन, संकलित कृतियाँ, खण्ड ३१, पृष्ठ २४३।

कृषक-परिषदें थीं, इस शताब्दी के तीसरे दशक के शुरू में अपनी जनता की स्वतंत्रता के अधिकारों की रक्षा सिर्फ़ इसलिए कर सके क्योंकि सोवियत संघ का समर्थन और सहायता उनको प्राप्त थी।

कांमिनटर्न की दूसरी कांग्रेस में लेनिन ने यह विचार भी रखा कि उत्पीड़ित जनता के लिए अर्थव्यवस्था के पूर्व-पूँजीवाद रूप से समाजवादी रूप में पूँजीवादी चरण से बिना गुजरे पहुंचना सम्भव होगा। लेनिन ने कहा कि, "कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल को उचित सैद्धान्तिक आधार पर यह प्रस्ताव रखना चाहिए कि विकसित देशों के सर्वहारा की सहायता से पिछड़े हुए मुल्क सोवियत व्यवस्था तक पहुंच सकते हैं और बिना पूँजीवादी चरण से गुजरे विकास के कतिपय चरणों से होकर कम्युनिज़्म तक पहुंच सकते हैं।"*

रूस में लेनिन के विचार की पुष्टि हुई। ज़ारशाही रूस के भूतपूर्व पिछड़े इलाकों में कम्युनिस्टों ने सफल संक्रमण का नेतृत्व किया जिसकी प्रक्रिया में उनकी जनता समाज के पूँजीवाद के पूर्व रूप से समाजवाद की ओर गयी। यह ऐतिहासिक प्रक्रिया अपेक्षाकृत अनुकूल अवस्थाओं में हुई। उज़्बेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, कज़ाख़िस्तान, ताजिकिस्तान और रूस के अन्य दूरस्थ ज़िले एक संयुक्त श्रमिक एवं कृषक समाजवादी राज्य के अन्तर्गत विकसित हुए। तुविनियाई और मंगोलियाई जनवादी जनतंत्र, जिन्होंने जनवादी

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ २४४।

क्रान्तिकारी दलों के नेतृत्व में विकास के ग़ैर-पूँजीवादी मार्ग को अपनाया, अपने पड़ोसी सोवियत समाजवादी राज्य से सर्वांगीण सहायता पाते रहे।

१९४५ के बाद जब हिटलर की जर्मनी और उसके सहयोगी हार गये और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति समाजवाद के अनुकूल हो गयी, तब कई औपनिवेशिक और पराधीन देशों ने रूस के दूरस्थ जिलों और तुवा व मंगोलिया के संघर्ष के अनुभवों से लाभ उठाया। एशिया और अफ्रीका के कई देशों ने विकास के ग़ैर-पूँजीवादी मार्ग को अपनाया और चीन, उत्तर वियतनाम व उत्तर कोरिया मेंसमाजवादी सरकारें बनी। संयुक्त अरब गणराज्य, बर्मा, अल्जीरिया, माली और सीरिया के जन गण ने पूंजीवादी मार्ग को ठुकरा दिया। उन्होंने घोषणा की कि वे आर्थिक और सामाजिक विकास के समाजवादी मार्ग अपनायेंगे, और उन्होंने समाजवादी आधार पर अपने आर्थिक और समाजिक सम्बन्धों का निर्माण शुरू कर दिया। इस प्रक्रिया की सफलता भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न है, किन्तु, जैसा कि लेनिन ने पहले से ही अनुमान लगा लिया था, उसे वैचारिक, राजनीतिक और सैनिक तौर पर सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रमजीवी वर्ग का पूरा समर्थन मिल रहा है।

लेनिनवाद ने दिखाया है कि सिर्फ वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धान्त से लैस मार्क्सवादी-लेनिनवादी ही समाजवादी सम्बन्धों के

निर्माण और कम्युनिज्म की ओर ले जाने में अन्ततः सफलतापूर्वक नेतृत्व कर सकते हैं। किन्तु पूँजीवाद-पूर्व की व्यवस्था वाले देश में जहां न उद्योग हैं और न सर्वहारा और परिणाम-स्वरूप कम्युनिस्ट पार्टी भी नहीं है, वहां क्या करना चाहिये ? अगर ऐसे देश का नेतृत्व जनतांत्रिक शक्तियों के हाथों में आ जाता है जो पूंजीवाद का मार्ग अपनाना नहीं चाहता तो वहां क्या करना चाहिये ?

तीसरे दशक के शुरू में ऐसी परिस्थिति मंगोलिया में थी। मंगोलियाई जनता ने विकास के ग़ैर-पूंजीवादी मार्ग को चुना। मंगोलियाई जनवादी जनतंत्रके एक शिष्टमण्डल के साथ १६२१ के नवम्वर में बातचीत करते हुए लेनिन ने ज़ोर देकर कहा कि मंगोलियाई जनवादी क्रान्तिकारी दल को जनवादी जनतांत्रिक राज्य की अवस्थाओं में ऐसे मार्ग द्वारा विकास की सफलता सुनिश्चित करनी चाहिए। शिष्टमण्डल के सदस्यों ने लेनिन से पूछा कि क्या ऐसी स्थिति में मंगोलियाई जनवादी क्रान्तिकारी दल का नाम बदल कर कम्युनिस्ट पार्टी कर देना अच्छा नहीं होगा ? लेनिन ने उत्तर दिया कि क्रान्तिकारियों को अपने राज्य में अर्थव्यवस्था और संस्कृति के क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करना है। तब जाकर भेंड़ चराने वाले तत्व सर्वहारा जन समूह बनेंगे जो आगे चलकर जनवादी क्रान्तिकारी दल को कम्युनिस्ट पार्टी में "रूपान्तरित" करने में मदद करेंगे। लेनिन ने चेतावनी दी कि सिर्फ़ नाम बदलना बहुत खतरनाक और नुक़सानदेह होगा।

स्वाभाविक रूप से उन सब देशों के लिए जिनकी अवस्थाएं तीसरे दशक के पशुपालकों के देश मंगोलिया की अवस्थाओं के

अनुरूप हैं, यही हल नहीं हो सकता। किन्तु महत्वपूर्ण बात यह है और जो आज भी सही है कि, ऐसे देश में जहां सर्वहारा अधिनायकतंत्र नहीं है, किंतु जनवादी सत्ता स्थापित हो गयी है, उन देशों के ग़ैर-पूँजीवादी मार्ग से विकास के बारे में लेनिन का कथन क्या है। लेनिन ने कहा कि ऐसी स्थितियों में कम्युनिस्ट पार्टी की कोई आवश्यकता नहीं है। एक जनवादी पार्टी जो समस्त श्रमजीवी जनता के हितों का प्रतिनिधित्व करती हो, पूँजीवाद के विकास को खत्म कर सकती है। राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के विकास के क्रम में, जिसका नेतृत्व ऐसीही कोई पार्टी करेगी, श्रमजीवी वर्ग का जन्म होगा और एक सामान्य सर्वहारा दृष्टिकोण का उदय होगा। इस तरह एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के संगठन के लिए आवश्यकता की सृष्टि होगी जो वैज्ञानिक समाजवाद के आधार पर भूतपूर्व औपनिवेशिक या पराधीन देश में आर्थिक और सामाजिक जीवन में सुधार लायेगी और उसे समाजवाद के मार्ग पर निर्दिष्ट करेगी। इस सम्बन्ध में समाजवादी देशों से सहायता और समर्थन का कहीं बड़ा महत्व है।

समाजवादी क्रान्ति सम्बन्धी लेनिन के सिद्धान्त की रूसमें कड़ी परीक्षा हुई। परीक्षा में यह सिद्धान्त खरा उतरा और वह अन्य देशों में क्रान्तिकारियों द्वारा सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा सकता है। समाजवादी क्रान्ति के अंग के रूप में सांस्कृतिक क्रान्ति के सम्बन्ध में लेनिन की शिक्षा का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है।

लेनिन ने सिखाया कि समाजवादी क्रान्ति के परिणाम स्वरूप स्थापित सर्वहारा अधिनायकतंत्र की अवश्यकता दो महत्वपूर्ण कारणों से है। वह आन्तरिक और विदेशी शत्रुओं से क्रान्ति की उपलब्धियों की रक्षा और समाजवाद का निर्माण शुरू करने के लिए आवश्यक है।

उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व को खत्म करना आवश्यक है जिससे समाजवादी अर्थव्यवस्था का निर्माण शुरू हो सके। मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का उन्मूलन और शक्तिशाली औद्योगिक एवं पूर्ण विकसित सामूहिक फार्म-व्यवस्थाओं का निर्माण भी आवश्यक है। लेनिन के अनुसार इन कार्यों का सम्पन्न करना सांस्कृतिक क्रान्ति के बिना असम्भव है।

सांस्कृतिक क्रांति का मतलब जनता के आत्मिक जीवन में पूर्ण परिवर्तन लाना है जो उनके भौतिक जीवन के परिवर्तनों के साथ घनिष्ट रूप से सम्बद्ध है। जब सर्वहारा अधिनायकतन्त्र राजनीतिक आर्थिक क्षेत्रों में जनता के जीवन में परिवर्तन लाता है, तब साथ ही वह उसके आत्मिक जीवन को भी बदलता है। मार्क्स और एंगेल्स ने लिखा कि श्रमजीवी जनता को सांस्कृतिक क्रांति न सिर्फ मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण पर आधारित विद्यमान अवस्थाओं को परिवर्तित करने के लिए बल्कि अपने आपको बदलने के लिए भी आवश्यक है।

सपाजवाद के निर्माण काल में समाज के आत्मिक रूपान्तरण का सही अर्थ क्या है? इसका मतलब सर्वप्रथम मार्क्सवाद-लेनिन

के आधर पर समाज के सब सदस्यों को शिक्षित करना है। इसके बाद श्रमजीवी जनता पर शोषक वर्गों के वैचारिक प्रभाव को समाप्त करना है। अन्ततोगत्वा, इसका अर्थ एक नये मानव को जन्म देना है जो सुसंस्कृत और नये समाज के निर्माण में भाग लेनेमें सक्षम हो। लेनिन ने सिखाया कि सांस्कृतिक क्रान्ति "सच्ची क्रान्ति होनी चाहिए जिसमें समस्त जनता सांस्कृतिक विकास के काल से होकर गुज़रे।"*

पचास वर्ष पहले रूसी समाजवादी क्रांति के दुश्मनों का कहना था कि जनता के पिछड़ेपन के कारण रूस में समाजवादी क्रान्ति करना असंभव है। उन्होंने दावा किया कि जब तक पूँजीवाद रूस को "सभ्य" न बना दे तब तक श्रमजीवी वर्ग को न क्रान्ति करनी चाहिए और न अपना अधिनायकतंत्र ही स्थापित करना चाहिए। उन्होंने जोर देकर कहा कि कहीं अगर रूसी श्रमजीवी वर्ग ने सत्ता हथिया भी ली, तो वह समाजवादी संस्कृति के निर्माण में असमर्थ होगी। यद्यपि इतिहास ने इन विचारों को ग़लत साबित कर दिया है, तो भी ऐसे विचार एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के जनगण के सम्बन्ध में सुने जा सकते हैं।

लेनिन ने बतलाया कि सर्वहारा अधिनायकतंत्र की स्थापना के परिणाम स्वरूप रूस का तकनीकी, आर्थिक और सांस्कृतिक

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३३, पृष्ठ ४७०।

विकास पूँजीवादी अवस्थाओं की तुलना में अत्यधिक तेज गति से होगा। रूस को एक सभ्य देश बनाने की पूर्वावश्यकता थी–बड़े भूमिपतियों और पूंजीपतियों को उखाड़ फेंकना। रूसी कम्युनिस्टों ने वैसा ही किया जैसा लेनिन ने सिखाया था। सोवियत संघ जो सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति की दृष्टि से अग्रणी है, इस बात का प्रमाण है कि लेनिन सही थे।

सफल सांस्कृतिक क्रांति के बिना समाजवाद और कम्युनिज़म का भौतिक और तकनीकी आधार तैयार करना या समाजवादी और कम्युनिस्ट उत्पादन-सम्बन्धों को स्थापित करना, या लोगों को एक नया विश्व दृष्टिकोण प्रदान करना असम्भव है। इस नई संस्कृति का भौतिक आधार अत्यधिक विकसित उद्योग एवं कृषि की समाजवादी व्यवस्था है, जिसके बिना यह प्रगति नहीं कर सकती।

सांस्कृतिक क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि वही सब से अधिक सुसंगठित और राजनीतिक रूप से जागरूक वर्ग है। सिर्फ सर्वहारा ही अशिक्षा और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को ख़त्म करने और वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक प्रगति की समस्याओं के हल के लिए समस्त जनसंख्या को गतिमान करने में सक्षम है।

लेनिन ने सिखाया कि सांस्कृतिक क्रान्ति सम्पन्न करते समय पुरानी सांस्कृतिक विरासत पर ध्यान देना आवश्यक है। जो कुछ

मूल्यवान है उसका अध्ययन करना और समझना भी आवश्यक है। **"जुझारू भौतिकवाद के महत्व पर"** नामक अपनी पुस्तक में लेनिन ने लिखा कि "किसी भी मार्क्सवादी की सब से बड़ी और गम्भीर ग़लती यह सोचना है कि करोड़ों लोग (विशेषकर किसान और दस्तकार), जो सम्पूर्ण आधुनिक समाज द्वारा अधिकार, अज्ञान और रूढ़ियों से जकड़ दिये गये है, सिर्फ विशुद्ध मार्क्सवादी शिक्षा की सीधी रेखा पर चलकर स्वयं को इस अंधकार से मुक्त कर सकते हैं।"*

लेनिन ने बतलाया कि श्रमजीवी जनता को शिक्षित करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी को क्लासिकी विरासत का व्यापक उपयोग करना चाहिए। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि पूंजीवाद के अन्तर्गत हुए सांस्कृतिक एवं तकनीकी विकास, एवं प्रशिक्षित विशेषज्ञों के अनुभव का इस्तेमाल करना आवश्यक है। साथ ही लेनिन ने यह भी बतलाया कि इस सांस्कृतिक विरासत को आलोचनात्मक एवं सृजनात्मक दृष्टि से लेना चाहिये जिससे सिर्फ प्रगतिशील तत्वों का इस्तेमाल हो सके और प्रतिक्रियावादी तत्त्वों को फेंक दिया जाय। उन्होंने कहा कि इस विरासत को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधार पर समृद्ध बनाने का कार्य महत्त्वपूर्ण है।

सांस्कृतिक क्रान्ति का स्वरूप ऐसा है कि उसके कार्यों को उतनी शीघ्रता से पूरा नहीं किया जा सकता जितनी शीघ्रता से

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३३, पृष्ठ २३०।

राजनीतिक या सैनिक कार्यों को पूरा किया जा सकता है। जैसा कि लेनिन ने बतलाया कोई युद्ध कुछ महीनों में जीता जा सकता है किन्तु संस्कृति के प्रश्नों को जल्दबाज़ी में हल नहीं किया जा सकता। यहां लम्बे समय तक अथक सांगठनिक कार्य की आवश्यकता है।

माओत्से-तुंग गुट ने "सांस्कृतिक क्रान्ति" शब्द को ही भोंडा और कुरूप बना दिया है। आज के चीन में कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों का, नाश और सांस्कृतिक जगत् में सुविख्यात लोगों समेत उन सब लोगों का, जिन्हें माओ पसन्द नहीं करते, खात्मा ही सांस्कृतिक क्रांन्ति के नाम से पुकारा जा रहा है। माओत्से तुंग कलाकृतियों को नष्ट करने, जनता के दिमागों से चीन की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को मिटाने और लोगों को माओ की इच्छाओं का जड़मति एवं विचारहीन पूर्तिकर्त्ता बनाने को ही सांस्कृतिक क्रान्ति कहते हैं।

सोवियत संघ में "सांस्कृतिक क्रान्ति" शब्द का अर्थ है: वैज्ञानिक आधार पर शिक्षा का सर्वांगीण विकास; जनता के बीच बड़ी संख्या में बुद्धिजीवियों का प्रशिक्षण और क्रान्ति के पूर्व शिक्षित पुरानी पीढ़ी के विशेषज्ञों का अधिकतम इस्तेमाल; तथा वैज्ञानिक आधार पर राष्ट्र के आत्मिक जीवन का विकास।

सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी ने लेनिन की शिक्षाओं से रहनुमाई लेते हुए समाजवादी समाज के निर्माण के सब चरणों में सांस्कृतिक विकास से सम्बद्ध विभिन्न ठोस समस्याओं का समाधान किया।

क्रान्ति के तुरन्त बाद सोवियत समाज के विकास के प्रथम चरण में पार्टी ने प्रौढ़ों में निरक्षरता की समाप्ति, स्कूली शिक्षा की व्यवस्था में परिवर्तन और आम जनता में राजनीतिक शिक्षा को उन्नत बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया।

क्रान्ति-पूर्व रूस एक अत्यन्त पिछड़ा हुआ देश था और इसीलिए निरक्षता का अन्त सोवियत सरकार के मुख्य कार्यों में था। लेनिन ने कहा कि अपढ़ आदमी राजनीति से कोसों दूर होता है। शिक्षित जनसंख्या से अपढ़ लोगों को पढ़ाने के लिए कहा गया।

निरक्षरता की समाप्ति के बाद दूसरा चरण सामान्य और अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा लागू करने का था। १६३० में सप्त वर्षीय अनिवार्य शिक्षा लागू की गयी। १६३६ तक सोवियत संघ की ८७ प्रतिशत जनसंख्या साक्षर हो गयी। इसकी तुलना में क्रान्ति-पूर्व रूस में सिर्फ ३० प्रतिशत लोग साक्षर थे। युद्ध के बाद के बीस वर्षों में स्कूली बच्चों की संख्या दुगुनी हो गयी।

संसार के किसी अन्य देश में सांस्कृतिक और शैक्षिक संस्थाओं—पुस्तकालयों, संग्रहालयों, नाट्य-गृहों, आदि की संख्या में इतनी बड़ी वृद्धि नहीं हुई है जितनी सोवियत संघ में हुई है। इस समय देश में ७७०० समाचार पत्र और करीब चार हज़ार पत्रिकायें निकलती हैं।

उत्पादन और संस्कृति के सब क्षेत्रों में सोवियत संघ के पास विशेषज्ञ हैं। सांस्कृतिक क्रान्ति के साथ-साथ उनकी संख्या भी

बढ़ी। कालेज या विशेष माध्यमिक शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या १९१३ में १९० हजार थी जो बढ़कर १९६६ में १८३ लाख हो गयी। सोवियत संघ के पास संयुक्त राज्य की अपेक्षा अधिक इंजीनियर हैं।

शिक्षा का सफल विकास, अधिकाधिक संख्या में सोवियत बुद्धिजीवियों का प्रशिक्षण, और श्रमजीवी जनता में संस्कृति का फलना-फूलना—इन सबने, विज्ञान के विकास के लिए अनुकूल अवस्थाएं उत्पन्न की हैं। सोवियत वैज्ञानिकों—रसायन शास्त्रियों, भौतिक विज्ञान वेत्ताओं, अन्तरिक्ष अन्वेषकों की उपलब्धियां सुविदित हैं। सोवियत विद्वान् सफलता पूर्वक अर्थशास्त्र, दर्शन, इतिहास और समाजशास्त्र की समस्याओं को हल कर रहे हैं। सोवियत साहित्य और कला विश्वविख्यात है। सोवियत संघ की ये उपलब्धियां मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों के अडिग रूप से लागू करने का फल हैं, जिन्हें (सिद्धान्तों को) सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी सृजनात्मक रूप से विकसित कर रही है।

सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता और विश्व साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन की एकता के सम्बन्ध में लेनिन के विचार

सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता मज़दूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टियों की विचारधारा और नीतियों का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त सारे संसार के मेहनत कश लोगों के समान हितों और उनकी एकता को अभिव्यक्त करता है। सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के मूल तत्वों की सर्वप्रथम विशद् विवेचना करने वाले कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स थे। उन्होंने अपनी विवेचना इस तथ्य से प्रारम्भ की कि पूंजीवाद एक अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति है,और श्रमजीवियों की अन्तर्राष्ट्रीय एकता और बन्धुत्व उसे पराजित करने के लिए आवश्यक है। इसकी अभिव्यक्ति उनके नारे "विश्व के मजदूरों एक हो" में हुई है।

नये ऐतिहासिक युग—साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियों के युग—में लेनिन ने सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रयता के सिद्धाम्तों को विकसित किया। लेनिन ने बताया कि साम्राज्यवाद के अन्तर्गत पूंजी अपने राष्ट्रीय जामे को छोड़ रही है, पूंजी अधिकाधिक अन्तर्राष्ट्रीय होती जा रही है और राज्यों की परस्पर आर्थिक निर्भरता अधिक स्पष्ट होती जा रही है। पूंजी के विरुद्ध संघर्ष में सर्वहारा वर्ग और सम्पूर्ण मेहनतकश जनता की अधिकाधिक अन्तर्राष्ट्रीयता की आवश्यकता बढ़ती जा रही है।

इसीलिए लेनिन ने सारे संसार में साम्राज्यवादी उत्पीड़न को खत्म करने के संघर्ष के हिस्से के रूप में हर देश के मुक्ति-आंदोलन के कार्यों पर ठीक से विचार करने की आवश्यकता पर सदा ज़ोर दिया।

रूस में अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति की विजय सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों की विजय की सूचक थी। यह विजय बोलशेविक पार्टी की, जिसने बहु-राष्ट्रीय रूसी श्रमजीवी जनता को समाजवाद के संघर्ष में श्रमजीवी वर्ग के साथ एकजुट कर दिया था, सुसंगत अन्तर्राष्ट्रीय नीति के कारण सम्भव हो सकी। पूंजीवादी देशों की श्रमजीवी जनता द्वारा नवजात सोवियत जनतंत्र की संयुक्त सहायता और समर्थन ने साम्राज्यवादी बुर्जुआ वर्ग को जनतंत्र का गला घोटने से रोका और इस तरह क्रान्ति की विजय को अधिक सुरक्षित बना दिया।

अक्टूबर क्रान्ति ने सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों और सारे संसार में उनके प्रचार को प्रोत्साहित किया। रूस की क्रान्ति ने विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की सीमाओं का विस्तार किया। साम्राज्यवाद से उत्पीड़ित उपनिवेश और पराधीन देश आन्दोलन में शामिल हो गये। उसी समय कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल ने एक नया तथा कहीं अधिक व्यापक नारा दिया: "सभी देशों के मजदूरों और उत्पीड़ित जनगण एक हो!" अतः इस बात पर जोर दिया गया कि विश्व पूंजीवाद पर विजय सिर्फ संयुक्त प्रयासों, विश्व के सर्वहारा वर्ग और

साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित जनगण के सम्मिलित संघर्ष द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

समसामयिक विश्व-क्रान्तिकारी आन्दोलन विस्तार की दृष्टि से अधिकाधिक व्यापक होता जा रहा है; पूंजीवादी देशों और एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका की करोड़ों श्रमजीवी जनता अधिकाधिक संख्या में मुक्ति संघर्षों में शामिल होती जा रही है। साथ ही साथ सभी क्रान्तिकारी शक्तियों के हितों को सूत्रबद्ध करने की प्रक्रिया भी चल रही है। मुक्ति-संघर्ष का कोई भी पहलू क्यों न हो शान्ति, जनतंत्र, राष्ट्रीय स्वतंत्रता और समाजवाद के लिए संघर्ष में इन शक्तियों के समान हित हैं। उन्हें एक ही शत्रु–साम्राज्यवाद का सामना करना पड़ता है।

विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन के लिए विशेष महत्वपूर्ण बात उसके मुख्य पहलुओं—विश्व-समाजवादी व्यवस्था, पूँजीवादी देशों में श्रमिक आन्दोलन और राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के बीच घनिष्ट सहयोग है। यह सहयोग फलदायी सिद्ध हो चुका है। समाजवादी देशों ने उपनिवेशों और एशिया-अफ्रीका के पराधीन देशों के राष्ट्रीय मुक्ति-आंदोलन को निर्णायक सहायताएं दी हैं, और इस आंदोलन के नये चरण, आर्थिक स्वतंत्रता के संघर्ष में और सामाजिक समस्याओं के हल के लिये ऐसी ही सहायता दे रहें हैं। समाजवादी देशों और पूंजीवादी देशों के श्रमिक आंदोलन के बीच श्रमिक और राष्ट्रीय मुक्ति-आंदोलन के बीच सीधे सम्बन्ध, सहयोग और परस्पर समर्थन बढ़ा है।

आज साम्राज्यवाद की आक्रामकता की तीव्रता ने क्रांतिकारी शक्तियों की अधिकाधिक एकता को आवश्यक बना दिया है। समसामयिक स्थिति ने लेनिन की इस मान्यता को सही सिद्ध कर दिया है कि सब देशों का बुर्जआ वर्ग एक दूसरे से अलग करने वाले विरोधाभासों के बावजुद अपने वर्ग-आधिपत्य को बनाये रखने के लिए विश्वव्यापी पैमाने पर एकजुट हो रहा है। साम्राज्यवादी पूंजी अन्तर्राज्यीय आर्थिक एकत्रीकरण का इस्तेमाल श्रमिकों के जन-आन्दोलन को छिन्न-भिन्न करने और उसे दबाने के लिए कर रहे हैं। संयुक्त राज्य अमरीका के नेतृत्व में साम्राज्यवादी शक्तियों ने सैनिक-राजनीतिक गुटों की एक विस्तृत व्यवस्था कायम की है। साम्राज्यवाद की युद्धप्रिय शक्तियां अपने आपको आक्रमण की तैयारी तक ही सीमित नहीं रखतीं। हाल में उन्होंने मुक्ति आन्दोलन के विरुद्ध हथियारबन्द कार्रवाई शुरू की है। इसके ज्वलंत उदाहरण हैं: वियतनाम में अमरीकी हस्तक्षेप और अरब राज्यों के विरुद्ध इजरायली आक्रमण।

सभी प्रगतिशील शक्तियों को एकजुट करने के लिए क्रान्तिकारी संघर्ष का एक विश्वव्यापी मोर्चा स्थापित करने के प्रयासों द्वारा श्रमजीवी वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टियों को मुक्ति आन्दोलन के विरुद्ध अपनी "विश्वव्यापी रणनीति" को सफल बनाने के साम्राज्यवादी प्रयत्नों को अवश्य विफ़ल करना चाहिए। कम्युनिस्ट पार्टियां संसार की क्रान्तिकारी शक्तियों के आन्दोलन में हिरावल हैं। अतएव वे इन शक्तियों को एकजुट करने और सर्वहारा

अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों को सुसंगत रूप से कार्यान्वित करने के लिए विशेष रूप से उत्तरदायी हैं।

स्वयं कम्युनिस्ट आन्दोलन में उभरे गम्भीर मतभेदों से यह उत्तरदायित्व और बढ़ गया है। स्थिति और अधिक गम्भीर इसलिए हो गयी है कि संसार में सबसे अधिक जनसंख्या वाला समाजवादी देश चीन अपने नेताओं के आदेशोंके कारण अन्य समाजवादी देशों का विरोधी बन गया है। दुनियां की सबसे बड़ी कम्मुनिस्ट पार्टी वाला देश चीन विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन से टूट कर अलग हो गया है। सामूहिक संघर्ष से सम्बन्ध तोड़ लेने और अलग होने की प्रवृति कतिपय अन्य पार्टियों तथा मुक्ति आन्दोलन की श्रेणिथों में प्रत्यक्ष हो गयी है। स्वभावत: इस प्रकार की स्थिति विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन को कमज़ोर करती है और अपने दुश्मन, साम्राज्यवादियों के हाथों में खेलती है।

कम्युनिस्ट पार्टियों के पारस्परिक मतभेदों का फायदा उठाकर साम्राज्यवाद संसार के विभिन्न क्षेत्रों में विश्व मुक्ति आन्दोलन पर उलटा प्रहार करने की कोशिश कर रहा है। साथ ही साम्राज्य-वादियों ने कम्युनिस्ट और क्रान्तिकारी आन्दोलन को अन्दर से तोड़ने के लिए वैचारिक हमले काफ़ी तेज़ कर दिये हैं। जनगण में पारस्परिक अविश्वास और शत्रुता की भावना भड़काने के लिए वे कुछ भी उठा नहीं रख रहे हैं। वे मुक्ति की शक्तियों के शिविर में कमज़ोर स्थल ढूढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। इन सबसे अधिक

वे उन लोगों को प्रभावित करने की कोशिश कर रहे हैं जो वैचारिक परिपक्वता और स्थायित्व के अभाव में बुर्जुआ प्राचार के झांसे में आसानी से आ सकते हैं। साम्राज्यवादी, मुख्यत: राष्ट्रवाद पर उम्मीद लगाये हुए हैं।

यह स्पस्ट है कि जीवन और वर्तमान संघर्ष की अवस्थाओं ने कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर एकता को पहले से भी अधिक आवश्यक बना दिया है। किन्तु यह एकता अपने आप नहीं आयेगी। इसके लिए सभी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों और कम्युनिस्टों के सतत् प्रयास की आवश्यकता है।

कम्युनिस्टों की अन्तर्राष्ट्रीय लंघबद्धता के लिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधार पर उनकी वैचारिक एकता मुख्य पूर्वाविश्यकता है। यह एकता कम्युनिस्टों के लक्ष्यों में तादात्म्य और मूल साधनों, संघर्ष की मुख्य कार्यनीति पर उनकी सहमति व्यक्त करती है।

अपने ज़माने में मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन को वैज्ञानिक कम्युनिज़म के सिद्धान्त को तोड़ने-मरोड़ने के प्रयासों से बचाना पड़ा। इस सिद्धान्त के आधार पर उन्होंने श्रमजीवी एवं कम्युनिस्ट आन्दोलन की रणनीति और कार्यनीति का विशदीकरण किया।

मुक्ति आन्दोलन के वर्तमान चरण में कम्युनिस्टों की वैचारिक एकता को उनके संयुक्त रूप से विशदीकृत कार्यक्रम, १९५७ और १९६० में मास्को में हुए कम्युनिस्ट और मज़दूर पार्टियों के सम्मे-

लनों की दस्तावेजों में ठोस रूप दिया गया है। कम्युनिस्ट पार्टियों का सभा-मंच आज की मुख्य घटनाओं और स्थितियों के समान मूल्यांकन पर आधारित है और उसमें साम्राज्यवाद के विरुद्ध, और शान्ति, जनतंत्र, राष्ट्रीय स्वतंत्रता और साम्राज्यवाद के लिए संघर्ष के सम्बन्ध में समान निष्कर्ष शामिल है। बहुसंख्यक कम्युनिस्ट पार्टियां १६५७ और १६६० के सम्मेलनों की दस्तावेज़ों में निहित मूल सिद्धान्तों को अब भी सही मनाती हैं। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उन सिद्धान्तों का और विशदीकरण करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके विपरीत, १६६० के बदले आये अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में परिवर्तनों, मुक्ति आन्दोलन से सम्बन्धित नई घटनाओं ने परिस्थिति के अधिक गहरे विश्लेषण, और विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन की मूल समस्याओं के और विशद विवेचन को आवश्यक बना दिया है। इसी तरह समान वैचारिक मंच का यह मतलब नहीं है कि उसके सिद्धान्तों को एक ही तरह से, एक मापदण्ड के अनुसार सब देशों में लागू किया जाय। मार्क्सवाद के सामान्य सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने के लिए किसी ठोस परिस्थिति के विशेष लक्षणों के सर्वाधिक सम्यक मूल्यांकन पर लेनिन ने बार-बार ज़ोर दिया।

विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन को एकजुट करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीयता की प्रभावकारिता एक महत्वपूर्ण शर्त है। सच्चा अन्तर्राष्ट्रवादी काम करने वाला आदमी होता है, थोथी बातें करने वाला नहीं। अन्तर्राष्ट्रीयता की प्रभावोत्पदकता आज सबसे पहले

कम्युनिस्टों के ठोस कार्यों में व्यक्त होती है। कम्युनिस्ट साम्राज्यवाद के ज़ोर-शोर से चलने वाले षड़यंत्रों को नाकाम करने की कोशिश कर रहे हैं। अमरीकी साम्राज्यवाद के आक्रमण से लड़ने वाली वियतनामी जनता को दिया गया समर्थन इसका एक उदाहरण है।

कम्युनिस्ट पार्टियों की अन्तर्राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने का एक तरीक़ा विश्व क्रांतिकारी आन्दोलन के अनुभव का अध्ययन और कार्यान्वयन है। एक दूसरे से सीखना, अनुभवों की तुलना करना और जो कुछ मूल्यवान है उसका इस्तेमाल करना कम्युनिस्ट आन्दोलन में आवश्यक है। लेनिन ने इस बात पर बार-बार जोर दिया कि बोल्शेविक पार्टी की विजय में एक महत्वपूर्ण तत्व यह था कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रमजीवी क्रान्तिकारी आन्दोलन के राजनीतिक अनुभव की "सबसे नवीन बात" पर विचार करने, इस "बात" को आत्मसात् करने और रूस के मुक्ति-संघर्ष की ठोस अवस्थाओं के अनुरूप उसे लागू करने से वह कभी नहीं चूकी।

कम्युनिस्ट आन्दोलन को एकजुट करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच के सम्बन्धों के सही प्रतिमानों और रूपों का विस्तृत विवेचन और कार्यान्वयन बहुत महत्वपूर्ण है। मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां समान हितों और लक्ष्यों से पक्के तौर पर जुड़े एक ही आन्दोलन की टुकड़ियां हैं। फिर भी, हर पार्टी देश विशेष के अन्दर काम करने वाली एक राष्ट्रीय इकाई है। यह कम्युनिस्ट

पार्टियों के पारस्परिक सम्बन्धों के स्वरूप को पूर्व निर्धारित करता है। वे सब बराबर और पूर्णरूपेण स्वतंत्र हैं। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार कम्युनिस्ट पार्टियों की स्वतंत्रता विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी है। यह तथ्य कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां स्वतंत्र हैं, समान उद्देश्य के प्रति उनकी ज़िम्मेदारी और समस्त श्रमजीवी जनता के अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष में उनके योगदान की जिम्मेदारी को बढ़ाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के विकास के साथ अलग-अलग पार्टियों के पारस्परिक सम्बन्ध पूर्ण होते जाते हैं। इस आन्दोलन का कार्य-क्षेत्र और चरित्र देखते हुए अब किसी एक केन्द्र से उसका मार्ग-दर्शन सम्भव नहीं है। कम्युनिस्ट आन्दोलन का विविधतापूर्ण सारतत्व अब केन्द्रीकृत संगठन के चौखटे में बांधा नहीं जा सकता। कम्युनिस्ट पार्टियां अब अधिक प्रौढ़ और अनुभवी हो गयी हैं। वे स्वतंत्र रूप से कार्य करने में सक्षम हो गयी हैं। कम्युनिस्ट और मज़दूर पार्टियों के प्रतिनिधियों के १९५७ और १९६० के सम्मेलनों ने मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के नये रूपों का निर्धारण किया है। इनमें सब पार्टियों की द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सभायें, सम्मेलन, विचार विमर्श और बैठकें शामिल हैं। ये बैठकें बहुधा समान वैचारिक मंच के निर्माण, अनुभव के आदान-प्रदान और सामान्य महत्व के राजनीतिक कार्य में योगसूत्र स्थापित करने के लिए होती हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा अनुशासन सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता की एक तर्कसंगत आवश्यकता है। यह किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा-पत्र में उल्लिखित नहीं है; यह कम्युनिस्ट आन्दोलन के स्वरूप से ही निकलता है जो गहरे रूप में अन्तर्राष्ट्रीयतावादी है। इसका विशेष अर्थ यह है कि कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच तब तक एकता नहीं हो सकती जब तक हर पार्टी विश्व कम्युनिस्ट और श्रमजीवी आन्दोलन के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह स्वेच्छा से न करे।

अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा अनुशासन कम्युनिस्ट आन्दोलन की ऐतिहासिक भूमिका के प्रति हर पार्टी की जागरूकता, और परिणाम स्वरूप विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन के भविष्य के प्रति कम्युनिस्टों के उत्तरदायित्व पर आधारित है। इसके अतिरिक्त इसके साथ आत्मानुशासन जुड़ा हुआ है। यह भी अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के प्रति कम्युनिस्ट पार्टियों के उत्तरदायित्व से निकलता है। कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता के महत्व के प्रति गहरी जागरूकता तथा अपने अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों के प्रति कम्युनिस्टों की निष्ठा एवं ईमानदारी संपूर्ण विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन को और एकजुट करना और सफलता से प्राप्त करना सुनिश्चित करती है। साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ने वालों की अन्तर्राष्ट्रीय कटिबद्धता विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की उपलब्धियों का मूल स्रोत है। रूस में १९१७ की अक्तूबर क्रान्ति, विश्व समाजवादी व्यवस्था का उदय, उत्पीड़ित जनगण के मुक्ति-आन्दोलन की सफलताएं और उनकी सामाजिक प्रगति क्रान्तिकारी शक्तियों के गठबन्धन, पारस्परिक समर्थन,

और सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के आधार पर विभिन्न देशों के श्रमजीवी वर्ग व श्रमजीवी जनता के सहयोग और संघबद्धता के कारण सम्भव हुई है। इतिहास के कतिपय चरणों में क्रान्तिकारी आन्दोलन को महंगी कीमत चुकानी पड़ी है। इसके फलस्वरूप बहुतेरी विफलताएं और पराजय मिली, तथा इसने विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया के विकास को अवरुद्ध किया।

श्रमजीवी और कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्तर्राष्ट्रवादी स्वरूप के कारण राष्ट्रवादी प्रवृतियों के उदय की सम्भावना खत्म नहीं हो जाती। लेनिन ने महसूस किया कि राष्ट्रीयता के अवशेषों को लोगों के दिमाग से निकलना सबसे कठिन कामों में से होगा। राष्ट्रीयता, अविश्वास और शत्रुता शोषक वर्गों की हिंसा, युद्ध और उत्पीड़न, तथा कुछ मामलों में पूरे के पूरे राष्ट्रों को समूल नष्ट करने के प्रयत्नों की नीति का परिणाम है। राष्ट्रवाद बुर्जआ वर्ग के हाथों में विभिन्न देशों की श्रमजीवी जनता को एक होने से रोकने तथा श्रमजीवी आन्दोलन को विभाजित करने और इस तरह अपनी वर्ग-स्थितियों को मज़बूत करने के मुख्य साधनों में से एक है।

लेनिन ने श्रमजीवी आन्दोलन को राष्ट्रवाद के खतरनाक परिणामों के बारे में बार-बार चेतावनी दी। वे उन लोगों से निरन्तर लड़ते रहे जो राष्ट्रीयता के बाड़े लगाकर आम आन्दोलन से अलग रखते रहे। "......जिसने राष्ट्रवादी दृष्टिकोण, राष्ट्रीयता और अपने राष्ट्रीय श्रमजीवी आन्दोलन के चारों ओर चीन की दीवार

खड़ी करने की है; उसे झिझक नहीं है……कि विभाजन और छिन्न-भिन्न करने की अपनी कार्य-नीति के द्वारा सब राष्ट्रों, जातियों और भाषाओं के सर्वहाराओं को एकजुट करने और उनके बीच एकता स्थापित करने के महान् आह्वान को वह नाकाम कर रहा है।"*

राष्ट्रवादी प्रवृतियां अब भी श्रमजीवी और कम्युनिस्ट आन्दोलन में दिखायी पड़ती हैं। "स्वतंत्रता" के बहाने से कतिपय कम्युनिस्ट पार्टियां अपने को समान संघर्ष से अलग कर राष्ट्रीय मामलों तक ही सीमित कर रही हैं।

कम्युनिस्ट और क्रान्तिकारी आन्दोलन में राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति का क्या कारण है ?

विश्व क्रान्तिकारी प्रक्रिया का असम विकास आज विशेष स्पष्ट है। समाजवादी देशों समेत कतिपय देशों के भिन्न-भिन्न इतिहास हैं। वे अपने आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास और अपनी राष्ट्रीय संस्कृति व जनता की मनः स्थिति की दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न हैं। इसी तरह कम्युनिस्ट पार्टियां भिन्न-भिन्न स्थितियों में कार्य करती हैं। वे अपने अनुभवों, अपनी शक्ति और जनता पर प्रभाव तथा काम करने के तरीकों और रूपों की दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न हैं। परिणामस्वरूप विश्व कम्युनिस्ट और मुक्ति

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ६; पृष्ठ ५२०-२१।

आन्दोलन की सामान्य समस्याओं के प्रति अपने रुख में भी एक-दूसरे से भिन्न हैं। कभी-कभी ये भिन्नताएं उस सीमा को पार कर जाती हैं जहां मार्क्सवाद-लेनिनवाद तथा सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता का परित्याग प्रारम्भ हो जाता है।

वर्तमान युग राष्ट्रीय जागरूकता के तेज़ विकास का काल है। ऐसा कई देशों में श्रमजीवी जनता की सत्ता स्थापित होने, उनके राष्ट्रीय स्वतंत्रता प्राप्त करने, और साम्राज्यवादी शक्तियों के अतिक्रमणों से अपनी राष्ट्रीय प्रभुसत्ता तथा मर्यादा की रक्षा करने के कारण है।

उन देशों में राष्ट्रवादी प्रवृतियों के उभरने का खतरा सबसे अधिक है जहाँ मुक्ति संघर्ष स्पष्टतः राष्ट्रीय स्वराज्य ग्रहण कर लेता है। एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के अनेक जनगण ने साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष में राष्ट्रीय स्वतंत्रता के नारे अपनाये हैं। लेनिन ने उत्पीड़ित जनगण के राष्ट्रवाद के प्रगतिशील और जनतांत्रिक तत्वों को उस सीमा तक माना जहाँ तक वे विदेशी उत्पीड़कों और उपनिवेशवाद के विरुद्ध थे। किन्तु अगर राष्ट्रवाद को सामाजिक कायापलट के दौरान भी सुरक्षित रखा जाता है, तो वह प्रतिक्रियावादी विशेषताएं और प्रवृत्तियां अपनाता है।

मार्क्सवाद–लेनिनवाद राष्ट्रवाद के अवषेशों की जीवनी-शक्ति और खतरों पर ध्यान देता है। ये अवशेष बहुधा जनसंख्या के निम्न मध्यम वर्ग और पिछड़े हुए भागों में खासकर देखे जाते हैं। ये लोग

अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा के स्कूल से नहीं गुजरे होते। समाजवादी क्रान्ति के बाद भी कुछ समय तक ये अवशेष बने रहते हैं, क्योंकि तुरन्त आर्थिक और सांस्कृतिक असमानता और पूंजीवाद से विरासत के रूप में प्राप्त विभिन्न राष्ट्रों के पारस्परिक अस्वाभाविक सम्बन्धों के चिन्हों को साफ करना असम्भव है। अगर उनका प्रतिरोध करने के लिए कदम न उठाये जायें तो कतिपय स्थितियों में राष्ट्रवादी अवशेष पुनर्जीवित हो सकते और उन्हें काम में लाया जा सकता है। इन प्रवृतियों की चर्चा करते हुए लेनिन ने उन देशों में जो लम्बे समय तक साम्राज्यवादी आधिपत्य में रहे और जहां उत्पादक शक्तियां बहुत कम विकसित हैं राष्ट्रीय अहंभाव और राष्ट्रीय संकीर्णता के पूर्वाग्रहों की विशेष जीवनी-शक्ति और खतरों के प्रति चेतावनी दी।

और, अन्ततोगत्वा, कुछ स्थितियों में कम्युनिस्ट आन्दोलन में विभाजक प्रवृतियों के लिए उत्तरदायी कम्युनिस्ट पार्टियों का पंचमेल सामाजिक संगठन उत्तरदायी है। द्वितीय महायुद्ध के बाद वैचारिक और राजनीतिक दृष्टि से अपरिपक्व असर्वहारा तत्व कई कम्युनिस्ट पार्टियों में शामिल हो गये। ये तत्व पूंजीवादी प्रचार, संशोधनवाद और सुधारवाद के आसानी से शिकार बन जाते हैं। वे निम्न माध्यम वर्गीय प्रवृतियों और चित्तवृत्तियों से प्रभावित हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रवाद ने कुछ कम्युनिस्ट पार्टियों में पनपने के लिए अच्छी ज़मीन पा ली है।

कम्युनिस्ट पार्टियों को, विशेषकर उनको जो सत्तारूढ़ हैं, अपने सदस्यों और समस्त श्रमजीवी जनता को अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना

से शिक्षित करने की बिपुल सम्भावनाएँ हैं। ये पार्टियां सफलतापूर्वक राष्ट्रवादी प्रवृतियों का प्रतिरोध कर सकती हैं। यह सब कम्युनिस्ट पार्टियों और उनके नेताओं की वैचारिक और राजनीतिक परिपक्वता, उनकी इच्छा और स्थानीय एवं राष्ट्रीय हितों के ऊपर विश्व कम्युनिष्ट आन्दोलन के समान हितों को रखने की आवश्यकता के प्रति सजगता और समान उद्देश्य की चिन्ता पर निर्भर है। सत्तारूढ़ होने के बाद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी जिसने रास्ट्रीय मुक्ति क्रान्ति का नेतृत्व किया था, श्रमजीवी जनसमूह को सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना से शिक्षित करने और राष्ट्रवाद को फलने-फलने से रोकने की स्थिति में थी। इस सम्बन्ध में बुनियादी मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचार पार्टी-नेतृत्व को उपलब्ध थे। वे सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों के अनुभव को भी देख सकते थे। इन देशों ने चीनी क्रान्ति की विजय में योग दिया था और चीन को समाजवाद के निर्माण के लिए सर्वांगीण मैत्रीपूर्ण सहायता दी थी। इससे चीन पर अन्तर्राष्ट्रीयता के विचारों का प्रभाव बढ़ा था। किन्तु निम्न मध्यम वर्ग और श्रमजीवी जनता के पिछड़े हुए भागों में राष्ट्रवाद के नकारात्मक पहलुओं को उभरने से रोकने के लिए इन अनुकूल स्थितियों से लाभ उठाने के बदले चीनी नेताओं ने अपने आप को राष्ट्रवाद के चंगुल में फंसा दिया। इस ख़तरनाक संकट का सामना करने के बजाय वे पृथक राष्ट्रवादी भूलें करनी शुरू करके चरम राष्ट्रवाद—झगड़ालू अंध-राष्ट्रवाद पर पहुंच गये।

परिणामस्वरूप राष्ट्रवादी प्रवृत्तियों का विरोध सर्वोपरि कम्युनिस्ट पार्टियों और कम्युनिस्टों के द्वारा होना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना से श्रमजीवी जन-समूह की शिक्षा राष्ट्रवाद के विरोध का एक महत्वपूर्ण मार्ग है। इसका अर्थ जन साधारण को विश्व-क्रान्तिकारी आन्दोलन के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप, और समान शत्रु के विरुद्ध संघर्षरत सभी देशों के श्रमजीवी वर्ग तथा श्रमजीवी जनता के हितों की समानता के बारे में बतलाना है। वर्तमान स्थितियों में जन साधारण के लिए विश्व-क्रान्तिकारी आन्दोलन के बुनियादी दस्तों : समाजवाद, विकसित देशों के श्रमजीवी वर्ग और विकासशील देशों के मुक्ति-आन्दोलन के बीच एकता और पारस्परिक सहायता की आवश्यकता को समझाना सर्वाधिकार महत्त्वपूर्ण है और सर्वोपरि हमारे समय की मुख्य क्रान्तिकारी शक्ति—समाजवादी देशों की घनिष्ठ एकता और सहयोग की आवश्यकता को समझना चाहिये।

जनसमूह की अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का दूसरा महत्वपूर्ण तरीका अन्य देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों और अन्य राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के अनुभव का अध्ययन है। यह अलग-अलग कम्युनिस्ट पार्टियों की क्रियाशीलता को बढ़ाने, भूलें न होने देने और राष्ट्रवादी प्रकृतियों के प्रतिरोध में सहायक होता है। अन्य जनगण के जीवन और संघर्ष के बारे में ज्ञान तथा बिरादराना पार्टियों और जन संगठनों के प्रतिनिधियों से बातचीत और प्रत्यक्ष सम्बन्ध इस सिलसिले में बहुत लाभप्रद होते हैं।

अन्तर्राष्ट्रवादी शिक्षा एक बड़ी लम्बी प्रक्रिया है जिसके लिए काफ़ी प्रयत्न, धैर्य और कार्यकौशल की आवश्यकता होती है। "हमें बहुत सावधान और धैर्यवान होना चाहिए और राष्ट्रीय अविश्वास के अवशेषों के लिए रियायत भी करनी चाहिए···क्योंकि राष्ट्रीय अविश्वास···बहुधा अत्यधिक जानदार होता है, और जल्दबाज़ी करने से केवल तीव्र हो सकता है। दूसरे शब्दों में पूर्ण और चरम एकता के मक़सद को ख़तरे में डाल सकता है।"*

दूसरी ओर प्रतिक्रियावादी राष्ट्रवाद के विरुद्ध बिना समझौता किये संकल्प के साथ संघर्ष से अन्तर्राष्ट्रीयता को बढ़ावा मिलता है। लेनिन ने लिखा कि, "वर्ग-चेतना-युक्त श्रमिक सभी राष्ट्रीय उत्पीड़नों और सभी राष्ट्रीय विशेषधिकारों के विरुद्ध लड़ते हैं, किन्तु वे अपने आपको उतने ही तक सीमित नहीं रखते। वे समस्त, यहां तक कि अत्यन्त परिष्कृत राष्ट्रवाद के ख़िलाफ़ भी लड़ते हैं और प्रतिक्रिया एवं बुर्जुआ राष्ट्रवाद के सब रूपों के विरुद्ध संघर्ष में **सब** राष्ट्रीयताओं के श्रमिकों की एकता ही नहीं, बल्कि उनके घुल मिल जाने की भी वकालत करते हैं।"**

श्रमजीवी आन्दोलन और अपने अन्दर राष्ट्रवाद के विभिन्न रूपों का कैसे सामना किया जाय इस सम्बन्ध में कम्युनिस्ट आन्दो-

*व्ला० लेनिन, संकतित कृतियां, खण्ड ३०, पृष्ठ २६३-६४।
**व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड १६, पृष्ठ ५४८।

लन ने बहुत अनुभव प्राप्त कर लिया है। लेनिन ने राष्ट्रवाद के विरुद्ध सुसंगत रूप में एवं बिना समझौता किये चलने वाले संघर्ष में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का मार्गदर्शन तब किया था जब उसके सामने बहु जातीय राज्य की अत्यन्त जटिल अवस्थाएं थीं। सब मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां किसी न किसी तरह अन्ध-राष्ट्रवाद का विरोध करती हैं। प्रतिक्रियावादी राष्ट्रवाद, उसका उद्भव बुर्जुआ हो, या निम्न मध्यम वर्गीय, वह आड़ के रूप में चाहे जो नारे लगाता हो, साम्राज्यवाद का सदा एक हथियार है। वह तब विशेष रूप से ख़तरनाक हो जाता है, जब कम्युनिस्ट आन्दोलन की क़तारों में वह घुस जाता है, और इससे भी अधिक तब ख़तरनाक हो जाता है जब वह सत्तारूढ़ कम्युनिस्ट पार्टी के सिर पर सवार हो जाता है। इसीलिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद और सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के सुदृढ़ आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की एकता पुनः स्थापित करने के लिए राष्ट्रवाद के विरुद्ध अडिग संघर्ष अपरिहार्य शर्त है।

एशिया, अफ्रिका और लैटिन अमरीका के जनगण के राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन के भविष्य के लिए विश्व की साम्राज्यवाद-विरोधी शक्तियों की एकता का निर्णायक महत्त्व है।

लेनिन ने पूर्व और पश्चिम के श्रमजीवी वर्गों की क्रान्तिकारी एकता—सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के सिद्धान्तों पर आधारित एकता—पर बल दिया। लेनिन ने अन्य देशों के सर्वहारा के सामान्य संघर्षों

में साथ देने के लिए पूर्व की जनता का उत्साह-पूर्वक आह्वान किया।

क्रान्तिकारी एकता के नाम पर लेनिन ने आग्रह किया कि राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्नों पर कम्युनिस्ट इन्टरइनेशनल की पूरी नीति का आधार सब देशों के भूमिपतियों और पूंजीपतियों को उखाड़ फेंकने के लिए संयुक्त क्रान्तिकारी संघर्ष में मुख्य रूप से सब देशों के सर्वहारा और श्रमजीवी जनता की घनिष्ठ एकता होनी चाहिए। यह एकता ही पूंजीवाद पर विजय पक्की कर देगी जिसके बिना राष्ट्रीय उत्पीड़न और असमानता का उन्मूलन असम्भव है।"*

कम्युनिस्टों के पारस्परिक सम्बन्धों और समान क्रान्तिकारी कार्य में सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयता के सिद्धान्तों के कड़ाई से पालन के लिए लेनिन ने दृढ़ता से संघर्ष किये। साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष में उत्पीड़ित जनता की महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए, लेनिन ने ज़ोर दिया कि इस संघर्ष में निर्णायक भूमिका समाजवादी देशों का विजयी श्रमजीवी वर्ग और पश्चिम का सर्वहारा अदा करेगा। जब भारतीय कम्युनिस्ट श्री राय ने इस बात पर ज़ोर देने की कोशिश की कि यूरोप में क्रान्तिकारी आन्दोलन का भाग्य पूर्ण रूप से पूर्व में क्रान्ति के विकास के ऊपर निर्भर है, तब लेनिन ने उनकी स्थिति की तीखी आलोचना की।

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ १४६.

अब जब फूटपरस्त माओत्से-तुंग गुट जो विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलन में नेतृत्व का दावा करता है, और इस बात को सिद्ध करने की कोशिश कर रहा है कि विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन का केन्द्र अब एशिया में आ गया है तथा "पूरब की हवा पश्चिम की हवा से अधिक ताकतवर है" तब राय की अवधारणाओं की लेनिन द्वारा की गयी आलोचनाओं को स्मरण करना शिक्षाप्रद होगा।

माओवाद, जो जनता को उसकी चमड़ी के रंग और वासस्थान के आधार पर विभाजित करता है और जो उसकी जुझारू एकता को नष्ट कर रहा है, लेनिन की शिक्षाओं तथा राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के विपरीत कार्य कर रहा है।

लेनिन ने पूरब के कम्युनिस्टों के लिए एक अमूल्य सैद्धान्तिक विरासत छोड़ी है। पूरब के देशों की ठोस परिस्थिति और खास विशेषताओं के अनुसार मार्क्सवाद-लेनिनवाद के मूल सिद्धान्तों के व्यावहारिक प्रयोग का एक उदाहरण प्रदान किया। लेनिन ने जोर दिया कि "उस **ठोस तरीके से** जिससे हर देश को **एक ही** अन्तर्राष्ट्रीय कार्य : श्रमजीवी वर्ग के आन्दोलन में अवसरवाद और वामपंथी कोई सिद्धान्तवाद का सामना करना चाहिये, राष्ट्रीय विशेषता और राष्ट्रीय विशिष्टता का पता लगाया जाय तथा खोज की जाय। उसके बारे में भविष्य-कथन किया जाय और उसे अच्छी तरह समझा जाय।"*

---

* व्ला० लेनिन, संकलित कृतियां, खण्ड ३१, पृष्ठ ९२।

एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका की संघर्षरत जनता के लिए लेनिनवाद का बहुत महत्व है। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महामन्त्री अजय घोष ने लिखा कि यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि इन देशों में जो कभी "इतिहास की परिधि से बाहर" थे, कभी कोई नाम लेनिन के नाम से अधिक लोकप्रिय नहीं रहा और कोई भी शिक्षा ऐसा मार्गदर्शक ध्रुवतारा न बनी जितना लेनिनवाद।

भूतपूर्व उपनिवेशों और पराधीन देशों की जनता ने सक्रिय राजनीतिक जीवन अपना लिया है। वह साम्राज्यवाद के विरुद्ध, शान्ति, स्वतन्त्रता और समाजवाद के लिए संघर्ष में नई सफलताएं प्राप्त करके लेनिन की जन्म शताब्दी की अगुवानी कर रही है। यह संघर्ष लेनिन के इस क्रान्तिकारी नारे के तहत फैल रहा है: "सब देशों के उत्पीड़ित जनगण और श्रमिक—एक हों।"

एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका की संघर्षरत जनता के लिए लेनिनवाद का बहुत महत्व है। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महामन्त्री अजय घोष ने लिखा कि यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि इन देशों में जो कभी "इतिहास की परिधि से बाहर" थे, कभी कोई नाम लेनिन के नाम से अधिक लोकप्रिय नहीं रहा और कोई भी शिक्षा ऐसा मार्गदर्शक ध्रुवतारा न बनी जितना लेनिनवाद।

भूतपूर्व उपनिवेशों और पराधीन देशों की जनता ने सक्रिय राजनीतिक जीवन अपना लिया है। वह साम्राज्यवाद के विरुद्ध, शान्ति, स्वतन्त्रता और समाजवाद के लिए संघर्ष में नई सफलताएं प्राप्त करके लेनिन की जन्म शताब्दी की अगुवानी कर रही है। यह संघर्ष लेनिन के इस क्रान्तिकारी नारे के तहत फैल रहा है : "सब देशों के उत्पीड़ित जनगण और श्रमिक—एक हों।"

LENIN AND PROBLEMS OF LIBERATION MOVEMENT

Hindi

1969

Price : 50 Paise